सूचीपत्र

कबीर साहिब

[संक्षिप्त जीवन-चरित्र के लिए देखो पृष्ठ १ भाग १ संतबानी संग्रह]

॥ गुरुदेव ॥

(१)

चल सतगुरु की हाट, ज्ञान बुधि लाइये ।
कीजे साहिब से हेत, परम पद पाइये ॥ १ ॥
सतगुरु सब कछु दीन्ह, देत कछु ना रह्यो ।
हमहिँ अभागिनि नारि, सुक्ख तजि दुख लह्यो ॥ २ ॥
गई पिया के महल, पिया सँग ना रची ।
हृदे कपट रह्यो छाय, मान लज्जा भरी ॥ ३ ॥
जहवाँ गैल सिलहली, चढ़ौं गिरि गिरि पड़ौं ।
उठौं सम्हारि सम्हारि, चरन आगे धरौं ॥ ४ ॥
जो पिय मिलन की चाह, कौन तेरे लाज हो ।
अधर मिलो ना जाय, भला दिन आज हो ॥ ५ ॥
भला बना संजोग, प्रेम का चोलना ।
तन मन अरपौ सीस, साहिब हँस बोलना ॥ ६ ॥
जो गुरु रूठे होयँ, तो तुरत मनाइये ।
हुइये दीन अधीन, चूक बकसाइये ॥ ७ ॥
जो गुरु होयँ दयाल, दया दिल हेरिहैं ।
कोटि करम कटि जायँ, पलक छिन फेरिहैं ॥ ८ ॥
कहै कबीर समुझाय, समुझ हिरदे धरो ।
जुगन जुगन करो राज, ऐसी दुर्मति परिहरो ॥ ९ ॥

(२)

तोहिँ मोरी लगन लगाये रे फकिरवा ॥ टेक ॥
सोवत ही मैं अपने मँदिर में, सबदन मारि जगाये रे (फ०)॥१॥
बूड़त ही भव के सागर में, बहियाँ पकरि समुझाये रे (फ०)॥२॥

एकै बचन बचन नहिँ दूजा, तुम मो से बंद छुड़ाये रे (फ०)॥३॥
कहै कबीर सुनो भइ साधो, सत्तनाम गुन गाये रे (फ०)॥४॥

(३)

सतगुरु हैँ रँगरेज, चुनर मेरी रँगि डारी ॥ टेक ॥
स्याही रंग छुड़ाय के रे, दियो मजीठा रंग।
धोये से छूटै नहीँ रे, दिन दिन होत सुरंग ॥ १ ॥
भाव के कुंड नेह के जल मेँ, प्रेम रंग दइ बोर।
चसकी चास लगाइ के रे, खूब रँगी झकझोर ॥ २ ॥
सतगुरु ने चुनरी रँगी रे, सतगुरु चतुर सुजान।
सब कछु उन पर वार दूँ रे, तन मन धन औ प्रान ॥ ३ ॥
कह कबीर रँगरेज गुरु रे, मुझ पर हुए दयाल।
सीतल चुनरी ओढ़ि के रे, भइहौँ मगन निहाल ॥ ४ ॥

॥ नाम ॥

(१)

अजर अमर इक नाम है, सुमिरन जो आवै ॥ टेक ॥
बिनहीँ मुख के जप करो, नहिँ जीभ डुलावो।
उलटि सुरत ऊपर करो, नैनन दरसावो ॥ १ ॥
जाहु हंस पच्छिम दिसा, खिरकी खुलवावो।
तिरबेनी के घाट पर, हंसा नहवावो ॥ २ ॥
पानी पवन की गम नहीँ, वोहि लोक मँझारा।
ताही बिच इक रूप है, वोहि ध्यान लगावो ॥ ३ ॥
जिमीँ असमान उहाँ नहीँ, वो अजर कहावै।
कहै कबीर सोइ साध जन, वा लोक मँझावै ॥ ४ ॥

(२)

हंसा करो नाम नौकरी ॥ टेक ॥
नाम बिदेही निसि दिन सुमिरै, नहिँ भूलै छिन घरी ॥ १ ॥
नाम बिदेही जो जन पावै, कभुँ न सुरति बिसरी ॥ २ ॥

ऐसो सबद सतगुरु से पावै, आवा गवन हरी ॥ ३ ॥
कहै कबीर सुनो भइ साधो, पावै अमर नगरी ॥ ४ ॥

(३)

जो जन लेहिँ खसम का नाउँ, तिन के सद बलिहारी जाउँ ॥१॥
जो गुरु के निर्मल गुन गावै, सो भाई मेरे मन भावै ॥२॥
जेहिँ घट नाम रह्यो भरपूर, तिन की पग पंकज हम धूर ॥३॥
जाति जुलाहा मति का धीर, सहज सहज गुन रमे कबीर ॥४॥

॥ चितावनी ॥

(१)

मन फूला फूला फिरै, जक्त में कैसा नाता रे ॥ टेक ॥
माता कहै यह पुत्र हमारा, बहिन कहै बिर[1] मेरा ।
भाई कहै यह भुजा हमारी, नारि कहै नर मेरा ॥ १ ॥
पेट पकरि के माता रोवै, बाँहि पकरि के भाई ।
लपटि झपटि के तिरिया रोवै, हंस अकेला जाई ॥ २ ॥
जब लग जीवै माता रोवै, बहिन रोवै दस मासा ।
तेरह दिन तक तिरिया रोवै, फेर करै घर बासा ॥ ३ ॥
चार गजी चरगजी मँगाया, चढ़ा काठ की घोड़ी ।
चारो कोने आग लगाया, फूँक दियो जस होरी ॥ ४ ॥
हाड़ जरै जस लाह कड़ी को, केस जरै जस घासा ।
सोना ऐसी काया जरि गइ, कोइ न आयो पासा ॥ ५ ॥
घर की तिरिया ढूँढ़न लागी, ढूँढ़ि फिरी चहुँ देसा ।
कहै कबीर सुनो भइ साधो, छाड़ो जग की आसा ॥ ६ ॥

(२)

सुगवा पिँजरवा छोरि करि भागा ॥ टेक ॥
इस पिँजरे में दस दरवाजा, दसो दरवाजे किवरवा लागा ॥१

---

(१) बीर=भाई ।

अँखियन सेती नीर बहन लग्यो, अब कस नाहिं तू बोलत अभागा ॥२
कहत कबीर सुनो भइ साधो, उड़ि गे हंस टूटि गयो तागा ॥३

(३)

कौनो ठगवा नगरिया लूटल हो ॥ टेक ॥
चंदन काठ के बनल खटोलना, ता पर दुलहिन सूतल हो ॥१॥
उठो री सखी मोरी माँग सँवारो, दुलहा मोसे रूसल हो ॥२॥
आये जमराज पलँग चढ़ि बैठे, नैनन आँसू टूटल हो ॥३॥
चारि जने मिलि खाट उठाइन, चहुँ दिसि धूधू ऊठल हो ॥४॥
कहत कबीर सुनो भइ साधो, जग से नाता छूटल हो ॥५॥

(४)

बीती बहुत रहि थोरी सी ॥ टेक ॥
खाट पड़े नर भौंखन लागे, निकसि प्रान गयो चोरी सी ॥१॥
भाई बंद कुटुँब सब आये, फूँक दियो मानो होरी सी ॥२॥
कहै कबीर सुनो भइ साधो, सिर पर देत हैं भौंरी सी ॥३॥

(५)

तोरी गठरी में लागे चोर, बटोहिया का रे सोवै ॥ टेक ॥
पाँच पचीस तीन हैं चुरवा, यह सब कीन्हा सोर–
बटोहिया का रे सोवै ॥ १ ॥
जागु सबेरा बाट अनेड़ा, फिर नहिं लागै जोर–
बटोहिया का रे सोवै ॥ २ ॥
भवसागर इक नदी बहतु है, बिन उतरे जाव बोर[१] –
बटोहिया का रे सोवै ॥ ३ ॥
कहै कबीर सुनो भइ साधो, जागत कीजे भोर–
बटोहिया का रे सोवै ॥ ४ ॥

---

(१) वह हद।

(६)

करम गति टारे नाहिँ टरी ॥ टेक ॥
मुनि बसिस्ट से पंडित ज्ञानी, सोधि के लगन धरी ।
सीता हरन मरन दसरथ को, बन में बिपति परी[१] ॥ १ ॥
कहँ वह फंद कहाँ वह पारधि[२], कहँ वह मिरग चरी[१] ।
सीता को हरि लेगयो रावन, सोने की लंक जरी[१] ॥ २ ॥
नीच हाथ हरिचन्द[३] बिकाने, बलि[४] पाताल धरी ।
कोटि गाय नित पुन्न करत नृग, गिरगिट जोनि परी[५] ॥ ३ ॥
पाँडव जिन के आपु सारथी, तिन पर बिपति परी ।
दुरजोधन को गर्ब घटायो, जदु कुल नास करी[६] ॥ ४ ॥

---

(१) रामचन्द्र जी का बनबास, उनके पिता दसरथ का उनके बियोग में प्रान तजना, मारीच को मृगा बना कर रावन का सीता जी को चुरा ले जाना, और फिर रामचन्द्र को रावन को मारना और लंका को जलाना यह कथा प्रायः सब लोग जानते हैं। (२) शिकारी।

(३) राजा हरिश्चन्द्र भारी दानी और सत्यबादी थे जिन्हों ने विश्वामित्रजी को अपना सब राज पाट यज्ञ की दच्छिणा में दे दिया इस पर मुनि जी ने तीन भार सोना दान-प्रतिष्ठा का अपना और निकाला। राजा हरिश्चन्द्र ने उसके लिये काशी में जाकर अपने को एक डोमड़े के हाथ और अपनी स्त्री और पुत्र को एक ब्राह्मण के हाथ बेच कर मुनि जी का सन्तुष्ट किया।

(४) राजा बलि बड़े प्रतापी और दानी थे जिनके द्वारे पर आप भगवान बौना का भेष धर कर तीन परग पृथ्वी माँगने गये। जब राजा बलि ने संकल्प कर दिया तब भगवान ने वैराट रूप धारन करके एक परग में स्वर्गादिक और एक में सारी पृथ्वी नाप ली और कहा कि अब तीसरा परग देव। राजा ने अपना शरीर भेंट किया जिसे तीसरे परग से नाप कर भगवान ने उन्हें अमर करके पाताल का राज्य दिया।

(५) राजा नृग रोज एक लाख गऊ दान दिया करते थे। एक बार कोई गऊ जो पहिले दिन दान हो चुकी थी नई गउओं में आ मिली और राजा ने उसे अनजान में दूसरे ब्राह्मण को संकल्प कर दिया। इस पर पहिले और दूसरे दिन के दान पानेवाले ब्राह्मणों में झगड़ा मचा और दोनों राजा के पास न्याव को गये। दोनों वही गऊ लेने पर हठ करते थे इस लिये राजा की बुद्धि चकराई और सोच में पड़ कर दोनों की दलील पर सिर हिला देते। इस पर उन ब्राह्मणों ने सराप दिया कि तुम गिरगिट की तरह सिर हिलाते हो वही बन जावगे। इस लिये राजा नृग मरने पर गिरगिट की जोनी पाकर एक अंधे कुए में पड़े हुए थे जब कृष्णावतार हुआ तब श्रीकृश्न ने उनको तारा।

(६) पांडवों के रथ पर श्रीकृश्न महाभारत की लड़ाई में आप सारथी बने और दुर-जोधन का घमंड तोड़ा और कौरवों के कुल का और (परम धाम सिधारने के पहिले) अपने जदु कुल का नाश किया। पांडवों पर विपति पड़ी थी कि अपना सब राज पाट अपनी स्त्री द्रोपदी सहित कौरवों के हाथ जुए में हार गये और मुद्दत तक बनोवास में कष्ट उठाया।

राहु केतु औ भानु चन्द्रमा, बिधि संजोग परी।
कहत कबीर सुनो भइ साधो, होनी हो के रही ॥ ५ ॥

(७)

और मुए का सोग करीजे, तौ कीजे जो आपन जीजे ॥१॥
मैं नहिं मरौं मरै संसारा, अब मोहिं मिला जियावनहारा ॥२॥
या देही परिमल महकंदा, ता सुख बिसरे परमानन्दा ॥३॥
कुअटा[1] एक पंच पनिहारी, टूटी लेजुरि[2] भरैं मतिहारी[3] ॥४॥
कह कबीर इक बुद्धि बिचारी, ना वह कुअटा ना पनिहारी ॥५॥

(८)

टुक जिंदगी बँदगी कर लेना, क्या माया मद मस्ताना ॥टेक॥
रथ घोड़े सुखपाल पालकी, हाथी औ बाहन नाना।
तेरा ठाठ काठ की टाटी, यह चढ़ चलना समसाना[4] ॥१॥
रूम पाट[5] पाटम्बर अम्बर, जरी बफ्त का बाना।
तेरे काज गजी गज चारिक[6], भरा रहै तोसाखाना ॥२॥
खर्चे की तदबीर करो तुम, मंजिल लंबी जाना।
पहिचन्ते का गाँव न मग में, चौकी न हाट दुकाना ॥३॥
जीते जी ले जीति जनम को, यही गोय यहि मैदाना।
कहै कबीर सुनो भइ साधो, नहिं कलि तरन जतन आना॥४॥

(९)

काया बौरी चलत प्रान काहे रोई ॥ टेक ॥
काया पाय बहुत सुख कीन्हो, नित उठि मलि मलि धोई।
सो तन छिया छार ह्वै जैहै, नाम न लैहै कोई ॥१॥
कहत प्रान सुनु काया बौरी, मोर तोर संग न होई।
तोहि अस मित्र बहुत हम त्यागा, संग न लीन्हा कोई ॥२॥

(१) छोटा कुआँ। (२) रस्सी। (३) मतिहीन, अज्ञान। (४) श्मसान = मुरदा जलाने का घाट। (५) ऊनी कपड़ा। (६) चार एक।

ऊसर खेत के कुसा मँगाये, चाँचर चवर[1] के पानी।
जीवत ब्रह्म को कोई न पूजै, मुरदा के मिहमानी ॥३॥
सिव सनकादि आदि ब्रह्मादिक, सेस सहस मुख होई।
जो जो जन्म लियो बसुधा[2] में, थिर न रह्यो है कोई ॥४॥
पाप पुन्य हैं जन्म सँघाती, समुझि देख नर लोई।
कहत कबीर अभि अंतर की गति, जानत बिरला कोई ॥५॥

(१०)

उपजै निपजै निपजि समाई, नैनन देखि चल्यो जग जाई ॥१॥
लाज न मरो कहो घर मेरा, अंत की बार नहीं कछु तेरा ॥२॥
अनेक जतन करि काया पाली, मरती बेर अगिन सँग जाली ॥३॥
चोवा चंदन मरदन अंगा, सो तन जरै काठ के सँगा ॥४॥
कहत कबीर सुनो रे गुनिया, बिनसै रूप देखैगी दुनियाँ ॥५॥

(११)

यही घड़ी यह बेला साधो ॥ टेक ॥
लाख खरच फिर हाथ न आवै, मानुष जनम सुहेला ॥ १ ॥
ना कोइ संगी ना कोइ साथी, जाता हंस अकेला ॥ २ ॥
क्यों सोया उठि जागु सवेरे, काल मरेंदा सेला[3] ॥ ३ ॥
कहत कबीर गुरू गुन गावो, झूठा है सब मेला ॥ ४ ॥

(१२)

हटरी छोड़ि चला बनिजारा ॥ टेक ॥
इस हटरी बिच मानिक मोती, कोइ बिरला परखनहारा ॥१॥
इस हटरी के नौ दरवाजे, दसवाँ ठाकुरद्वारा ॥२॥
निकसि गइ थंभी ढहि परा मन्दिर, रलि गया चिकड़ गारा ॥३॥
कहत कबीर सुनो भइ साधो, झूठा जगत पसारा ॥४॥

---

(१) परती जमीन की छिछली तलैया। (२) पृथ्वी। (३) तलवार।

(१३)

॥ होली ॥

आई गवनवाँ की सारी, उमिरि अबहीँ मोरी बारी ॥ टेक ॥
साज समाज पिया लै आये, और कहरिया चारी।
बम्हना बेदरदी अचरा पकरि कै, जोरत गँठिया हमारी।
सखी सब पारत गारी ॥ १ ॥

बिधि[1] गति बाम कछु समझ परत ना, बैरी भई महतारी।
रोय रोय अँखियाँ मोर पोँछत, घरवाँ से देत निकारी।
भई सब को हम भारी ॥ २ ॥

गवन कराय पिया लै चाले, इत उत बाट निहारी।
छूटत गाँव नगर से नाता, छूटै महल अटारी।
करम गति टरै न टारी ॥ ३ ॥

नदिया किनारे बलम मोर रसिया, दीन्ह घुँघट पट टारी।
थरथराय तन काँपन लागे, काहू न देख हमारी।
पिया लै आये गोहारी ॥ ४ ॥

कहै कबीर सुनो भाई साधो, यह पद लेहु बिचारी।
अब के गौना बहुरि नहिँ औना, करिले भेंट अँकवारी।
एक बेर मिलि ले प्यारी ॥ ५ ॥

॥ लव ॥

जो कोइ या बिधि मन को लगावै, मन के लगाये प्रभु पावै ॥१॥
जैसे नटवा चढ़त बाँस पर, ढोलिया ढोल बजावै।
अपना बोझ धरै सिर ऊपर, सुरति बरत[2] पर लावै ॥२॥
जैसे भुवंगम[3] चरत बनहिँ मेँ, ओस चाटने आवै।
कभी चाटै कभी मनि तन चितवै, मनि तजि प्रान गँवावै ॥३॥

(१) ब्रह्मा। (२) डोरी। (३) साँप।

जैसे कामिनि भरे कूप जल, कर छोड़े बतरावै[1]।
अपना रँग सखियन सँग राचै, सुरति गगर पर लावै ॥४॥
जैसे सती चढ़ी सर[2] ऊपर, अपनी काया जरावै।
मातु पिता सब कुटुँब तियागै, सुरति पिया पर लावै ॥५॥
धूप दीप नैवेद अरगजा, ज्ञान की आरत लावै।
कहै कबीर सुनो भाई साधो, फेर जनम नहिँ पावै ॥६॥

॥ बिरह ॥

(१)

बालम आओ हमारे गेह रे, तुम बिन दुखिया देह रे ॥टेक॥
सब कोइ कहै तुम्हारी नारी, मो को यह संदेह रे।
एकमेक ह्वै सेज न सोवै, तब लगि कैसो सनेह रे ॥१॥
अन्न न भावै नीँद न आवै, गृह बन धरै न धीर रे।
ज्योँ कामी को कामिनि प्यारी, ज्योँ प्यासे को नीर रे ॥२॥
है कोइ ऐसा परउपकारी, पिय से कहै सुनाय रे।
अब तो बेहाल कबीर भयो है, बिन देखे जिव जाय रे ॥३॥

(२)

प्रीति लगी तुम नाम की, पल बिसरै नाहीँ।
नजर करो अब मिहर की, मोहिँ मिलौ गुसाईँ ॥१॥
बिरह सतावै मोहिँ को, जिव तड़पै मेरा।
तुम देखन की चाव है, प्रभु मिलौ सवेरा ॥२॥
नैना तरसै दरस को, पल पलक न लागै।
दर्दवंद दीदार का, निसि बासर जागै ॥३॥
जो अब के प्रीतम मिलैँ, करूँ निमिख[3] न न्यारा।
अब कबीर गुरु पाइया, मिला प्रान पियारा ॥४॥

---

(१) बात करती है। (२) आग, चिता। (३) छिन भर।

(३)

मिलना कठिन है, कैसे मिलौंगी पिय जाय ॥टेक॥
समझि सोचि पग धरौं जतन से, बार बार डिग जाय।
ऊँची गैल राह रपटीली, पाँव नहीं ठहराय ॥१॥
लोक लाज कुल की मरजादा, देखत मन सकुचाय।
नैहर बास बसौं पीहर में, लाज तजी नहिं जाय ॥२॥
अधर भूमि जहँ महल पिया का, हम पै चढ़ो न जाय।
धन भइ बारी पुरुष भये भोला, सुरत झकोला खाय ॥३॥
दूती सतगुरु मिले बीच में, दीन्हो भेद बताय।
दास कबीर पिया से भेंटे, सीतल कंठ लगाय ॥४॥

(४)

कौन मिलावै मोहिं जोगिया हो, जोगिया बिन रह्यो न जाय ॥टेक
हौं[1] हिरनी पिय पारधी[2] हो, मारे सबद के बान।
जाहि लगी सो जानही हो, और दरद नहिं जान ॥१॥
मैं प्यासी हौं पीव की हो, रटत सदा पिव पीव।
पिया मिलै तो जीव है, ना तो सहजै त्यागौं जीव ॥२॥
पिय कारन पियरी भई हो, लोग कहैं तन रोग।
छः छः लंघन मैं करौं रे, पिया मिलन के जोग ॥३॥
कह कबीर सुन जोगिनी हो, तन में मनहिं मिलाय।
तुम्हरी प्रीति के कारने हो, बहुरि मिलैंगे आय ॥४॥

(५)

॥ होली ॥

ये अँखियाँ अलसानी हो, पिय सेज चलो ॥ टेक ॥
खंभ पकरि पतंग अस डोलै, बोलै मधुरी बानी ॥१॥
फूलन सेज बिछाय जो राख्यो, पिया बिना कुम्हिलानी ॥२॥

---

(१) मैं। (२) शिकारी।

धीरे पाँव धरो पलँगा पर, जागत ननद जिठानी ॥३॥
कहै कबीर सुनो भाई साधो, लोक लाज बिलछानो[१] ॥४॥

(६)
॥ होली ॥

नैहरवा हम काँ नहिँ भावै ॥ टेक ॥
साईँ की नगरी परम अति सुन्दर, जहँ कोइ जाय न आवै।
चाँद सुरज जहँ पवन न पानी, को सँदेस पहुँचावै,
दरद यह साईँ को सुनावै ॥ १ ॥
आगे चलौँ पंथ नहिँ सूझै, पीछे दोष लगावै।
केहि बिधि ससुरे जावँ मोरी सजनी, बिरहा जोर जनावै,
बिषै रस नाच नचावै ॥ २ ॥
बिन सतगुरु अपनो नहिँ कोई, जो यह राह बतावै।
कहत कबीर सुनो भाई साधो, सुपने न प्रीतम पावै,
तपन यह जिय की बुझावै ॥ ३ ॥

॥ प्रेम ॥
(१)

बहुत दिनन में प्रीतम आये, भाग भले घर बैठे पाये ॥१॥
मंगलचार महा मन राखो, नाम रसायन रसना[२] चाखो ॥२॥
मंदिर महा भयो उँजियारा, लै सूती अपनो पिय प्यारा ॥३॥
मैँ निरास जो नौनिधि पाई, कहा करौं पिय तुम्हरी बड़ाई ॥४॥
कहत कबीर मैं कछु नहिं कीन्हा, सहज सुहाग पिया मोहिँ दीन्हा॥५

(२)

घूँघट का पट खोल रे, तो को पीव मिलैंगे ॥ टेक ॥
घट घट में वोहि साईँ रमता, कटुक बचन मत बोल रे (तो को०)
धन जोबन का गर्ब न कीजे, झूठा पचरँग चोल रे (तो को०)॥२॥

(१) छोड़ी। (२) जीभ।

सुन्न महल में दियना बारिले, आसा से मत डोल रे (तो को०)॥३॥
जोग जुगत से रंग महल में, पिय पाये अनमोल रे (तो को०)॥४॥
कह कबीर आनंद भयो है, बाजत अनहद ढोल रे (तो को०)॥५॥

(३)

मैं तो वा दिन फाग मचैहौं, जा दिन पिया मोरे द्वारे ऐहैं ॥टेक॥
रंग वही रँगरेजवा वाही, सुरँग चुनरिया रँगैहौं ॥ १ ॥
जोगिन होइ के बन बन ढूँढ़ौं, वाही नगर में रहिहौं ॥ २ ॥
बालपना गल सेल्हि बनैहौं, अंग भभूत लगैहौं ॥ ३ ॥
कह कबीर पिय द्वारे ऐहैं, केसर माथ रँगैहौं ॥ ४ ॥

(४)

पिया मेरा जागै मैं कैसे सोई री ॥ टेक ॥
पाँच सखी मेरे सँग की सहेली,
उन रँग रँगी पिया रँग न मिली री ॥ १ ॥
सास सयानी ननद द्योरानी,
उन डर डरी पिय सार न जानी री ॥ २ ॥
द्वादस ऊपर सेज बिछानी,
चढ़ न सकौं मारी लाज लजानी री ॥ ३ ॥
रात दिवस मोहिं कूका मारै,
मैं न सुना रचि रहि सँग जार री ॥ ४ ॥
कह कबीर सुनु सखी सयानी,
बिन सतगुरु पिय मिले न मिलानी री ॥ ५ ॥

(५)

मोरे लगि गये बान सुरंगी हो ॥ टेक ॥
धन सतगुरु उपदेस दियो है, होइ गयो चित्त भिरंगी हो ॥१॥
ध्यान पुरुष की बनी है तिरिया, घायल पाँचो संगी हो ॥२॥
घायल की गति घायल जानै, क्या जानै जाति पतंगी हो ॥३॥
कहै कबीर सुनो भाई साधो, निसि दिन प्रेम उमंगी हो ॥४॥

(६)

हमन हैं इस्क मस्ताना, हमन को होसियारी क्या ।
रहैं आजाद या जग से, हमन दुनिया से यारी क्या ॥ १ ॥
जो बिछुड़े हैं पियारे से, भटकते दर बदर फिरते ।
हमारा यार है हम में, हमन को इन्तिजारी क्या ॥ २ ॥
खलक सब नाम अपने को, बहुत कर सिर पटकता है ।
हमन गुरु नाम साचा है, हमन दुनिया से यारी क्या ॥ ३ ॥
न पल बिछुड़ैं पिया हम से, न हम बिछुड़ैं पियारे से ।
उन्हीं से नेह लागी है, हमन को बेकरारी क्या ॥ ४ ॥
कबीरा इस्क का माता, दुई को दूर कर दिल से ।
जो चलना राह नाजुक है, हमन सिर बोझ भारी क्या ॥ ५ ॥

(७)

मन लागो मेरो यार फकीरी में ॥ टेक ॥
जो सुख पावो नाम भजन में, सो सुख नाहिं अमीरी में ॥१॥
भला बुरा सब को सुनि लीजै, कर गुजरान गरीबी में ॥२॥
प्रेम नगर में रहनि हमारी, भलि बनि आई सबूरी में ॥३॥
हाथ में कूँड़ी बगल में सोंटा, चारो दिसि जागीरी में ॥४॥
आखिर यह तन खाक मिलैगा, कहा फिरत मगरूरी में ॥५॥
कहै कबीर सुनो भाई साधो, साहिब मिलै सबूरी में ॥६॥

(८)

साधो सहज समाधि भली ।
गुरु प्रताप जा दिन से जागी, दिन दिन अधिक चली ॥ १ ॥
जहँ जहँ डोलौं सो परिकरमा, जो कछु करौं सो सेवा ।
जब सोवौं तब करौं दंडवत, पूजौं और न देवा ॥ २ ॥
कहौं सो नाम सुनौं सो सुमिरन, खावँ पियौं सो पूजा ।
गिरह उजाड़ एक सम लेखौं, भाव मिटावौं दूजा ॥ ३ ॥

आँख न मूँदौं कान न रूँधौं, तनिक कष्ट नहिँ धारौं।
खुले नैन पहिचानौं हँसि हँसि, सुंदर रूप निहारौं॥ ४॥
सबद निरन्तर से मन लागा, मलिन बासना त्यागी।
ऊठत बैठत कबहुँ न छूटै, ऐसी तारी लागी॥ ५॥
कह कबीर यह उनमुनि रहनी, सो परगट करि गाई।
दुख सुख से कोइ परे परम पद, तेहि पद रहा समाई॥ ६॥

(९)

गुरू ने मोहिँ दीन्ही अजब जड़ी॥ टेक॥
सोई जड़ी मोहिँ प्यारी लगतु है, अमृत रसन भरी॥ १॥
काया नगर अजब इक बँगला, ता में गुप्त धरी॥ २॥
पाँचो नाग पचीसो नागिन, सूँघत तुरत मरी॥ ३॥
या कारे ने सब जग खायो, सतगुरु देख डरी॥ ४॥
कहत कबीर सुनो भाई साधो, लै परिवार तरी॥ ५॥

(१०)

॥ होली॥

ऋतु फागुन नियरानी, कोइ पिया से मिलावै॥ टेक॥
सोइ तो सुन्दर जा को पिय को ध्यान है, सोइ पिय के मन मानी।
खेलत फाग अंग नहिँ मोड़ै, सतगुरु से लिपटानी॥१॥
इक इक सखियाँ खेल घर पहुँचीँ, इक इक कुल अरुझानी।
इक इक नाम बिना बहकानी, हो रहि ऐँचा तानी॥२॥
पिय को रूप कहाँ लग बरनौं, रूपहि माहिं समानी।
जो रँग रँगे सकल छबि छाके, तन मन सभी भुलानी॥३॥
यों मत जाने यहि रे फाग है, यह कछु अकथ कहानी।
कहत कबीर सुनो भाई साधो, यह गति बिरले जानी॥४॥

(१)

॥ विनय॥

(चौपाई)

दरसन दीजे नाम सनेही। तुम बिन दुख पावै मेरी देही॥

(छंद)

दुखित तुम बिन रटत निसि दिन, प्रगट दरसन दीजिये।
बिनती सुन प्रिय स्वामियाँ, बलि जाउँ बिलँब न कीजिये ॥१॥

(चौपाई)

अन्न न भावै नींद न आवै। बार बार मोहिँ बिरह सतावै ॥

(छंद)

बिबिध बिधि हम भईं ब्याकुल, बिन देखे जिव ना रहै।
तपत तन जिव उठत झाला, कठिन दुख अब को सहै ॥२॥

(चौपाई)

नैनन चलत सजल जल धारा। निसि दिन पंथ निहारौं तुम्हारा ॥

(छंद)

गुन औगुन अपराध छिमा करि, औगुन कछु न बिचारिये।
पतित-पावन राखु परमति[1], अपना पन न बिसारिये ॥३॥

(चौपाई)

गृह आँगन मोहिँ कछु न सुहाई, बन्न भई और फिर्यो न जाई ॥

(छंद)

नैन भरि भरि रहे निरखत, निमिख नेह न तुड़ाइये।
बाँह दीजे बंदी-छोड़ा, अब के बंद छुड़ाइये ॥४॥

(चौपाई)

मीन मरै जैसे बिन नीरा। ऐसे तुम बिन दुखित सरीरा ॥

(छंद)

दास कबीर यह करत बिनती, महा पुरुष अब मानिये।
दया कीजे दरस दीजे, अपना करि मोहिँ जानिये ॥५॥

(२)

दरमाँदे ठाढ़े दरबार ॥ टेक ॥
तुम बिन सुरत करै को मेरी, दरसन दीजै खोलि किवार ॥१॥
तुम हौ धनी उदार दयालू, स्रवनन सुनियत सुजस तुम्हार ॥२॥

---

(१) उच्च मत या भाव।

माँगौं कौन रंक सब देखौं, तुमहों तें मेरो निस्तार ॥३॥
जैदेव नामाँ बिप्र सुदामा[1], तिन पर किरपा भई अपार ॥४॥
कह कबीर तुम समरथ दाता, चार पदारथ देत न बार ॥५॥

॥ साधु ॥

नारद साध से अंतर नाहीं ।
जो कोइ साध से अंतर राखै, सो नर नरकै जाहीं ॥ १ ॥
जागे साध तो मैं हूँ जागूँ, सोवै साध तो सोऊँ ।
जो कोइ मेरे साध दुखावै, जरा मूल से खोऊँ ॥ २ ॥
जहाँ साध मेरो जस गावै, तहाँ करूँ मैं बासा ।
साध चलै आगे उठ धाऊँ, मोहिं साध की आसा ॥ ३ ॥
माया मेरी अर्ध-सरीरी, औ भक्तन की दासी ।
अठसठ तीरथ साध के चरनन, कोटि गया औ कासी ॥ ४ ॥
अंतर ध्यान नाम निज केरा, जिन भजिया तिन पाई ।
कहत कबीर साध की महिमा, हरि अपने मुख गाई ॥ ५ ॥

॥ सार गहनी ॥

मन मस्त हुआ तब क्यों बोलै ॥ टेक ॥
हीरा पायो गाँठ गठियायो, बार बार वा को क्यों खोलै ॥१॥
हलकी थी जब चढ़ी तराजू, पूरी भई तब क्यों तोलै ॥२॥
सुरत कलारी भइ मतवारी, मदवा पी गइ बिन तोले ॥३॥
हंसा पाये मानसरोवर, ताल तलैया क्यों डोलै ॥४॥
तेरा साहिब है घट माहीं, बाहर नैना क्यों खोलै ॥५॥
कहै कबीर सुनो भाई साधो, साहिब मिल गये तिल ओले[2] ॥६॥

॥ सतसंग ॥

मैं तो आन पड़ी चोरन के नगर, सतसंग बिना जिय तरसे ॥१॥
इस सतसँग में लाभ बहुत है, तुरत मिलावै गुरु से ॥२॥

(१) जैदेव और नामदेव परम भक्त और सुदामा श्रीकृष्ण के सहपाठी महा दरिद्र थे जिन की गाढ़ मे भारी सहायता हुई । (२) ओट ।

मूरख जन कोइ सार न जानै, सतसँग में अमृत बरसे ॥३॥
सबद सा हीरा पटकि हाथ से, मुट्ठी भरी कंकर से ॥४॥
कहै कबीर सुनो भाई साधो, सुरत करो वहि घर से ॥५॥

॥ भेद बानी ॥

(१)

सार सबद गहि बाचिहौ[1], मानौ इतबारा ॥ १ ॥
सत्त पुरुष अच्छै बिरिछ, निरंजन डारा ॥ २ ॥
तीन देव साखा भये, पाती संसारा ॥ ३ ॥
ब्रह्मा बेद सही किया, सिव जोग पसारा ॥ ४ ॥
बिस्नु माया परगट किया, उरले[2] ब्योहारा ॥ ५ ॥
तिरदेवा ब्याधा[3] भये, लिये बिष का चारा ॥ ६ ॥
कर्म की बंसी डारि के, फाँसा संसारा ॥ ७ ॥
जोति सरूपी हाकिमा, जिन अमल पसारा ॥ ८ ॥
तीन लोक दसहूँ दिसा, जम रोके द्वारा ॥ ९ ॥
अमल मिटावौं ताहि का, पठवौं भव पारा ॥१०॥
कह कबीर अम्मर करौं, जो होय हमारा ॥११॥

(२)

महरम होय सो जानै साधो, ऐसा देस हमारा ॥ टेक ॥
बेद कतेब पार नहिँ पावत, कहन सुनन से न्यारा ।
जाति बरन कुल किरिया नाहीं, संध्या नेम अचारा ॥१॥
बिन जल बूँद परत जहँ भारी, नहिँ मीठा नहिँ खारा ।
सुन्न महल में नौबत बाजै, किँगरी बीन सितारा ॥२॥
बिन बादर जहँ बिजुरी चमकै, बिन सूरज उँजियारा ।
बिना सीप जहँ मोती उपजै, बिन सुर सबद उचारा ॥३॥
जोति लजाय ब्रह्म जहँ दरसै, आगे अगम अपारा ।
कह कबीर वहँ रहनि हमारी, बूझै गुरुमुख प्यारा ॥४॥

(१) बचोगे। (२) इधर का [illegible]

(३)

रेख़ता

गंग औ जमुन के घाट को खोजि ले,
भँवर गुंजार तहँ करत भाई।
सरसुती नीर तहँ देखु निर्मल बहै,
तासु के नीर पिये प्यास जाई ॥ १ ॥
पाँच की प्यास तहँ देखि पूरी भई,
तीन की ताप तहँ लगै नाहीं।
कहै कब्बीर यह अगम का खेल है,
गैब का चाँदना देख माहीं ॥ २ ॥

(४)

रेख़ता

करत कलोल दरियाव के बीच में,
ब्रह्म की छौल में हंस झूलै।
अर्ध औ उर्ध की पेंग बाढ़ी तहाँ,
पलटि मन पवन को कँवल फूलै ॥ १ ॥
गगन गरजै तहाँ सदा पावस झरै,
होत झनकार नित बजत तूरा।
बेद कत्तेब की गम्म नाहीं तहाँ,
कहै कब्बीर कोइ रमै सूरा ॥ २ ॥

॥ उपदेश ॥

(१)

छाड़ि दे मन बौरा डगमग ॥ टेक ॥
अब तो जरे मरे बनि आवै, लीन्हो हाथ सिँधोरा।
प्रीत प्रतीत करो दृढ़ गुरु की, सुनो सबद घनघोरा ॥ १ ॥
होइ निसंक मगन ह्वै नाचै, लोभ मोह भ्रम छाड़ै।
सूरा कहा मरन से डरपै, सती न संचय भाँड़े[1] ॥ २ ॥

(१) बरतन।

लोक लाज कुल की मरजादा, यही गले में फाँसी ।
आगे ह्वै पग पाछे धरिहो, होय जक्त में हाँसी ॥ ३ ॥
अगिन जरे ना सती कहावै, रन जूझै नहिं सूरा ।
बिरह अगिन अंतर में जारै, तब पावै पद पूरा ॥ ४ ॥
यह संसार सकल जग मैला, नाम गहे तेहि सूँचा ।
कहै कबीर भक्ति मत छाड़ो, गिरत परत चढ़ु ऊँचा ॥ ५ ॥

(२)

अवधू भूले को घर लावै, सो जन हम को भावै ॥ टेक ॥
घर में जोग भोग घर ही में, घर तजि बन नहिं जावै ।
बन के गये कलपना उपजै, तब धौं कहाँ समावै ॥ १ ॥
घर में जुक्ति मुक्ति घर ही में, जो गुरु अलख लखावै ।
सहज सुन्न में रहै समाना, सहज समाधि लगावै ॥ २ ॥
उनमुनि रहै ब्रह्म को चीन्है, परम तत्त को ध्यावै ।
सुरत निरत से मेला करिकै, अनहद नाद बजावै ॥ ३ ॥
घर में बसत बस्तु भी घर है, घर ही बस्तु मिलावै ।
कहै कबीर सुनो हो अवधू, ज्यों का त्यों ठहरावै ॥ ४ ॥

(३)

भजि ले सिरजनहार, सुघर तन पाय के ॥ टेक ॥
काहे रहौ अचेत, कहाँ यह औसर पैहो ।
फिर नहिं ऐसी देँह, बहुरि पाछे पछितैहो ॥
लख चौरासी जोनि में, मानुष जन्म अनूप ।
ताहि पाय नर चेतत नाहीं, कहा रंक कहा भूप ॥१॥
गर्भ वास में रह्यो, कह्यो मैं भजिहौं तोहीं ।
निस दिन सुमिरौं नाम, कष्ट से काढ़ौ मोहीं ॥
चरनन ध्यान लगाइ के, रहौं नाम लौ लाय ।
तनिक न तोहि बिसारिहौं, यह तन रहै कि जाय ॥२

इतना कियो करार, काढ़ि गुरु बाहर कीन्हा ।
भूलि गयौ वह बात, भयौ माया आधीना ॥
भूली बातैं उद्र की, आन पड़ी सुधि एत ।
बारह बरस बीति गे या बिधि, खेलत फिरत अचेत ॥३॥
बिषया बान समान, देँह जोबन मद माती ।
चलत निहारत छाँह, तमक के बोलत बाती ॥
चोवा चंदन लाइ के, पहिरे बसन रँगाय ।
गलियाँ गलियाँ झाँकी मारै, पर तिरिया लख मुसकाय ॥४॥
तरुनापन गइ बीत, बुढ़ापा आनि तुलाने ।
काँपन लागे सीस, चलत दोउ चरन पिराने ॥
नैन नासिका चूवन लागे, मुख तेँ आवत बास ।
कफ पित कंठै घेर लियो है, छुटि गइ घर की आस ॥५॥
मातु पिता सुत नारि, कहौ का के सँग जाई ।
तन धन घर औ काम धाम, सबही छुटि जाई ॥
आखिर काल घसीटिहै, पड़िहौ जम के फन्द ।
बिन सतगुरु नहिँ बाचिहौ, समुझ देख मति मन्द ॥६॥
सुफल होत यह देँह, नेह सतगुरु से कीजै ।
मुक्ती मारग जानि, चरन सतगुरु चित दीजै ॥
नाम गहौ निरभय रहौ, तनिक न ब्यापै पीर ।
यह लीला है मुक्ति की, गावत दास कबीर ॥७॥

(४)

करो जतन सखि साईं मिलन की ॥ टेक ॥
गुड़िया गुड़वा सूप सुपलिया,
तजि दे बुधि लरिकैयाँ खेलन की ॥ १ ॥
देवता पित्तर भुइयाँ भवानी,
यह मारग चौरासी चलन की ॥ २ ॥

ऊँचा महल अजब रँग बँगला,
साईं की सेज जहाँ लगी फूलन की ॥३॥
तन मन धन सब अर्पन करि वहाँ,
सुरत सम्हार परु पइयाँ सजन की ॥४॥
कहै कबीर निर्भय होय हंसा,
कुंजी बता द्यों ताला खुलन की ॥ ५ ॥

(५)

जाग पियारी अब का सोवै,
रैन गई दिन काहे को खोवै ॥ १ ॥
जिन जागा तिन मानिक पाया,
तैं बौरी सब सोय गँवाया ॥ २ ॥
पिय तेरे चतुर तू मूरख नारी,
कबहुँ न पिय की सेज सँवारी ॥ ३ ॥
तैं बौरी बौरापन कीन्हो,
भर जोबन पिय अपन न चीन्हो ॥ ४ ॥
जाग देख पिय सेज न तेरे,
तोहि छाड़ि उठि गये सबेरे ॥ ५ ॥
कहै कबीर सोई धन जागै,
सबद बान उर अन्तर लागै ॥ ६ ॥

(६)

अँधियरवा में ठाढ़ि गोरी का करलू ॥ टेक ॥
जब लगि तेल दिया में बाती, येहि अँजोरवा बिछाय घलतू ।
मन का पलँग सँतोष बिछौना, ज्ञान कै तकिया लगाय रखतू ॥
जरि गया तेल बुझाय गइ बाती, सुरत में मुरत समाय रखतू ।
कहै कबीर सुनो भाई साधो, जोतिया में जोतिया मिलाय रखतू ॥

(७)

उठो सोहंगम नारि, प्रीति पिय से करो।
यह उरले ब्योहार, दूर दुरमति धरो ॥ १ ॥
पाँच चोर बड़ जोर, संगि एते घने।
इन ठगियन के साथ, मुसै घर निसु दिने ॥ २ ॥
सोवत जागत चोर, करै चोरी घनी।
आपु भये कुतवाल, भली बिधि लूटहीं ॥ ३ ॥
द्वादस नगर मँझार, पुरुष इक देखिये।
सोभा अगम अपार, सुरति छबि पेखिये ॥ ४ ॥
होत सबद घनघोर, संख धुनि अति घनी।
तंतन की झनकार, बजत झीनी झिनी ॥ ५ ॥
है कोइ महरम साध, भले पहिचानिये।
सतगुरु कहै कबीर, संत की बानि ये ॥ ६ ॥

(८)

राग जँतसार

सुरति मकरिया गाड़हु हे सजनी—अहे सजनी।
दूनों रे नयनवाँ जोतिया लावहु रे की ॥ १ ॥
मन धरु मन धरु मन धरु हे सजनी—अहे सजनी।
अइसन समइया फिरि नहिँ पावहु रे की ॥ २ ॥
दिन दस रजनी सुख करु हे सजनी—अहे सजनी।
इक दिन चाँद छपाइल रे की ॥ ३ ॥
सँगहिँ अछत पिया भरम भुलइली हे सजनी—अहे सजनी।
मोरे लेखे पिया परदेसहिँ रे की ॥ ४ ॥
नव दस नदिया अगम बहे सोतिया हे सजनी—अहे सजनी।
बिचहिँ पुरइनि दह[1] लागल रे की ॥ ५ ॥

---

(१) कोईं का तलाव।

फुल इक फुलले अनुप फुल सजनी—अहे सजनी।
तेहि फुल भँवरा लुभाइल रे की ॥ ६ ॥
सब सखि हिलिमिलि निज घर जाइब हे सजनी—अहे सजनी।
समुँद लहरिया समाइब रे की ॥ ७ ॥
दास कबीर यह गवलैं लगनियाँ हे सजनी—अहे सजनी।
अब तो पिया घर जाइब रे की ॥ ८ ॥

(९)

रेखता

सुख सिंध की सैर का स्वाद तब पाइहै,
चाह का चौतरा भूलि जावै।
बीज के माहिँ ज्यों वृच्छ बिस्तार,
यों चाह के माहिँ सब रोग आवै ॥ १ ॥
दृढ़ बैराग में होय आरूढ़ मन,
चाह के चौतरे आग दीजै।
कहै कब्बीर यों होय निरबासना,
तत्त से रत्त ह्वै काज कीजै ॥ २ ॥

॥ मिश्रित ॥

तन मन धन बाजी लागी हो ॥ टेक ॥
चौपड़ खेलूँ पीव से रे, तन मन बाजी लगाय।
हारी तो पिय की भई रे, जीती तो पिय मोर हो ॥ १ ॥
चौसरिया के खेल में रे, जुग्ग मिलन की आस।
नर्द अकेली रहि गई रे, नहिँ जीवन की आस हो ॥ २ ॥
चार बरन घर एक है रे, भाँति भाँति के लोग।
मनसा बाचा कर्मना, कोइ प्रीति निबाहै ओर हो ॥ ३ ॥
लख चौरासी भरमत भरमत, पौ पै अटकी आय।
जो अब के पौ ना पड़ी रे, फिर चौरासी जाय हो ॥ ४ ॥

कह कबीर धर्मदास से रे, जीती बाजी मत हार।
अब के सुरत चढ़ाइ दे रे, सोई सुहागिन नारि हो ॥ ५ ॥

(२)

या जग अंधा मैं केहि समुझावों ॥ टेक ॥
इक दुइ होयँ उन्हैं समझावों,
सबहि भुलाना पेट के धन्धा, मैं केहि० ॥ १ ॥
पानी कै घोड़ा पवन असवरवा,
ढरकि परै जस ओस कै बुन्दा, मैं केहि० ॥ २ ॥
गहिरी नदिया अगम बहै धरवा,
खेवनहारा पड़िगा फन्दा, मैं केहि० ॥ ३ ॥
घर की बस्तु निकट नहिं आवत,
दियना बारि के ढूँढ़त अंधा, मैं केहि० ॥ ४ ॥
लागी आग सकल बन जरिगा,
बिन गुरज्ञान भटकिगा बन्दा, मैं केहि० ॥ ५ ॥
कहै कबीर सुनो भाई साधो,
इक दिन जाय लँगोटी झार बन्दा, मैं केहि० ॥ ६ ॥

(३)

पिया मिलन की आस, रहौं कब लौं खड़ी।
ऊँचे चढ़ि नहिँ जाय, मनैं लज्जा भरी ॥ १ ॥
पाँव नहीं ठहराय, चढ़ूँ गिरि गिरि पड़ूँ।
फिरि फिरि चढ़हुँ सम्हारि, तो पग आगे धरूँ ॥ २ ॥
अंग अंग थहराय, तो बहु बिधि डरि रहूँ।
कर्म कपट मग घेरि, तो भ्रम मैं भुलि रहूँ ॥ ३ ॥
निपट अनारी बारि, तो झीनी गैल है।
अटपट चाल तुम्हारि, मिलन कस होइ है ॥ ४ ॥

तेजो[1] कुमति बिकार, सुमति गहि लीजिये ।
सतगुरु सबद सम्हारि, चरन चित दीजिये ॥ ५ ॥
अंतर पट दे खोलि, सबद उर लाव री ।
दिल बिच दास कबीर, मिलैं तोहि बावरी ॥ ६ ॥

(४)

ऐसो है रे भाई हरि रस ऐसो है रे भाई, जाके पिये अमर है जाई ॥१॥
ध्रुव पीया प्रहलादहु पीया, पीया मीराबाई ।
बलख बुखारे के मीयाँ पीया, छोड़ी है बादसाही ॥२॥
हरि रस महँगा मोल का रे, पीयै बिरला कोय ।
हरि रस महँगा सो पियै, जा के धर पै सीस न होय ॥३॥
आगे आगे दौं जलै रे, पीछे हरिया होय ।
कहत कबीर सुनो भाई साधो, हरि भज निर्मल होय ॥४॥

(५)

जहँ सतगुरु खेलत ऋतु बसंत । परम जोत जहँ साध संत ॥१॥
तीन लोक से भिन्न राज । जहँ अनहद बाजा बजै बाज ॥२॥
चहुँ दिसि जोति की बहै धार । बिरला जन कोइ उतरै पार ॥३॥
कोटि कृस्न जहँ जोरैं हाथ । कोटि बिस्नु जहँ नवैं माथ ॥४॥
कोटिन ब्रह्मा पढ़ैं पुरान । कोटि महेस जहँ धरैं ध्यान ॥५॥
कोटि सरस्वति धारैं राग । कोटि इन्द्र जहँ गगन लाग ॥६॥
सुर गन्धर्व मुनि गने न जायँ । जहँ साहिब प्रगटे आप आय ॥७॥
चोवा चंदन औ अबीर । पुहुप बास रस रह्यो गँभीर ॥८॥
सिरजत हिये निवास लीन्ह । सो यहि लोक से रहत भिन्न ॥९॥
जब बसंत गहि राग लीन्ह । सतगुरु सबद उचार कीन्ह ॥१०॥
कह कबीर मन हृदय लाय । नरक-उधारन नाम आहि ॥११॥

---

(१) तजो ।

(६)

रेखता

सूर संग्राम को देखि भागै नहीँ, देखि भागै सोई सूर नाहीँ।
काम औ क्रोध मद लोभ से जूझना, मँडा घमसान तहँ खेत माहीँ॥
सील औ साच संतोष साही भये, नाम समसेर तहँ खूब बाजै।
कहै कब्बीर कोइ जूझिहै सूरमा, कायराँ भीड़ तहँ तुरत भाजै॥

(७)

रेखता

बिना बैराग कहु ज्ञान केहि काम का,
पुरुष बिनु नारि नहिँ सोभ पावै।
स्वाँग तो साहु का काम है चोर का,
कपट की झपट में बहुत धावै॥
बात बहुते कहै झूठ छूटै नहीँ,
मुख के कहे कहा खाँड़ खावै।
कहै कबीर जब काल गढ़ घेरि है,
बात बहु बकै सब भूलि जावै॥

पीपाजी

जीवन समय—पंद्रहवाँ शतक। जनम स्थान—गागरौनगढ़। आश्रम—भेष। गुरू—स्वामी रामानंद।

यह गागरौनगढ़ के राजा और आदि में दुर्गा उपासक थे फिर स्वामी रामानंद के चेले हुए और राजपाट छोड़ कर साधु भेष में अपनी छोटी रानी सीता सहित गुरू के साथ द्वारिका गये। भक्तमाल की कथा के अनुसार श्रीकृष्ण का साक्षात दर्शन पाने की अभिलाषा में पीपा जी समुद्र में कूद पड़े और सात दिन तक भगवत चरणों में रह कर बाहर निकले और वहाँ से जो छाप लाये थे वह यह कह कर पुजारियों के सपुर्द की कि जो इस छाप को लगावैगा उसे भगवान मिलेंगे। द्वारिका से लौटते हुए रास्ते में पठानों ने पीपाजी की स्त्री को सुन्दर देख कर छीन लेना चाहा परन्तु भगवान ने आप रक्षा की।

॥ घट मठ ॥

काया देवा काया देवल, काया जंगम जाती।
काया धूप दीप नैवेदा, काया पूजौं पाती॥ १॥

काया बहु खँड खोजते, नव निद्धी पाई ।
ना कछु आइबो ना कछु जाइबो, राम की दुहाई ॥ २ ॥
जो ब्रह्मंडे सोई पिंडे, जो खोजै सो पावै ।
पीपा प्रनवै परम तत्त्व ही, सतगुरु होय लखावै ॥ ३ ॥

नामदेवजी

जीवन समय—पंद्रहवें शतक का दूसरा हिस्सा। कविता काल—१४८०। जन्म और सतसंग स्थान—पांढरपुर। जाति और आश्रम—छीपी, गृहस्थ। गुरु—ज्ञानदेव जी।

भक्तमाल में इनका जन्म एक बाल-बिधवा के गर्भ से बिना पुरुष प्रसंग के ईश्वरेच्छा से होना लिखा है जैसा कि हजरत ईसा का क्वारी कन्या के उदर से हुआ था। इनकी प्रचंड भक्ति और बाल अवस्था ही से दृढ़ विश्वास की बहुत सी कथाओं में तीन दिन उपास करके ठाकुर जी को दूध पिलाने की कथा प्रसिद्ध है।

॥ नाम महिमा ॥

तत्त्व गहन को नाम है, भजि लीजे सोई ।
लीला सिंध अगाध है, गति लखै न कोई ॥ १ ॥
कंचन मेरु सुमेरु, हय गज[1] दीजे दाना ।
कोटि गऊ जो दान दे, नहिं नाम समाना ॥ २ ॥
जोग जग्य तें कहा सरै, तीरथ ब्रत दाना ।
ओसे प्यास न भागिहै, भजिये भगवाना ॥ ३ ॥
पूजा करि साधू जनहिं, हरि को प्रन धारी ।
उन तें गोबिंद पाइये, वे परउपकारी ॥ ४ ॥
एकै मन एकै दसा, एकै ब्रत धरिये ।
नामदेव नाम जहाज है, भवसागर तरिये ॥ ५ ॥

॥ समरथ ॥

बदो क्यों ना होड़[2] माधो मो सों ।
ठाकुर तें जन जन तें ठाकुर, खेल पर्‍यो है तो सों ॥१॥
आपन देव देहरा आपन, आप लगावै पूजा ।
जल तें तरँग तरँग तें है जल, कहन सुनन को दूजा ॥२॥

---

(१) घोड़ा और हाथी। (२) शर्त।

आपहिँ गावै आपहिँ नाचै, आप बजावै तूरा ।
कहत नामदेव तूँ मेरो ठाकुर, जन ऊरा[1] तूँ पूरा ॥३॥

॥ लव ॥

अस मन लाव राम रसना । तेरो बहुरि न होइ जरा मरना ॥१॥
जैसे मृगा नाद लव लावै । बान लगे वहि ध्यान लगावै ॥२॥
जैसे कीट भृङ्ग मन दीन्ह । आपु सरीखे वा को कीन्ह ॥३॥
नामदेव भन[2] दासनदास । अब न तजौँ हरि चरन निवास ॥४॥

॥ विरह ॥

होली

मोर पिया बिलम्यो परदेस, होरी मैँ का सोँ खेलौँ ।
घरी पहर मोहिँ कल न परतु है, कहत न कोउ उपदेस ॥ १ ॥
झर्‌यो पात बन फूलन लाग्यो, मधुकर करत गुँजार ।
हाहा करौँ कंथ घर नाहीँ, के मोरि सुनै पुकार ॥ २ ॥
जा दिन तेँ पिय गवन कियो है, सिँदुरा न पहिरौँ संग[3] ।
पान फुलेल सबै सुख त्याग्यो, तेल न लावौँ अंग ॥ ३ ॥
निसु बासर मोहिँ नीँद न आवै, नैन रहे भरपूर ।
अति दारुन मोहिँ सवति सतावै, पिय मारग बड़ि दूर ॥ ४ ॥
दामिनि दमकि घटा घहरानी, बिरह उठै घनघोर ।
चित चातृक ह्वै दादुर बोलै, वहि बन बोलत मोर ॥ ५ ॥
प्रीतम को पतियाँ लिखि भेजौँ, प्रेम प्रीति मसि[4] लाय ।
बेगि मिलो जन नामदेव को, जनम अकारथ जाय ॥ ६ ॥

॥ प्रेम ॥

भाई रे इन नैनन हरि पेखो ।
हरि की भक्ति साधु की संगति, सोई यह दिल लेखो ॥ १ ॥
चरन सोई जो नचत प्रेम से, कर सोई जो पूजा ।
सीस सोई जो नवै साधु को, रसना और न दूजा ॥ २ ॥

(१) अधूरा । (२) कहता है । (३) माँग में । (४) सियाही ।

यह संसार हाट को लेखा, सब कोउ बनिजहिँ आया।
जिन जस लादा तिन तस पाया, मूरख मूल गँवाया ॥ ३ ॥
आतम राम देँह धरि आयो, ता मेँ हरि को देखो।
कहत नामदेव बलि बलि जैहौँ, हरि भजि और न लेखो ॥ ४ ॥

॥ भेद ॥

एक अनेक बियापक पूरक, जित देखौँ तित सोई।
माया चित्र बिचित्र बिमोहत, बिरला बूझै कोई ॥ १ ॥
सब गोबिँद है सब गोबिँद है, गोबिँद बिन नहिँ कोई।
सूत एक मनि सत्तसहस जस, ओत पोत प्रभु सोई ॥ २ ॥
जल-तरंग अरु फेन बुदबुदा, जल तेँ भिन्न न होई।
यह प्रपंच परब्रह्म की लीला, बिचरत आन न होई ॥ ३ ॥
मिथ्या भ्रम अरु स्वपन मनोरथ, सत्य पदारथ जाना।
सुकिरत मनसा गुरु उपदेसी, जागत ही मन माना ॥ ४ ॥
कहत नामदेव हरि की रचना, देखो हृदय बिचारी।
घट घट अंतर सर्ब निरंतर, केवल एक मुरारी ॥ ५ ॥

॥ उपदेश ॥

(१)

परधन परदारा परिहरी[1]। ता के निकट बसहि नरहरी[2] ॥१॥
जो न भजंते नारायना। तिन का मैँ न करौँ दर्सना ॥२॥
जिन के भीतर है अन्तरा। जैसे पसु तैसे वह नरा ॥३॥
प्रनवत नामदेव ना कहिँ बिना। ना सोहै बत्तीस लच्छना[3] ॥४॥

(२)

काहे मन बिषया बन जाय। भूलो रे ठगमूरी[4] खाय ॥१॥
जैसे मीन पानी मेँ रहै। काल जाल की सुधि नहिँ लहै ॥२॥
जिभ्या स्वादी लीलत लोह। ऐसे कनिक कामिनी मोह ॥३॥
ज्योँ मधुमाखी संचि अपार। मधु[5] लीन्हो मुख दीन्हो छार ॥४॥

(१) त्याग करै। (२) नरसिंह अर्थात् ईश्वर। (३) आभरन, भूषन। (४) ठगाई, धोका। (५) मधुआ चिड़िया जो मधुमक्खी के बटोरे हुए शहद को खा जाती है।

गऊ बाछ को संचै छीर । गला बाँधि दुहि लेहि अहीर ॥५॥
माया कारन स्रम अति करै । सो माया लै गाड़ै धरै ॥६॥
अति संचै समझै नहिँ मूढ़ । धन धरती तन ह्वै गयो धूड़[1] ॥७॥
काम क्रोध त्रिस्ना अति जरै । साधु सँगत कबहूँ नहिँ करै ॥८॥
कहत नामदेव ता ची आन[2] । निरभय ह्वै भजिये भगवान ॥९॥

रैदासजी

[संक्षिप्त जीवन-चरित्र के लिये देखो पृष्ठ ६५ संतबानी संग्रह भाग १]

॥ चितावनी ॥

कहु मन राम नाम सँभारि ।
माया के भ्रम कहाँ भूल्यो, जाहुगे कर झारि ॥ टेक ॥
देखि धौं इहाँ कौन तेरो, सगा सुत नहिँ नारि ।
तोर उतँग सब दूरि करिहैँ, देहिँगे तन जारि ॥ १ ॥
प्रान गये कहो कौन तेरा, देखि सोच बिचारि ।
बहुरि येहि कलि काल नाहीँ, जीति भावै हारि ॥ २ ॥
यहु माया सब थोथरी रे, भगति दिस प्रतिहारि ।
कह रैदास सत बचन गुरु के, सो जिव तेँ न बिसारि ॥ ३ ॥

॥ विनय ॥

(१)

नरहरि[3] चंचल है मति मेरी, कैसे भगति करूँ मैँ तेरी ॥टेक॥
तूँ मोहिँ देखै हौँ तोहि देखूँ, प्रीति परस्पर होई ।
तूँ मोहिँ देखै तोहि न देखूँ, यह मति सब बुधि खोई ॥ १ ॥
सब घट अंतर रमसि निरंतर, मैँ देखन नहिँ जाना ।
गुन सब तोर मोर सब औगुन, कृत उपकार न माना ॥ २ ॥

---

(१) धूल । (२) चिल्ला कर, पुकार कर । (३) नरसिंह ईश्वर का एक अवतार ।

मैं तैं तोरि मोरि असमझि सों, कैसे करि निस्तारा ।
कह रैदास कृष्ण करुनामय, जै जै जगत अधारा ॥ ३ ॥

(२)

रामा हो जग-जीवन मोरा, तूँ न बिसारी मैं जन तोरा ॥टेक॥
संकट सोच पोच दिन राती, करम कठिन मोरि जाति कुजाती ॥१॥
करहु बिपति भावै करहु सो भाव, चरन न छाड़ौं जाव सो जाव ॥२॥
कह रैदास कछु देहु अलंबन, बेगि मिलो जनि करो बिलंबन ॥३॥

॥ प्रेम ॥

(१)

देहु कलाली एक पियाला, ऐसा अवधू है मतवाला ॥ टेक ॥
हे रे कलाली तैं क्या किया, सिर का सा तैं प्याला दिया ॥१॥
कहै कलाली प्याला देऊँ, पीवनहारे का सिर लेऊँ ॥२॥
चंद सूर दोउ सनमुख होई, पीवै प्याला मरै न कोई ॥३॥
सहज सुन्न में भाठी सरवै, पीवै रैदास गुरुमुख दरवै ॥४॥

(२)

जो तुम तोरौ राम मैं नहिं तोरूँ, तुम सों तोरि कवन सों जोरूँ॥टेक॥
तीरथ बरत न करूँ अँदेसा, तुम्हरे चरन कमल क भरोसा ॥१॥
जहँ जहँ जाऊँ तुम्हरी पूजा, तुम सा देव और नहिं दूजा ॥२॥
मैं अपनो मन हरि सों जोर्‌यौं, हरि सों जोरि सबन से तोर्‌यौं ॥३॥
सबही पहर तुम्हारी आसा, मन क्रम बचन कहै रैदासा ॥४॥

(३)

अब कैसे छुटै नाम रट लागी ॥ टेक ॥
प्रभु जी तुम चंदन हम पानी, जा की अँग अँग बास समानी ॥१॥
प्रभु जी तुम घन बन हम मोरा, जैसे चितवत चंद चकोरा ॥२॥
प्रभु जी तुम दीपक हम बाती, जाकी जोति बरै दिन राती ॥३॥
प्रभु जी तुम मोती हम धागा, जैसे सोनहिं मिलत सुहागा ॥४॥
प्रभु जी तुम स्वामी हम दासा, ऐसी भक्ति करै रैदासा ॥५॥

(४)

साची प्रीति हम तुम सँग जोड़ी, तुम सँग जोड़ि अवर सँग तोड़ी ॥१॥
जो तुम बादर तो हम मोरा, जो तुम चंद हम भये चकोरा ॥२॥
जो तुम दीवा तो हम बाती, जो तुम तीरथ तो हम जात्री ॥३॥
जहाँ जाउँ तहँ तुम्हरी सेवा, तुम सा ठाकुर और न देवा ॥४॥
तुम्हरे भजन कटै भय फाँसा, भक्ति हेतु गावै रैदासा ॥५॥

॥ साधु ॥

आज दिवस[1] लेऊँ बलिहारा, मेरे गृह आया राम का प्यारा ॥टेक॥
आँगन बँगला भवन भयो पावन, हरिजन बैठे हरिजस गावन ॥१॥
करूँ डंडवत चरन पखारूँ, तन मन धन उन ऊपरि वारूँ ॥२॥
कथा कहैँ अरु अर्थ बिचारैँ, आप तरैँ औरन को तारैँ ॥३॥
कह रैदास मिलैँ निज दास, जनम जनम कै काटैँ पास[2] ॥४॥

॥ उपदेश ॥

परिचै राम रमै जो कोई, या रस परसे दुबिधि न होई ॥टेक॥
जे दीसे ते सकल बिनास, अनदीठे नाहीँ बिसवास ॥१॥
बरन कहंत कहैँ जे राम, सो भगता केवल निःकाम ॥२॥
फल कारन फूलै बनराई, उपजै फल तब पुहुप बिलाई ॥३॥
ज्ञानहिँ कारन करम कराई, उपजै ज्ञान तो करम नसाई ॥४॥
बट क बीज जैसा आकार, पसर्‌यो तीन लोक पासार ॥५॥
जहाँ क उपजा तहाँ बिलाइ, सहज सुन्न मेँ रह्यो लुकाइ ॥६॥
जे मन बिंदै सोई बिंद, अमा[3] समय ज्योँ दीसै चंद ॥७॥
जल मेँ जैसे तूँबा तिरै, परिचै[4] पिंड जीव नहिँ मरै ॥८॥
सो मन कौन जो मन को खाइ, बिन द्वारे तिरलोक समाइ ॥९॥
मन की महिमा सब कोइ कहै, पंडित सो जो अनतै रहै॥१०॥
कह रैदास यह परम बैराग, रामनाम किन[5] जपहु सभाग ॥११॥
घृत कारन दधि मथैँ सयान, जीवन मुक्ति सदा निरबान ॥१२॥

(१) दिन। (२) फाँसी। (३) अमावस। (४) परिचय हो जाने से पिंड का भेद जान ले तो जीवन मुक्ति हो जाय। (५) क्योँ न।

सदनाजी

जीवन समय—पंद्रहवें शतक का पिछला हिस्सा।

जाति और आश्रम—कसाई, भेष।

यह यद्यपि जाति के कसाई थे। परंतु जीवहिंसा नहीं करते थे माँस इकट्ठा मोल लेकर फुटकल बेचते थे, बटखरे की जगह शालग्राम की एक बटिया थी उसी से तौला करते थे चाहे कोई पाव भर ले चाहे पाँच सेर। एक दिन एक वैष्णव ने उस बटिया में शालग्राम के पूरे आकार देखकर उनसे माँगा उन्हों ने तुर्त दे दिया। वैष्णव ने उसे घर पर लाकर और पंचमृत से स्नान करा कर सिंहासन पर विराजमान किया और उत्तम भोग आगे धरे पर रात को उसे स्वप्न हुआ कि हमें तू हमारे उसी परम भक्त के घर पहुँचादे जहाँ तराजू पर बैठ कर हम को पालना झूलने का आनंद आता है। वैष्णव ने सदनाजी को सब हाल आकर सुनाया और बटिया लौटादी। सदनाजी ने उसी दिन से वैराग ले लिया और उस बटिया को सिर पर धर कर जगन्नाथपुरी को चले गये। रास्ते में एक स्त्री के मोहित होने और इनके साथ भाग निकलने के अभिप्राय से अपने पति का सिर काट डालने और फिर सदना जी के इनकार पर हाकिम के सामने उनपर अपने पति के घात का झूठा दोष लगाने और सदनाजी के उस दोष को स्वीकार कर लेने पर उनके दोनों हाथों के काटे जाने और जगन्नाथजी के सन्मुख होते ही हाथ ज्यों के त्यों निकल आने की कथा भक्तमाल में लिखी है।

॥ विनय ॥

नृप कन्या के कारने, एक भयो भेष धारी।
कामारथी सुवारथी, वा की पैज[1] सँवारी ॥ १ ॥
तव गुन कहा जगत-गुरा, जो कर्म न नासै।
सिंह सरन कत जाइये, जो जंबुक[2] ग्रासै ॥ २ ॥
एक बूँद जल कारने, चातक दुख पावै।
प्रान गये सागर मिलै, पुनि काम न आवै ॥ ३ ॥
प्रान जो थाके थिर नहीँ, कैसे बिरमावो।
बूड़ि मुए नौका मिलै, कहु काहि चढ़ावो ॥ ४ ॥
मैं नाहीं कछु हौँ नहीँ, कछु आहि न मोरा।
औसर लज्जा राख लेहु, सदना जन तोरा ॥ ५ ॥

---

(१) प्रण। (२) स्यार।

धनी धर्मदास

जीवन समय—पंद्रहवें शतक के आखिर हिस्से और सोलहवें शतक के दर्मियान। जन्म स्थान—बांधोगढ़। सतसंग स्थान—काशी। जाति और आश्रम—कसौंधन बनिया, गृहस्थ। गुरु—कबीर साहिब।

यह बड़े साहूकार थे पर कबीर साहिब की शरण में आने के पीछे यह काशी ही में उनके चरनों में रहे और उनके गुप्त होने पर उनकी गद्दी पर बैठे। यह और इनके बड़े बेटे चूड़ामणि जी दोनों प्रचंड भक्त हुए और पूरी संत गति को प्राप्त हुए।

॥ गुरुदेव ॥

(१)

बाजा बाजा रहित[१] का, पड़ा नगर में सोर।
(मेरे) सतगुरु संत कबीर हैं, नजर न आवै और ॥ १ ॥
भूमी पर पग धरत हौं, सुनौ संत मतधीर।
माथ नाय बिनती करौं, दरसन देव कबीर ॥ २ ॥
घाट घाट औघट महीं, मोहिं कबीर की आस।
धर्मनि सुमिरै नाम गुरु, कभी न होय बिनास ॥ ३ ॥

(२)

गुरु मिले अगम के बासी ॥ टेक ॥
उनके चरन कमल चित दीजे, सतगुरु मिले अबिनासी ॥१॥
उनकी सीत प्रसादी लीजे, छूटि जाय चौरासी ॥२॥
अमृत बुंद झरै घट भीतर, साध संत जन लासी[२] ॥३॥
धरमदास बिनवै कर जोरी, सार सबद मन बासी ॥४॥

॥ नाम महिमा ॥

हम सत्त नाम के बैपारी ॥ टेक ॥
कोइ कोइ लादै काँसा पीतल, कोइ कोइ लौंग सुपारी।
हम तो लाद्यो नाम धनी को, पूरन खेप हमारी ॥ १ ॥
पूँजी न टूटै नफा चौगुना, बनिज किया हम भारी।
हाट जगाती रोक न सकिहै, निर्भय गैल हमारी ॥ २ ॥

मोति बुंद घट ही में उपजे, सुकिरत भरत कोठारी[1] ।
नाम पदारथ लाद चला है, धर्मदास बैपारी ॥ ३ ॥

॥ चितावनी ॥

(१)

सोहर

कहँवाँ से जिव आइल, कहँवाँ समाइल हो ।
कहँवाँ कइल मुकाम, कहाँ लपटाइल हो ॥ १ ॥
निरगुन से जिव आइल, सगुन समाइल हो ।
काया गढ़ कइल मुकाम, माया लपटाइल हो ॥ २ ॥
एक बुंद से काया महल, उठावल हो ।
बुंद परे गलि जाय, पाछे पछितावल हो ॥ ३ ॥
हंस कहै भाई सरवर, हम उड़ि जाइब हो ।
मोर तोर इतन दिदार, बहुरि नहिँ पाइब हो ॥ ४॥

(२)

कहो केते दिन जियबौ हो, का करत गुमान ॥ टेक ॥
कच्चे बासन का पिँजरा हो, जा में पवन समान ।
पंछी का कौन भरोसा हो, छिन में उड़ि जान ॥ १ ॥
कच्ची माटी कै घड़ुवा हो, रस बूँदन सान ।
पानी बीच बतासा हो, छिन में गलि जान ॥ २ ॥
कागद की नइया बनी, डोरी साहिब हाथ ।
जौने नाच नचैहैँ हो, नाचब वोहि नाच ॥ ३ ॥
धरमदास इक बनिया हो, करै झूठी बजार ।
साहिब कबीर बनिजारा हो, करैँ सत बैपार ॥ ४ ॥

॥ विरह ॥

(१)

सतगुरु आवो हमरे देस, निहारौँ बाट खड़ी ॥ टेक ॥
वाहि देस की बतियाँ रे, लावैँ संत सुजान ।
उन संतन के चरन पखारौँ, तन मन करौँ कुरबान ॥ १ ॥

---

[1] भंडार ।

वाहि देस की बतियाँ हम से, सतगुरु आन कही ।
आठ पहर के निरखत हमरे, नैन की नींद गई ॥ २ ॥
भूलि गई तन मन धन सारा, ब्याकुल भया सरीर ।
बिरह पुकारै बिरहनी, ढरकत नैनन नीर ॥ ३ ॥
धरमदास के दाता सतगुरु, पल में कियो निहाल ।
आवागवन की डोरी कटि गई, मिटे भरम जंजाल ॥ ४ ॥

(२)

कहौं बुझाय दरद पिय तो से ॥ टेक ॥
दरद मिटै तरवार तीर से,
किधौं मिटै जब मिलहुँ पीव से ॥१॥
तन तलफै हिय कछु न सुहाय,
तोहिं बिन पिय मो से रहल न जाय ॥२॥
धरमदास की अरज गुसाईं,
साहिब कबीर रहौं तुम छाँहीं ॥३॥

॥ प्रेम ॥

(१)

नैन दरस बिन मरत पियासा ॥ टेक ॥
तुमहीं छाड़ि भजूँ नहिं औरे, नाहिं दूसरी आसा ॥१॥
आठो पहर रहूँ कर जोरी, करि लेहु आपन दासा ॥२॥
निसु बासर रहूँ लव लीना, बिनु देखे नहिं बिस्वासा ॥३॥
धरमदास बिनवे कर जोरी, द्यो निज लोक निवासा ॥४॥

(२)

साहिब चितवो हमरी ओर ॥ टेक ॥
हम चितवें तुम चितवो नाहीं, तुम्हरो हृदय कठोर ॥१॥
औरन को तो और भरोसो, हमैं भरोसो तोर ॥२॥
सुखमनि सेज बिछावौं गगन में, नित उठि करौं निहोर ॥३॥
धरमदास बिनवे कर जोरी, साहिब कबीर बंदी-छोर ॥४॥

(३)

हमरे का करै हाँसी लोग ॥ टेक ॥
मोरा मन लागा सतगुरु से, भला होय कै खोर[1] ।
जब से सतगुरु ज्ञान भयो है, चलै न केहु कै जोर ॥ १ ॥
मात रिसाई पिता रिसाई, रिसाय बटोहिया लोग ।
ज्ञान खड़ग तिरगुन को मारौं, पाँच पचीसो चोर ॥ २ ॥
अब तो मोहिँ ऐसी बनि आवै, सतगुरु रचा सँजोग ।
आवत साध बहुत सुख लागै, जात बियापै रोग ॥ ३ ॥
धरमदास बिनवै कर जोरी, सुनु हो बंदी-छोर ।
जा के पद तिरलोक से न्यारा, सो साहिब कस[2] होय ॥ ४ ॥

(४)

॥ बधावा ॥

सतगुरु आये घर, मन मेँ बजत बधाइया ॥ टेक ॥
सतगुरु साहिब दीन-दयाला, द्वारे मेरे आइया ।
जुगन जुगन के करम मिटत भे, सतगुरु दरस दिखाइया ॥१॥
प्रेम सुरत की करी रसोई, ब्यंजन[3] आसन लाइया ।
जेँवन बैठे सतगुरु साहिब, अधर से चौँर डोलाइया ॥२॥
दया भाव के पलँग बिछाये, प्रेम दुलीचा लाइया ।
ता पर सोये सतगुरु साहिब, सुरति कै तेल लगाइया ॥
धरमदास बिनवै कर जोरी, सुनिये समरथ साँइयाँ ।
साहिब कबीर प्रभु मिले बिदेही, झीना दरस दिखाइया ।

(५)

॥ होली ॥

हमरी उमिरिया होरी खेलन की ।
पिय मो सोँ मिलि के बिछुरि गयो हो ॥
पिय हमरे हम पिय की पियारी,
पिय बिच अंतर परि गयो हो ।

(१) बुरा । (२) कैसा । (३) भोजन ।

वाहि देस की बतियाँ हम से, सतगुरु श्रान कही ।
आठ पहर के निरखत हमरे, नैन की नींद गई ॥ २ ॥
भूलि गई तन मन धन सारा, व्याकुल भया सरीर ।
बिरह पुकारै बिरहनी, ढरकत नैनन नीर ॥ ३ ॥
धरमदास के दाता सतगुरु, पल में किये निहाल ।
आवागवन की डोरी कटि गई, मिटे भरम जंजाल ॥ ४ ॥

(२)

कहौं बुझाय दरद पिय तो से ॥ टेक ॥
दरद मिटै तरवार तीर से,
किधौं मिटै जब मिलहुँ पीव से ॥१॥
तन तलफै हिय कछु न सुहाय,
तोहिं बिन पिय मो से रहल न जाय ॥२॥
धरमदास की अरज गुसाईं,
साहिब कबीर रहौं तुम छाँहीं ॥३॥

॥ प्रेम ॥

(१)

नैन दरस बिन मरत पियासा ॥ टेक ॥
तुमहीं छाड़ि भजूँ नहिं औरै, नाहिं दूसरी आसा ॥१॥
आठो पहर रहूँ कर जोरी, करि लेहु आपन दासा ॥२॥
निसु बासर रहूँ लव लीना, बिनु देखे नहिं बिस्वासा ॥३॥
धरमदास बिनवै कर जोरी, द्यो निज लोक निवासा ॥४॥

(२)

साहिब चितवो हमरी ओर ॥ टेक ॥
हम चितवैं तुम चितवो नाहीं, तुम्हरो हृदय कठोर ॥१॥
औरन को तो और भरोसो, हमैं भरोसो तोर ॥२॥
सुखमनि सेज बिछावौं गगन में, नित उठि करौं निहोर ॥३॥
धरमदास बिनवै कर जोरी, साहिब कबीर बंदी-छोर ॥४॥

(३)

हमरे का करै हाँसी लोग ॥ टेक ॥
मोरा मन लागा सतगुरु से, भला होय कै खोर[1] ।
जब से सतगुरु ज्ञान भयो है, चलै न केहु कै जोर ॥ १ ॥
मात रिसाई पिता रिसाई, रिसाय बटोहिया लोग ।
ज्ञान खड़ग तिरगुन को मारौं, पाँच पचीसो चोर ॥ २ ॥
अब तो मोहिं ऐसी बनि आवै, सतगुरु रचा सँजोग ।
आवत साध बहुत सुख लागै, जात बियापै रोग ॥ ३ ॥
धरमदास बिनवै कर जोरी, सुनु हो बंदी-छोर ।
जा के पद तिरलोक से न्यारा, सो साहिब कस[2] होय ॥ ४ ॥

(४)

॥ बधावा ॥

सतगुरु आये घर, मन में बजत बधाइया ॥ टेक ॥
सतगुरु साहिब दीन-दयाला, द्वारे मेरे आइया ।
जुगन जुगन के करम मिटत भे, सतगुरु दरस दिखाइया ॥१॥
प्रेम सुरत की करी रसोई, ब्यंजन[3] आसन लाइया ।
जेंवन बैठे सतगुरु साहिब, अधर से चौंर डोलाइया ॥२॥
दया भाव के पलँग बिछाये, प्रेम दुलीचा लाइया ।
ता पर सोये सतगुरु साहिब, सुरति कै तेल लगाइया ॥३॥
धरमदास बिनवै कर जोरी, सुनिये समरथ साँइयाँ ।
साहिब कबीर प्रभु मिले बिदेही, झीना दरस दिखाइया ॥४॥

(५)

॥ होली ॥

हमरी उमिरिया होरी खेलन की ।
पिय मो सों मिलि के बिछुरि गयो हो ॥१॥
पिय हमरे हम पिय की पियारी,
पिय बिच अंतर परि गयो हो ॥२॥

---

(१) बुरा । (२) कैसा । (३) भोजन ।

पिया मिलैं तब जियौं मोरी सजनी,
पिय बिन जियरा निकरि गयो हो ॥३॥
इत गोकुल उत मथुरा नगरी,
बीच डगर पिय मिलि गयो हो ॥४॥
धरमदास बिरहिन पिय पाये,
चरन कँवल चित गहि रहो हो ॥५॥

॥ कपट भक्ति ॥

साहिब यहि बिधि ना मिलै, चित चंचल भाई ॥ टेक ॥
माला तिलक उरमाई कै, नाचै अरु गावै ।
अपना मरम जानै नहीं, औरन समुझावै ॥ १ ॥
देखे को बक ऊजला, मन मैला भाई ।
आँखि मूँदि मौनी भया, मछरी धरि खाई ॥ २ ॥
कपट कतरनी पेट में, मुख बचन उचारी ।
अंतर-गति साहिब लखै, उन कहा छिपाई ॥ ३ ॥
आदि अंत की बारता, सतगुरु से पावो ।
कह कबीर धर्मदास से, मूरख समझावो ॥ ४ ॥

॥ भेद ॥

झरि लागै महलिया, गगन घहराय ॥ टेक ॥
खन गरजै खन बिजली चमकै,
लहर उठै सोभा बरनि न जाय ॥१॥
सुन्न महल से अमृत बरसै,
प्रेम अनँद ह्वै साध नहाय ॥२॥
खुली किवरिया मिटी अँधियरिया,
धन सतगुरु जिन दिया है लखाय ॥३॥
धरमदास बिनवै कर जोरी,
सतगुरु चरन में रहत समाय ॥४॥

॥ विनय ॥

(१)

गुरु पैयाँ लागौँ नाम लखा दीजो रे ॥ टेक ॥
जनम जनम का सोया मनुवाँ, सबदन मार जगा दीजो रे ॥१॥
घट अँधियार नैन नहिँ सूझै, ज्ञान का दीप जगा दीगो रे ॥२॥
बिष की लहर उठत घट अंतर, अमृत बूँद चुवा दीजो रे ॥३॥
गहिरी नदिया अगम बहै धरवा, खेय के पार लगा दीजो रे ॥४॥
धरमदास की अरज गुसाईँ, अब के खेप निभा दीजो रे ॥५॥

(२)

भक्ति दान गुरु दीजिये, देवन के देवा हो ।
चरन कँवल बिसरौँ नहीँ, करिहौँ पद सेवा हो ॥ १ ॥
तीरथ ब्रत मैँ ना करौँ, ना देवल पूजा हो ।
तुमहिँ ओर निरखत रहौँ, मेरे और न दूजा हो ॥ २ ॥
आठ सिद्धि नौ निद्धि हैँ, बैकुंठ निवासा हो ।
सो मैँ ना कछु माँगहूँ, मेरे समरथ दाता हो ॥ ३ ॥
सुख सम्पति परिवार धन, सुन्दर बर नारी हो ।
सुपनेहु इच्छा ना उठै, गुरु आन तुम्हारी हो ॥ ४ ॥
धरगदास की बीनती, साहिब सुनि लीजै हो ।
दरस देहु पट खोलि कै, अपना करि लीजै हो ॥ ५ ॥

(३)

साहिब बूड़त नाव अब मोरी ॥ टेक ॥
काम क्रोध की लहर उठतु है, मोह पवन झकझोरी ।
लोभ मोरे हिरदे घुमरतु है, सागर वार न पारी ॥ १ ॥
कपट की भँवर परतु है बहुतै, वा मेँ वेड़ा अटको ।
फाँसी काल लिये है द्वारे, आया सरन तुम्हारी ॥ २ ॥
धरमदास पर दाया कीन्ही, काटि फंद जिव तारी ।
कहै कबीर सुनो हो धर्मन, सतगुरु सरन उबारी ॥ ३ ॥

(४)

चरन छाड़ि प्रभु जावँ कहाँ, मोरे और न कोई ।
जग में आपन कोइ नहीं, देखा सब टोई ॥ १ ॥
मात पिता हित बंधु तुम, का से दुख रोइ ।
सब कछु तुम्हरे हाथ है, तुम्हरै मुख जोही ॥ २ ॥
गुन तो मोरे है नहीं, औगुन बहुतेरे ।
ओट लई तुम नाम की, राखो पत सोई ॥ ३ ॥
सतगुरु तुम चीन्हे बिना, मति बुधि सब खोई ।
सब जीवन के एक तुम, दूजा नहिँ कोई ॥ ४ ॥
मैं गरजी अरजी करौं, मरजी जस होई ।
अरज बिपति लिखौं आपनी, राखौं नहिँ गोई[1] ॥ ५ ॥
धरमदास सत साहिबी, घट घटहिँ समोई ।
साहिब कबीर सतगुरु मिले, आवागवन न होई ॥ ६ ॥

मिश्रित

(१)

मितऊ मड़ैया सूनी करि गैलो ॥ टेक ॥

अपन बलम परदेस निकरि गैलो,
हमरा के कछुवो न गुन दै गैलो ॥ १ ॥
जोगिन होय के मैं बन बन ढूँढ़ों,
हमरा के बिरह बैराग दै गैलो ॥ २ ॥
सँग की सखी सब पार उतरि गैलीं,
हम धन ठाढ़ी अकेली रहि गैलो ॥ ३ ॥
धरमदास यह अरज करतु है,
सार सबद सुमिरन दै गैलो ॥ ४ ॥

(२)

मोरा पिया बसै कौने देस हो ॥ टेक ॥

अपने पिया के ढूँढ़न हम निकसी,
कोई न कहत सनेस हो ॥ १ ॥

पिय कारन हम भई हैं बावरी,
धर्‍यो जोगिनिया कै भेस हो ॥ २ ॥

ब्रह्मा बिस्नु महेस न जाने,
का जानै सारद सेस हो ॥ ३ ॥

धनि जो अगम अगोचर पइलन,
हम सब सहत कलेस हो ॥ ४ ॥

उहाँ कै हाल कबीर गुरु जानैं,
आवत जात हमेस हो ॥ ५ ॥

(३)

गाँठ परी पिय बोले न हम से ॥ टेक ॥

माल मुलुक कछु संग न जैहै,
नाहक बैर कियो है जग से ॥ १ ॥

जो मैं जनितिउँ पिया रिसियै है,
नाहक प्रीति लगाती न जग से ॥ २ ॥

निसु बासर पिय सँग मैं सूतिउँ,
नैन अलसानी निकरि गये घर से ॥ ३ ॥

जस पनिहारि धरे सिर गागर,
सुरति न टरै बतरावत[1] सब से ॥ ४ ॥

धरमदास बिनवै कर जोरी,
साहिब कबीर को पावे सुभग[2] से ॥ ५ ॥

---

(१) बात चीत करती है। (२) अच्छे भाग।

(४)

कैसे आरत करौं तिहारी । महा मलिन गति देँह हमारी ॥
मैलहिँ तेँ उपज्यो संसारा । मैं कैसे गुन गावोँ तुम्हारा ॥
झरना झरै दसो दिसि द्वारे । कस ढिँग आवोँ साहिब तुम्हारे ॥
जो प्रभु देहु अगर की देँही । तब होवोँ मैं सबद सनेही ॥
मलयागिरि मेँ बसत भुवंगा । बिष अमृत रहै एकै संगा ॥
तिनुका तोड़ दिया परवाना । तब हम हायो पद निर्बाना ॥
धरमदास कबीर बल गाजै । गुरु परताप आरती साजै ॥

गुरु नानक

[संक्षिप्त जीवन चरित्र के लिये देखो पृष्ठ ६७ सतबानी संग्रह, भाग १]

(१)

राम सुमिर राम सुमिर एही तेरो काज है ॥ टेक ॥
माया को संग त्याग, हरि जू की सरन लाग ।
जगत सुख मान मिथ्या, झूठो सब साज है ॥ १ ॥
सुपने ज्योँ धन पिछान, काहे पर करत मान ।
बारू की भीत तैसे, बसुधा को राज है ॥ २ ॥
नानक जन कहत बात, बिनसि जैहै तेरो गात ।
छिन छिन करि गयो काल्ह, तैसे जात आज है ॥ ३ ॥

(२)

इस दम दा मैनूँ की बे भरोसा,
आया आया न आया न आया ॥ १ ॥
सोच बिचार करै मत मन मेँ,
जिस ने ढूँढा उसने पाया ॥ २ ॥
या संसार रैन दा सुपना,
कहिँ दीखा कहिँ नाहिँ दिखाया ॥ ३ ॥

नानक भक्तन के पद परसे,
निस दिन राम चरन चित लाया ॥ ४ ॥

(३)

सब कछु जीवत को ब्योहार ।
मात पिता भाई सुत बांधव, अरु पुनि गृह की नार ॥ १ ॥
तन तें प्रान होत जब न्यारे, टेरत प्रेत पुकार ।
आध घरी कोऊ नहिं राखै, घर तें देत निकार ॥ २ ॥
मृग-तृस्ना ज्यों जग रचना यह, देखो हृदे बिचार ।
कहु नानक प्रभु राम नाम नित, जा तें होत उधार ॥ ३ ॥

(४)

साधो यह तन मिथ्या जानो ।
या भीतर जो राम बसत है, साचो ताहि पिछानो ॥ १ ॥
यह जग है संपति सुपने की, देख कहा ऐड़ानो ।
संग तिहारे कछू न चालै, ताहि कहा लपटानो ॥ २ ॥
अस्तुति निंदा दोऊ परिहरि, हरि कीरति उर आनो ।
जन नानक सबही में पूरन, एक पुरुष भगवानो ॥ ३ ॥

(५)

चेतना है तो चेत ले, निसि दिन में प्रानी ।
छिन छिन अवधि बिहात है, फूटै घट ज्यों पानी ॥ १ ॥
हरि गुन काहे न गावही, मूरख अज्ञाना ।
झूठे लालच लागि कै, नहिं मर्म पिछाना ॥ २ ॥
अजहूँ कछु बिगर्यो नहीं, जो प्रभु गुन गावै ।
कहु नानक तेहिं भजन तें, निरभय पद पावै ॥ ३ ॥

॥ प्रेम ॥

(१)

हौं कुरबाने जाउँ पियारे, हौं कुरबाने जाउँ ॥ टेक ॥
हौं कुरबाने जाउँ तिन्हाँ दे, लैन जो तेरा नाउँ ।
लैन जो तेरा नाउँ तिन्हाँ दे, हौं सद कुरबाने जाउँ ॥ १ ॥
काया रंगन जे थिये प्यारे, पाइये नाउँ मजीठ[1] ।
रंगन वाला जे रँगे साहिब, ऐसा रंग ना डीठ ॥ २ ॥
जिन के चोलड़े रत्तड़े[2] प्यारे, कंत तिन्हाँ के पास ।
धूड़[3] तिन्हाँ को जे मिले जो को, नानक की अरदास ॥ ३ ॥

(२)

बिसरत नाहिँ मन तेँ हरी ।
अब यह प्रीति महा प्रबल भइ, आन बिषय जरी ॥ १ ॥
बूँद कहाँ तियागि चातक, मीन रहत न घरी ।
गुन गोपाल उचारत रसना, टेँव[4] एह परी ॥ २ ॥
महा नाद कुरंग मोह्यो, बेध तीच्छन सरी ।
प्रभु चरन कमल रसाल नानक, गाँठ बाँधि परी ॥ ३ ॥

(३)

गोबिँद जी तूँ मेरे प्रान-अधार ।
साजन मीत सहाई तुमहीँ, तूँ मेरो परिवार ॥ १ ॥
कर बिसाल धार्‌यो मेरे माथे, साधु संग गुन गाये ।
तुम्हरी कृपा तेँ सब फल पाये, रसिक नाम धियाये ॥ २ ॥
अबिचल नीँव धराई सतगुरु, कबहूँ डोलत नाहीँ ।
गुरु नानक जब भये दयाला, सर्ब सुखाँ निधि पाहीँ ॥ ३ ॥

(४)

प्रभु जी तूँ मेरे प्रान-अधारे ।
नमस्कार डंडौत बंदना, अनिक बार जाऊँ बलिहारे ॥१॥

---

(१) काया तब रँगी जायगी जब नाम रूपी लाल रँग (त्रिकुटी के धनी का) मिलै । रँगे हुए । (३) धूल । (४) आदत ।

ऊठत बैठत सोवत जागत, इहु मन तुझे चितारे।
सूख दूख इस मन की बिरथा, तुझ ही आगे सारे ॥२॥
तूँ मेरी ओट बल बुधि धन तुमहीँ, तुमहिँ मेरे परिवारे।
जो तुम करो सोई भल हमरे, पेख नानक सुख चरना रे ॥३॥

॥ घट मठ ॥

(१)

मुरसिद मेरा महरमी, जिन मरम बताया।
दिल अंदर दीदार है, खोजा तिन पाया ॥१॥
तसबी एक अजूब है, जा मेँ हर दम दाना।
कुंज किनारे बैठि के, फेरा तिन्ह जाना ॥२॥
क्या बकरी क्या गाय है, क्या अपनो जाया।
सब को लोहू एक है, साहिब फरमाया ॥३॥
पी पैगंबर औलिया, सब मरने आया।
नाहक जीव न मारिये, पोषन को काया ॥४॥
हिरिस हिये हैवान है, बसि करिले भाई।
दाद[1] इलाही नानका, जिसे देवे खुदाई ॥५॥

(२)

काहे रे बन खोजन जाई।
सर्ब निवासी सदा अलेपा, तोही संग समाई ॥१
पुष्प मध्य ज्योँ बास बसत है, मुकर माहिँ जस छाईँ।
तैसेही हरि बसै निरंतर, घट ही खोजो भाई ॥
बाहर भीतर एकै जानो, यह गुरु ज्ञान बताई।
जन नानक बिन आपा चीन्हे, मिटै न भ्रम की काई।

॥ विनय ॥

(१)

प्रब[2] मेरे प्रीतम प्रान पियारे।
प्रेम भक्ति निज नाम दीजिये, द्याल अनुग्रह धारे।

(१) बख्शिश। (२) प्रभु।

सुमिरौं चरन तिहारे प्रीतम, रिदे तिहारी आसा।
संत जनाँ पै करौं बेनती, मन दरसन को प्यासा ॥ २ ॥
बिछुरत मरन जीवन हरि मिलते, जन को दरसन दीजै।
नाम अधार जीवन धन नानक, प्रब मेरे किरपा कीजै ॥ ३ ॥

(२)

माई मैं केहि बिधि लखौं गुसाईं।
महा मोह अज्ञान तिमिर में, मन रहियो उरझाई ॥ १ ॥
सकल जनम भ्रम ही भ्रम खोयो, नहिं इस्थिर मति पाई।
बिषयासक्त रह्यो निसि बासर, नहिं छूटी अधमाई ॥२॥
साधु संग कबहूँ नहिं कीन्हा, नहिं कीरति प्रब[1] गाई।
जन नानक में नाहीं कोउ गुन, राखि लेहु सरनाई ॥३॥

(३)

प्रब जी-यही मनोरथ मेरा।
कृपा-निधान द्याल मोहिं दीजै, करि संतन का चेरा ॥१॥
प्रात काल लागौं जन चरनी, निसि बासर दरसन पावौं।
तन मन अरप करौं जन सेवा, रसना हरि गुन गावौं ॥२॥
साँस साँस सुमिरौं प्रभु अपना, संत संग नित रहिये।
एक अधार नाम धन मेरा, आनँद नानक यह लहिये ॥३॥

(४)

अब हम चली ठाकुर पहिं हार।
जब हम सरन प्रभू की आईं, राख प्रभु भावे मार ॥१॥
लोगन की चतुराई उपमा, ते बैसंदर[2] जार।
कोई भला कहु भावे बुरा कहु, हम तन दियो है ढार ॥२॥
जो आवत सरन ठाकुर प्रभु तुम्हरी, तिस राखो किरपाधार।
जन नानक सरन तुम्हारी हरिजी, राखो लाज मुरार ॥३॥

---

(१) प्रभु। (२) आग।

(५)

अब मैं कौन उपाय करूँ ॥ टेक ॥
जेहि बिधि मन को संसय छूटै, भव-निधि[1] पार परूँ ॥१॥
जनम पाय कछु भलो न कीन्हो, ता तें अधिक डरूँ ॥२॥
गुरु मत सुन कछु ज्ञान न उपज्यो, पसुवत उदर भरूँ ॥३॥
कहु नानक प्रभु बिरद पिछानो, तब हौं पतित तरूँ ॥४॥

(६)

हरि जू राखि लेहु पत मेरो ॥ टेक ॥
काल को त्रास भयो उर अंतर, सरन गह्यो अब तेरो ।
भय मरने को बिसरत नाहीं, तेहिं चिंता तन जारो ॥ १ ॥
किये उपाय मुक्ति के कारन, दह दिसि को उठि धाया ।
घट ही भीतर बसै निरंतर, ता को मर्म न पाया ॥ २ ॥
नाहीं गुन नाहीं कछु जप तप, कौन करम अब कीजे ।
नानक हार पर्‌यो सरनागत, अभय दान अब दीजे ॥ ३ ॥

(७)

या जग मीत न देख्यो कोई ।
सकल जगत अपने सुख लाग्यो, दुख में संग न होई ॥ १ ॥
दारा मीत पूत संबंधी, सगरे धन सों लागे ।
जबहीं निरधन देख्यो नर को, संग छाड़ि सब भागे ॥ २ ॥
केहा कहूँ या मन बौरे को, इन सों नेह लगाया ।
दीनानाथ सकल भय-भंजन, जस[2] ता को विसराया ॥ ३ ॥
स्वान पूँछ ज्यों भयो न सूधो, बहुत जतन मैं कीन्हो ।
नानक लाज बिरद की राखो, नाम तिहारो लीन्हो ॥ ४ ॥

(८)

जीव जंतु सब ता के हाथ, दीनदयाल अनाथ को नाथ ॥१॥
जिस राखै तिस कोइ न मारै, सो मूआ जिस मनों बिसारै ॥२॥

---

(१) भवसागर । (२) इहसान ।

तिस तजि अवर कहाँ को जाय, सब सिर एक निरंजनराय ॥३॥
जिय की जुगत जा के सब हाथ, अंतर बाहर जानो साथ ॥४॥
गुन-निधास बेअंत अपार, नानक दास सदा बलिहार ॥५॥

॥ साध महिमा ॥

जो नर दुख में दुख नहिँ मानै ।
सुख सनेह अरु भय नहिँ जा के, कंचन माटी जानै ॥१॥
नहिँ निन्दा नहिँ अस्तुति जा के, लोभ मोह अभिमाना ।
हर्ष सोक तेँ रहै नियारो, नाहिँ मान अपमाना ॥२॥
आसा मनसा सकल त्यागि कै, जग तेँ रहै निरासा ।
काम क्रोध जेहिँ परसै नाहिन, तेहिँ घट ब्रह्म निवासा ॥३॥
गुरु किरपा जेहिँ नर पै कीन्ही, तिन यह जुगति पिछानी ।
नानक लीन भयो गोबिंद सोँ, ज्योँ पानी सँग पानी ॥४॥

॥ उपदेश ॥

(१)

जा में भजन राम को नाहीँ ।
तेहि नर जनम अकारथ खोयो, यह राखो मन माहीँ ॥१॥
तीरथ करै बर्त पुनि राखै, नहिँ मनुवाँ बस जा को ।
निफल धर्म ताहि तुम मानो, साच कहत मैं या को ॥२॥
जैसे पाहन जल में राख्यो, भेदै नहिँ तेहि पानी ।
तैसेही तुम ताहि पिछानो, भगतिहीन जो प्रानी ॥३॥
कलि में मुक्ति नाम तेँ पावत, गुरु यह भेद बतावै ।
कहु नानक सोई नर गरुवा, जो प्रभ के गुन गावै ॥४॥

(२)

साधो मन का मान तियागो ।
काम क्रोध संगत दुर्जन की, ता तेँ अहि निसि भागो ॥१॥
सुख दुख दोनोँ सम कर जानै, और मान अपमाना ।
हर्ष सोक तेँ रहै अतीता, तिन जग तत्व पिछाना ॥२॥

अस्तुति निंदा दोऊ त्यागै, खोजै पद निरबाना।
जन नानक यह खेल कठिन है, किनहूँ गुरमुख जाना ॥३॥

(३)

यह मन नेक न कह्यो करै।
सीख सिखाय रह्यो अपनी सी, दुरमति तेँ न टरै ॥१॥
मद माया बस भयो बावरो, हरिजस नहिँ उचरै।
करि परपंच जगत को डहकै, अपनो उदर भरै ॥२॥
स्वान पूँछ ज्योँ होय न सूधो, कह्यो न कान धरै।
कहु नानक भजु राम नाम नित, जा तेँ काज सरै ॥३॥

(४)

माई मैं मन को मान न त्यागो।
माया के मद जनम सिरायो, राम भजन नहिँ लाग्यो ॥१॥
जम को दंड पर्‍यो सिर ऊपर, तब सोवत तेँ जाग्यो।
कहा होत अब के पछिताये, छूटत नाहिन भाग्यो ॥२॥
यह चिंता उपजी घट मेँ जब, गुरु चरनन अनुराग्यो।
सुफल जनम नानक तब हूआ, जो प्रभु जस मेँ पाग्यो ॥३॥

(५)

मन की मनहीँ माहिँ रही।
ना हरि भजे न तीरथ सेवे, चोटी काल गही ॥१॥
दारा मीत पूत रथ-संपति, धन जन पूर्न मही।
और सकल मिथ्या यह जानो, भजन राम सही ॥२॥
फिरत फिरत बहुते जुग हार्‍यो, मानस देह लही।
नानक कहत मिलन की बिरिया, सुमिरत कहा[1] नहीँ ॥३॥

(६)

मन मूरख काहे चिल्लावै, पूर्ब लिखे का लेखा पावै ॥१॥
दुक्ख सुक्ख प्रब देवनहार, अवर त्यागि तूँ तिसै चितार ॥२॥

---

(१) क्यों।

जो कछु करै सोई सुख मान, भूला काहे फिरै अयान ॥३॥
कौन बस्तु आई तेरे संग, लपट रह्यो रस लोभि पतंग ॥४॥
राम नाम जप हिरदे माहीँ, नानक पत सेती घर जाही ॥५॥

(७)

रे मन कौन गति होइ है तेरी ॥ टेक ॥
एहि जग मेँ राम नाम, सो तो नहिँ सुन्यो कान ।
बिषयन सोँ अति लुभान, मति नाहिन फेरी ॥१॥
मानस को जनम लीन्ह, सिमरन नहिँ निमिष कीन्ह ।
दारा सुत भयो दीन, पगहुँ परी बेरी ॥२॥
नानक जन कह पुकार, सुपने ज्योँ जग पसार ।
सिमरत नहिँ क्योँ मुरार, माया जा की चेरी ॥३॥

(८)

साधो रचना राम बनाई ।
इक बिनसै इक इस्थिर मानै, अचरज लख्यो न जाई ॥ १ ॥
काम क्रोध मोह बस प्रानी, हरि मूरति बिसराई ।
झूठा तन साचा करि मान्यो, ज्योँ सुपना रैनाई ॥ २ ॥
जो दीसै सो सकल बिनासै, ज्योँ बादर की छाँई ।
जन नानक जग जानो मिथ्या, रहो राम सरनाई ॥ ३ ॥

सूरदासजी

जीवन समय—अनुमान १५४० से १६२० तक। जनम स्थान—सीही गाँव दिल्ल पास। जाति और आश्रम – सारस्वत ब्राह्मण, भेष। गुरू—वल्लभाचार्य्य महाप्रभु।

यह एक गहरे कृष्णभक्त और साध शिरोमणि १६ वें शतक में हुए जो ३१ बरस गु० तुलसीदासजी के समकालीन थे। इनको उद्धवजी का अवतार कहते हैं और यह साध थे। आठ बरस की अवस्था में अपने माता पिता के साथ मथुरा को गये और वहीं एक साधू के पास रह गये। मथुरा से वह गऊघाट आये जो आगरा और मथुरा के में है, यहाँ वल्लभाचार्य महाप्रभु के शिष्य हुए और उनके साथ श्रीनाथद्वारा को गये

वहीं रह कर अस्सी बरस की अवस्था में शरीर त्याग किया। बीच-बीच में और स्थानों की भी यात्रा करते रहे और एक रामत में गु० तुलसीदास जी से मेला हुआ और कुछ दिनों तक दोनों का संग रहा। कितने लोग इनको जन्म का अंधा बतलाते हैं परन्तु इनकी कविता की अनेक दृष्टान्तों और वर्णनों से जान पड़ता है कि पीछे से उनकी आँखें गईं। कहते हैं कि एक बार एक सुन्दरी स्त्री को देख कर वह मोह गये जिस पर उन्हें ऐसी ग्लानि आई कि अपनी आँखों का दोष समझ कर उनको फोड़ डाला। सूरदास जी ने तीन ग्रन्थ रचे—सूर-सागर, सूरावली और साहित्य लहरी (दृष्टकूट)। कृष्णभक्तों का विश्वास है कि इन्होंने प्रण किया था कि सवालाख पद लिखेंगे परन्तु केवल ७५००० तक बनाये थे कि चोला छूट गया फिर इनके पीछे श्रीकृष्ण ने आप अपने भक्त के बचन का पालन करने को शेष ५०००० बनाकर सवालाख की सख्या पूरी कर दी, इन पदों में सूरश्याम की छाप है। शरीर त्यागते समय आपने प्रेम में गद्गद होकर यह पद कहा था—

"खंजन नैन रूप रस माते।
अतिसै चारु चपल अनियारे, पल पिँजरा न समाते।
चलि चलि जात निकट स्रवनन के, उलटि उलटि ताटंक[1] फँदाते॥
सूरदास अंजन गुन अटके, नातरु अब उड़ि जाते॥"

॥ चितावनी ॥

(१)

रे मन जन्म पदारथ जात।
बिछुरे मिलन बहुरि कब ह्वै है, ज्योँ तरवर के पात॥ १॥
सन्नपात कफ कंठ बिरोधी, रसना टूटी बात।
प्रान लिये जम जात मूढ़ मति, देखत जननी तात॥ २॥
छिन इक माहिँ कोटि जुग बीतत, पीछे नर्क की बात।
यह जग प्रीति सुआ सेमर की, चाखत ही उड़ि जात॥ ३॥
जम के फंद नहीँ पड़ु बौरे, चरनन चित्त लगात।
कहत सूर बिरथा यह देँही, अंतर क्योँ इतरात॥ ४॥

(२)

जा दिन मन पंछी उड़ि जैहैँ।
ता दिन तेरे तन तरुवर के, सबै पात झरि जैहैँ॥ १॥
घर के कहैँ बेग ही काढ़ो, भूत भये कोउ खैहैँ।
जा प्रीतम से प्रीति घनेरी, सोऊ देखि डरैहैँ॥ २॥

(१) तटक=नदी का किनारा; तटाक=तालाब।

कहँ वह ताल कहाँ वह सोभा, देखत धूर उड़ैहैं ।
भाई बंधु कुटुम्ब कबीला, सुमिरि सुमिरि पछितैहैं ॥ ३ ॥
बिना गुपाल कोऊ नहिं अपना, जस कीरति रहि जैहैं ।
सो तो सूर दुर्लभ देवन को, सतसंगति में पैहैं ॥ ४ ॥

(२)

रे मन मूरख जनम गँवायो ॥ टेक ॥
कर अभिमान बिषम सोँ राच्यो, नाम सरन नहिं आयो ॥१॥
यह संसार फूल सेमर को, सुंदर देखि लुभायो ।
चाखन लाग्यो रूई उड़ि गइ, हाथ कछू नहिं आयो ॥२॥
कहा भयो अब के मन सोचे, पहिले नाहिं कमायो ।
सूरदास सतनाम भजन बिनु, सिर धुनि धुनि पछितायो ॥३॥

॥ विरह ॥

(१)

अँखियाँ हरि दरसन की प्यासी ।
देख्यो चाहत कमल नैन को, निसि दिन रहत उदासी ॥ १ ॥
केसर तिलक मोतिन की माला, बृन्दाबन के बासी ।
नेह लगाय त्यागि गये तृन सम, डारि गये गल फाँसी ॥ २ ॥
काहू के मन की को जानत, लोगन के मन हाँसी ।
सूरदास प्रभु तुम्हरे दरस बिन, लेहौं करवत कासी ॥ ३ ॥

(२)

बिन गोपाल बैरन भई कुंजैं ॥ टेक ॥
तब ये लता लगत अति सीतल,
अब भईं बिषम ज्वाल की पुंजैं[१] ॥ १ ॥
बृथा बहत जमुना खग बोलत,
बृथा कमल फूलत अलि[२] गुंजैं ॥ २ ॥

(१) समूह । (२) भँवरा ।

सूरदास प्रभु को मग जोवत,
अँखियाँ भईं अरुन[1] ज्यों गुंजैं[2] ॥ ३ ॥

(३)

निसि दिन बरसत नैन हमारे ।
सदा रहत पावस ऋतु हम पर, जब से स्याम सिधारे ॥ १ ॥
अंजन थिर न रहत अँखियन में, कर कपोल भये कारे ।
कंचुकि[3] पट सूखत नहिं कबहूँ, उर बिच बहत पनारे ॥ २ ॥
आँसू सलिल[4] भये पग थाके, बहे जात सित[5] तारे ।
सूरदास अब डूबत है ब्रज, काहे न लेत उबारे ॥ ३ ॥

(४)

हरि के सँग मैं क्यों न गई री ॥ टेक ॥
हरि सँग जाती कंचन बन आती,
अब माटी के मोल भई री ॥ १ ॥
बरज्यो न कोई इन दूतिन क़ो,
जाती बेर मोहिं रोक लई री ॥ २ ॥
हरि बिछुरन इक मरन हमारा,
नइ दासी सँग प्रीति भई री ॥ ३ ॥
छल गयो कान्ह बहुरि नहिं आयो,
अपने हाथ से मैं बिदा दई री ॥ ४ ॥
सूरदास प्रभु तुम्हरे दरस को,
पिछली प्रीति अब नई भई री ॥ ५ ॥

(५)

राग बिलावल

ऊधो इतनी कहियो जाय ।
अति कृस-गात[6] भई हैं तुम बिन, बहुत दुखारी गाय ॥ १ ॥

---

(१) लाल । (२) घुँघची । (३) चोली । (४) नदी । (५) बँधे या जड़े हुए । (६) दुबला ।

जल समूह बरसत अँखियन तें, हूँकत लै लै नाँव।
जहाँ जहाँ गउ दोहन करते, ढूँढ़त सोइ सोइ ठाँव ॥ २ ॥
परत पछार खाय तेही छिन, अति व्याकुल ह्वै दीन।
मानो सूर काढ़ि डारी हैं, बारि मध्य तें मीन ॥ ३ ॥

(६)

होली

सखी री मोहन मुसकाने, लागी सोई पै जाने ॥टेक॥
रात मोहन सुपने में देखे, सिथिल भये मोरे प्राने।
बिरहा हूक लगी पसुरी में, नैन नीर बरसाने,
सखी जिउरा घबराने ॥ १ ॥
हौँ जो चढ़ी थी अपनी अटा पर, वह झट निकस्यो आने
मंद हँसन मुख देखि कृस्न को, क्या हौँ कहौँ बखाने,
सखी कोइ पीर न जाने ॥ २ ॥
हौँ घायल मिरगी ज्यौँ घूमत, परी धरनि पर आने।
मंत्र जंत्र औषधि घिस लाये, बिसरे सभी[1] उपाव,
सखी कोइ लोग सियाने ॥ ३ ॥
और उपाव नहीं कोउ दूजो, स्याम मिलावो आने।
जानत हैं पिय पीर हमारी, सूरदास के प्रान,
सखी कोइ और न जाने ॥ ४ ॥

(७)

होली

साँवरे सोँ कहियो मोरी ॥ टेक ॥
सीस नवाय चरन गहि लीजो, करि बिनती कर जोरी।
ऐसी चूक कहा परी मो सोँ, प्रीति पाछली तोरी,
सुरति ना लीन्हि बहोरी ॥ १ ॥

(१) सब लोग।

भूषन बसन सभी तजि दीन्हे, खान पान बिसरो री।
बिभुति रमाय जोगिन ह्वै बैठीं, तेरो ही ध्यान धरो री,
अब मैं कैसी करौं री ॥ २ ॥

निसि दिन ब्याकुल फिरत राधिका, बिरह बिथा तन घेरी।
बारि[1] करेजा जारि दियो है, अब मैं कैसी करौं री।
बेग चलि आवो किसोरी ॥ ३ ॥

रोम रोम बिष छाय रहो है, मधु मेरे बैर परो री।
स्याम तुम्हें ढूँढ़त कुंजन में, सीस लटा गहि झोरी,
कहौं हरि हो हरि हो री ॥ ४ ॥

जा दिन गमन कियो मथुरा में, गोपिन सुधि बिसरो री।
हम को जोग भोग कुबजा को, का तकसीर है मोरी,
कहा कछु कीन्ही चोरी ॥ ५ ॥

सूरदास प्रभु सों जा कहियो, आवें अवधि रही थोरी।
प्रान दान दीजो नँद नन्दन, गावत कीरति तोरी।
प्रीति अब कीजे बहोरी ॥ ६ ॥

(८)

कुबजा ने जादू डारा, जिन मोह्यो स्याम हमारो री ॥टेक॥
निसि दिन चलत रहत नहिं राखे, इन नैनन जलधारा री ॥१॥
अब यह प्रान कैसे हम राखैं, बिछुरे प्रान-अधारा री ॥२॥
ऊधो तब तें कल न परत है, जब तें स्याम सिधारा री ॥३॥
अब तो मधुबन जाय ले आवो, सुन्दर नन्द दुलारा री ॥४॥
सूरदास प्रभु आन मिलावो, तन मन धन सब वारा री ॥५॥

॥ प्रेम ॥

(१)

नाहिं न रह्यो मन में ठौर।
नन्द नन्दन अछत[2] कैसे, आनिये उर और ॥ १ ॥

---

(१) बाल अवस्था का अर्थात् कोमल। (२) के होते।

चलत चितवत दिवस जागत, स्वप्न सोवत रात ।
हृदय तें वह स्याम मूरत, छिन न इत उत जात ॥ २ ॥
कहत कथा अनेक ऊधो, लोक लाज दिखाव ।
कहा करौं तन प्रेम पूरन, घट न सिंधु समात ॥ ३ ॥
स्याम गात सरोज आनन[१], ललित गति मृदु हाँस ।
सूर ऐसे रूप कारन, मरत लोचन प्यास ॥ ४ ॥

(२)

या ऋतु रूस रहन की नाहीँ ।
बरसत मेघ मेदिनी के हितु, प्रीतम हरष बढ़ाहीँ ॥ १ ॥
जे बेली ग्रीषम ऋतु जरहीँ, ते तरवर लपटाहीँ ।
उमड़ी नदी प्रेम रस माती, सिंधु मिलन को जाहीँ ॥ २ ॥
यह संपदा दिवस चारक की, सोच समझ मन माहीँ ।
सूर सुनत उठि चली राधिका, दै दूती गल बाहीँ ॥ ३ ॥

(३)

भीँजत कुंजन से दोउ आवत ।
ज्योँ ज्योँ बूँद परत चूनर पर, त्योँ त्योँ हरि उर लावत ॥१॥
अधिक झकोर होत मेघन की, द्रुम तर छिन बिलमावत ।
वे हँसि ओट करत पीतांबर, वे चूनरहिँ उढ़ावत ॥२॥
तैसेहिँ मोर कोकिला बोलत, पवन बीच घन धावत ।
ले मुरली कर मन्द घोर स्वर, राग मलार बजावत ॥३॥
भीँजे राग रागिनी दोऊ, भीँजे तन छबि पावत ।
सूरदास हरि मिलत परस्पर, प्रीति अधिक उपजावत ॥४॥

(४)

आज हौँ एक को ले के टरि हौँ ।
मोहिँ कहा डरपावत हौ प्रभु, अपने पूरे[२] परि लरिहौँ ॥१॥

---

(१) कमल जैसा मुख। (२) पूरा यानी खानदानी, सात पीढ़ी का पतित—देखो आगे की कड़ी।

हौँ तो पतित सात पीढ़ी को, जो जिय ऐसी धरिहौँ ।
हौँ तो फिरि वैसो ही ह्वै हौँ, तुमहिँ बिरद बिनु करिहौँ ॥२॥
अब तो तुम परतीत नसाई, क्योँ मानै मम हियरा ।
सूरदास साची तब थपिहौँ, जब हँसि दै हौ बीरा ॥३॥

(५)

अब तौ प्रगट भई जग जानी ।
वा मोहन सोँ प्रीति निरंतर, क्योँ निबहैगी छानी[१] ॥१॥
कहा करौँ सुन्दर मूरति इन, नैनन माँझि समानी ।
निकसत नाहिँ बहुत पचि हारी, रोम रोम अरुझानी ॥२॥
अब कैसे निर्वारि[२] जात है, मिले दुग्ध ज्योँ पानी ।
सूरदास प्रभु अंतरजामी, उर अंतर की जानी ॥३॥

(६)

नेक नहीँ मन घर सोँ लागत ।
पिता मात गुरुजन परमोधत[३],
नीके बचन बान सम लागत ॥ १ ॥
तिन को धृग धृग कहति मनहिँ मन,
इन कौँ बनै भले ही त्यागत ।
स्याम-बिमुख नर नारि बृथा सब,
कैसे मन इन सोँ अनुरागत ॥ २ ॥
इन को बदन[४] प्रात दरसो जिनि,
बार बार बिधि[५] सोँ यह माँगत ।
यह तन सूर स्याम को अर्प्यो,
नेक टरत नहिँ सोवत जागत ॥ ३ ॥

(१) छिपी हुई । (२) सुलझाई या अलग की जा सकती है । (३) समझाते हैं । (४) मुँह । (५) ब्रह्मा ।

॥ विनय ॥

(१)

तुम मेरी राखो लाज हरी ।

तुम जानत सब अन्तरजामी, करनी कछु न करी ॥ १ ॥

औगुन मोसे बिसरत नाहीं, पल छिन घरी घरी ।

सब प्रपंच की पोट बाँध करि, अपने सीस धरी ॥ २ ॥

दारा सुत धन मोह लिये हैं, सुधि बुधि सब बिसरी ।

सूर पतित को बेग उधारो, अब मेरी नाव भरी ॥ ३ ॥

(२)

हमारे प्रभु औगुन चित न धरो ।

सम-दरसी है नाम तिहारो, अब मोहिं पार करो ॥ १ ॥

इक नदिया इक नार[1] कहावत, मैलो नीर भरो ।

जब दोनों मिलि एक बरन भये, सुरसरि नाम परो ॥ २ ॥

इक लोहा पूजा में राखत, इक घर बधिक परो ।

पारस गुन अवगुन नहिं चितवै, कंचन करत खरो ॥ ३ ॥

यह माया भ्रम जाल निवारो, सूरदास सगरो ।

अबकी बेर मोहिं पार उतारो, नहिं प्रन जात टरो ॥ ४ ॥

(३)

हरि हौं बड़ी बेर को ठाढ़ो ।

जैसे और पतित तुम तारे, तनहीं में लिखि काढ़ो ॥ १ ॥

जुग जुग बिरद यही चलि आयो, टेर कहत हौं ता तें ।

मरियत लाज पंच पतितन में, हौं घट कहो कहाँ तें ॥ २ ॥

कै अब हार मान करि बैठो, कै कर बिरद सही ।

सूर पतित जो झूठ कहत है, देखो खोलि बही ॥ ३ ॥

---

(१) नाला ।

(४)

अबकी राखि लेहु भगवान ।
हम अनाथ बैठी द्रुम डरियाँ, पारधि[1] साध्यो बान ॥ १ ॥
ता के डर निकसन चाहत हौं, उपर रह्यो सचान[2] ।
दोऊ भाँति दुख भयो क्रिपानिधि, कौन उबारै प्रान ॥ २ ॥
सुमिरत ही अहि[3] डस्यो पारधी, लाग्यो तीर सचान[2] ।
सूरदास गुन कहँ लग बरनौं, जै जै कृपानिधान ॥ ३ ॥

(५)

जो जन ऊधो मोहिँ न बिसरै,
तेहि न बिसारौँ छिन एक घरी ॥ टेक ॥
जो मोहिँ भजे भजौँ मैँ वा को, कल न परत मोहिँ एक घरी ।
काटौँ जनम जनम के फंदा, राखौँ सुख आनन्द करी ॥१॥
चतुर सुजान सभा मेँ बैठे, दुःसासन अनरीति करी ।
सुमिरन कियो द्रोपदी जबहीँ, खैँचत चीर उबारि धरी ॥२॥
ध्रुव प्रहलाद रैनि दिन ध्यावैं, प्रगट भये बैकुंठ पुरी ।
भारत मेँ भरुही के अंडा, ता पर गज को घंट ढुरी ॥३॥
अंबरीष गृह आये दुर्बासा, चक्र सुदर्सन छाँहि करी[4] ।
सूर के स्वामी गजराज उबारे, कृपा करो जगदीस हरी ॥४॥

(६)

दीनानाथ अब बार तुम्हारी ।
पतित-उधारन बिरद[5] जानि के, बिगरी लेहु सँवारी ॥ १ ॥
बालापन खेलत ही खोयो, जुवा बिषय रस माते ।
वृद्ध भये सुधि प्रगटी मो को, दुखित पुकारत ता तेँ ॥ २ ॥

---

(१) शिकारी । (२) बाज । (३) साँप । (४) कथा है कि परमभक्त राजा अंबरीख को बिना अपराध दुर्वासा ऋषि ने स्राप देना चाहा जिसपर बिष्णु के सुदर्शन चक्र ने दुर्वासा को खदेरा । मुनि जी भागते-भागते विष्णु की शरण में पहुँचे पर उन्होंने अपने भक्त के अपराधी की रक्षा करने में अपनी असमरत्थता प्रगट की और अंत को राजा अंबरीख के शरणागत होने पर वह बचे । (५) प्रण ।

सुतन तज्यो त्रिय भ्रात तज्यो सब, तन तेँ तुचा भइ न्यारी।
स्रवन न सुनत चरन गति थाकी, नैन बहे जल धारी ॥३॥
पलित[१] केस कफ कण्ठ अब रूँध्यो[२], कल न परै दिन राती।
माया मोह न छाड़ै तृस्ना, यह दोऊ दुखदाती ॥४॥
अब यह ब्यथा दूर करिबे को, और न समरथ कोई।
सूरदास प्रभु करुना-सागर, तुम तेँ होय सो होई ॥५॥

(७)

नाथ मोहिँ अबकी बेर उबारो ॥ टेक ॥
तुम नाथन के नाथ सुवामी, दाता नाम तिहारो।
करमहीन जनम को अंधो, मो तेँ कौन नकारो ॥१॥
तीन लोक के तुम प्रति-पालक, मैँ तो दास तिहारो।
तारी जाति कुजाति प्रभू जी, मो पर किरपा धारो ॥२॥
पतितन मेँ इक नायक कहिये, नीचन मेँ सरदारो।
कोटि पापी इक पासँग मेरे, अजामिल कौन बिचारो ॥३॥
नाठो धरम नाम सुनि मेरो, नरक कियो हठ तारो।[३]
मो को ठौर नहीँ अब कोऊ, अपनो बिरद सम्हारो ॥४॥
छुद्र पतित तुम तारे रमापति, अब न करो जिय गारो।
सूरदास साचो तब माने, जो ह्वै मम निस्तारो ॥५॥

(८)

चूक परी मो तेँ, मैँ जानी, मिलैँ स्याम बकसाऊँ री।
हा हा करि दसननि तृन धरि धरि, लोचन जलनि ढराऊँ री[४] ॥१॥
चरन गहौँ गाढ़े करि कर सौँ, पुनि पुनि सीस छुआऊँ री।
मुख चितऊँ फिरि धरनि निहारौँ, ऐसे रुचि उपजाऊँ री ॥२॥

---

(१) पके। (२) घरघराता। (३) धर्मराय ने मेरा नाम सुनकर मुझे ग्रहण करने से इनकार किया और नर्क बोला कि हमारे यहाँ रहने के यह योग्य नहीं है इस को तार कर हटाओ। (४) दाँतों के नीचे तिनका धर कर (जोकि निशान आधीनता का है) आँखों से जल धारा बहाती हूँ।

मिलौं धाय अकुलाय भुजनि भरि, उर की तपनि जनाऊँ री ।
सूरस्याम अपराध छमहु अब, यह कहि कहि जु सुनाऊँ री ॥३॥

(९)

माधो जू जो जन तें बिगरै ।
सुन कृपालु करुनामय कबहूँ, प्रभु नहिँ चित्त धरै ॥ १ ॥
ज्यौं सिसु[1] जननि[2] जठर[3] अंतरगत, सत अपराध करै ।
तऊ तनय[4] तनु तोष पोष चित, बिहँसत अंक भरै ॥ २ ॥
जदपि बिटप[5] जर हतन[6] हेत करि, कर कुठार पकरै ।
तदपि सुभाव सुसील सुसीतल, रिपु तनु ताप हरै ॥ ३ ॥
कारन करन अनन्त अजित कहँ, केहिँ बिधि चरन परै ।
यह कलिकाल चलत नहिँ मो पै, सूर सरन उबरै ॥ ४ ॥

(१०)

अब हौं नाच्यो बहुत गोपाल ॥ टेक ॥
काम क्रोध को पहिरि चोलना, कंठ बिषय की माल ।
महा मोह के नूपुर बाजत, निन्दा सबद रसाल ॥१॥
तृस्ना नाद करत घट भीतर, नाना बिधि की ताल ।
माया को कटि[7] फेटा बाँध्यो, लोभ तिलक दियो भाल[8] ॥२॥
कोटिक कला नाच दिखराई, जल थल सुधि नहिँ काल ।
सूरदास की सभी अबिद्या, दूर करो नँदलाल ॥३॥

(११)

मो सम कौन कुटिल खल कामी ।
जिन तनु दियो ताहि बिसरायो, ऐसो निमक-हरामी ॥१॥
भरि भरि उदर बिषय को धावौं, जैसे सूकर ग्रामी[9] ।
हरि-जन छाड़ हरी-बिमुखन की, निसि दिन करत गुलामी ॥२॥
पापी कौन बड़ो है मो तेँ, सब पतितन में नामी ।
सूर पतित को ठौर कहाँ है, सुनिये श्रीपति[10] स्वामी ॥३॥

(१) बालक। (२) माता। (३) पेट। (४) बेटा। (५) पेड़। (६) काटने के लिये। (७) कमर। (८) सिर। (९) गाँव का सुअर। (१०) लक्ष्मी के पति अर्थात् विष्णु।

॥ उपदेश ॥

(१)

छाड़ु मन हरि बिमुखन को संग ।
कहा भयो पय पान कराये, बिष नहिँ तजत भुवंग ॥१॥
जा के संग कुबुद्धी उपजै, परत भजन में भंग ।
काम क्रोध मद लोभ मोह में, निस दिन रहत उमंग ॥२॥
कागहि कहा कपूर खवाये, स्वान न्हवाये गंग ।
खर को कहा अरगजा लेपन, मरकट भूषन अंग ॥३॥
पाहन पतित बान नहिँ बेधत, रीतो[1] करत निषंग[2] ।
सूरदास खल कारी कामरि, चढ़त न दूजो रंग ॥४॥

(२)

सब दिन होत न एक समान ॥ टेक ॥
इक दिन राजा हरीचंद गृह, संपति मेरु समान ।
इक दिन जाय स्वपच गृह सेवत, अंबर हरत मसान ॥ १ ॥
इन दिन दूलह बनत बराती, चहुँ दिसि गड़त निसान ।
इक दिन डेरा होत जँगल में, कर सूधे पग तान ॥ २ ॥
इक दिन सीता रुदन करत है, महा बिषम उद्यान[3] ।
इक दिन रामचन्द्र मिलि दोऊ, बिचरत पुष्प बिमान ॥ ३ ॥
इक दिन राजा राज जुधिष्ठिर, अनुचर श्रीभगवान ।
इक दिन द्रोपदी नग्न होत है, चीर दुसासन तान ॥ ४ ॥
प्रगटत है पूरब की करनी, तजु मन सोच अजान ।
सूरदास गुन कहँ लग बरनैं, बिधि के अंक[4] प्रमान ॥ ५ ॥

---

(१) खाली । (२) तरकश । (३) भारी जगल में । (४) ब्रह्मा का कर्म लेख ।

स्वामी हरिदास

यह एक भारी कृष्ण भक्त हुए जो सोलहवें शतक के पिछले हिस्से से सत्रहवें शतक के अगले हिस्से तक विराजमान थे। ललिता सखी के अवतार समझे जाते हैं। गान विद्या में यह बड़े निपुन प्रसिद्ध तानसेन के गुरू थे। अकबर बादशाह जो इन का समकालीन था एक बार तानसेन के साथ इनके दर्शन को आया था। इनके कई एक ग्रंथ हैं जिन में से भरथरी वैराग्य और रस के पद प्रसिद्ध हैं। भरथरी-वैराग्य संवत् १६०७ में और पद १६१७ में बनाये गये।

(१)

गायो न गोपाल मन लाइ के निवारि लाज,
पायो न प्रसाद साधु मण्डली में जाइ के ॥ १ ॥
धायो न धमक वृन्दाबिपिन की कुंजन में,
रह्यो न सरन जाइ बिट्ठलेसराइ के ॥ २ ॥
नाथ जू न देखि छक्यो छिनहूँ छबीली छाँव,
सिंह पौँरि पर्‌यो नाहिँ सीसहूँ नवाइ के ॥ ३ ॥
कहै हरिदास तोहिँ लाज हू न आवै नेक,
जनम गँवाये ना कमायो कछु आइ के ॥ ४ ॥

(२)

गहौ मन, सब रस को रस सार ॥ टेक ॥
लोक बेद कुल करमै तजिये, भजिये नित्य बिहार ॥ १ ॥
गृह कामिनि कंचन धन त्यागौ, सुमिरौ स्याम उदार ॥ २ ॥
गहि हरिदास रीति सन्तन की, गादी को अधिकार ॥ ३ ॥

मीरा बाई

जीवन समय—१५७३ से १६३० तक। जन्म स्थान—मौ० कुकड़ी (मेरता, मारवाड़) जाति और आश्रम—राठोर, गृहस्थ। गुरू—रैदासजी।

इनकी अनूठी भक्ति जक्त-प्रसिद्ध है। यह जोधपुर के राठोर राव रंजीतसिंह की एकलौती बेटी थीं और उदयपुर के युवराज कुँवर भोजराज से व्याही गईं जो राजगद्दी पर बैठने के पहिले ही मर गये। पति के देहान्त होने पर मीरा बाई के देवर ने जो गद्दी पर बैठे उनको निरंतर भक्ति और साधु सेवा करने के कारन बहुत सताया यहाँ तक कि बाई जी को घर से भाग जाना पड़ा। कहते हैं कि मीरा बाई अंत समय द्वारका में रनछोर जी की मूर्त्ति में समा कर अलोप हो गईं।

॥ चितावनी ॥

(१)

मनखा[1] जनम पदारथ पायो, ऐसो बहुर न आती ॥ टेक ॥
अब के मोसर[2] ज्ञान बिचारो, राम राम मुख गाती ।
सतगुर मिलिया सुंज[3] पिछानी, ऐसा ब्रह्म मैं पाती ॥१॥
सगुरा सूरा अमृत पीवे, निगुरा प्यासा जाती ।
मगन भया मेरा मन सुख में, गोबिँद का गुन गाती ॥२॥
साहिब पाया आदि अनादी, नातर[4] भव में जाती ।
मीरा कहे इक आस आप की, औराँ[5] सूँ सकुचाती ॥३॥

(२)

भज मन चरन कँवल अबिनासी ॥ टेक ॥
जेताइ दीसे धरनि गगन बिच, तेताइ सब उठि जासी ।
कहा भयो तीरथ ब्रत कीन्हे, कहा लिये करवत कासी ॥ १ ॥
इस देही का गरब न करना, माटी में मिल जासी ।
यो संसार चहर[6] की बाजी, साँझ पड्याँ उठि जासी ॥ २ ॥
कहा भयो है भगवा पहर्‌याँ, घर तज भये सन्यासी ।
जोगी होय जुगति नहिँ जानी, उलटि जनम फिर आसी ॥ ३ ॥
अरज करौं अबला कर जोरे, स्याम तुम्हारी दासी ।
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, काटो जम की फाँसी ॥ ४ ॥

॥ बिरह ॥

(१)

हे री मैं तो प्रेम दिवानी, मेरा दरद न जाने कोय ॥टेक॥
सूली ऊपर सेज हमारी, किस बिध सोना होय ।
गगन मँडल पै सेज पिया की, किस बिध मिलना होय ॥१॥
घायल की गति घायल जानै, की जिन लाई होय ।
जौहरी की गत जौहरी जानै, की जिन जौहर होय ॥२॥

---

(१) मनुष्य का । (२) अवसर । (३) सूझ । (४) नहीं तो । (५) दूसरों । (६) चिड़ियों का सा तमाशा जो साँझ होते ही बसेरे को उड़ जाती हैं ।

दरद की मारी बन बन डोलूँ, बैद मिल्या नहिँ कोय ।
मीरा की प्रभु पीर मिटैगी, जब बैद सँवलिया होय ॥३॥

(२)

नीँदलड़ी नहिँ आवै सारी रात, किस बिध होइ परभात[१] ॥टेक॥
चमक[२] उठी सुपने सुध भूली, चंद्र कला न सुहात ।
तलफ तलफ जिय जाय हमारो, कब रे मिलै दीना-नाथ ॥१॥
भइ हूँ दिवानी तन सुध भूली, कोई न जानी म्हाँरी बात ।
मीरा कहै बीती सोइ जानै, मरन जीवन उन हाथ ॥२॥

(३)

नैना म्हारे बान पड़ी, साईँ मोहिँ दरस दिखाई ॥टेक॥
चित्त चढ़ी मेरे माधुरि मूरत, उर बिच आन अड़ी ॥ १ ॥
कैसे प्रान पिया बिनु राखूँ, जीवन मूर जड़ी[३] ॥ २ ॥
कब की ठाढ़ी पंथ निहारूँ, अपने भवन खड़ी ॥ ३ ॥
मीरा प्रभु के हाथ बिकानी, लोक कहे बिगड़ी ॥ ४ ॥

(४)

माई म्हाँरी हरि न बूझी बात ।
पिंड मेँ से प्राण पापी, निकस क्यूँ नहिँ जात ॥ १ ॥
रैन अँधेरी बिरह घेरी, तारा गिणत निस जात ।
ले कटारी कंठ चीरूँ, करूँगी अपघात ॥ २ ॥
पाट[४] न खोल्या मुखाँ न बोल्या, साँझ लग परभात ।
अबोलना मेँ अवध बीती, काहे की कुसलात ॥ ३ ॥
सुपन मेँ हरि दरस दीन्हों, मैँ न जाण्यो हरि जात ।
नैन म्हाँरा उघड़[५] आया, रही मन पछतात ॥ ४ ॥
आवन आवन होय रह्यो रे, नहिँ आवन की बात ।
मीरा व्याकुल बिरहनी रे, बाल ज्योँ बिललात ॥ ५ ॥

---

(१) सवेरा । (२) चौंक । (३) बूटी । (४) परदा । (५) खुल गया ।

(५)

घड़ी एक नहिँ आवड़े[१], तुम दरसन बिन मोय।
तुम ही मेरे प्राण जी, का सूँ जीवन होय ॥ १ ॥
धान[२] न भावे नींद न आवे, बिरह सतावे मोय।
घायल सी घूमत फिरूँ रे, मेरा दरद न जाने कोय ॥ २ ॥
दिवस तो खाय गमाइयो रे, रैन गमाई सोय।
प्राण गमायो झूरताँ[३] रे, नैन गमाई रोय ॥ ३ ॥
जो मैं ऐसा जानती रे, प्रीत किये दुख होय।
नगर ढँढोरा फेरती रे, प्रीत करो मत कोय ॥ ४ ॥
पंथ निहारूँ डगर बुहारूँ, ऊभी[४] मारग जोय।
मीरा के प्रभु कब रे मिलोगे, तुम मिलियाँ सुख होय ॥ ५ ॥

(६)

मैं अपने सैयाँ सँग साची।
अब काहे की लाज सजनी, प्रगट ह्वै नाची ॥ १ ॥
दिवस भूख न चैन कबहिन, नींद निसु नासी।
बेध वार को पार होइगो, ज्ञान गुह[५] गाँसी ॥ २ ॥
कुल कुटुँब सब आनि बैठे, जैसे मधु मासी[६]।
दास मीरा लाल गिरधर, मिटी जग हाँसी ॥ ३ ॥

(७)

नातो[७] नाम को मो सूँ, तनक न तोड़्यो जाय ॥ टेक ॥
पानाँ ज्यूँ पीली पड़ी रे, लोग कहे पिँड रोग।
छाने[८] लाँघन[९] मैं किया रे, राम मिलन के जोग ॥ १ ॥
बाबल[१०] बैद बुलाइया रे, पकड़ दिखाई म्हाँरी बाँह[११]।
मूरख बैद मरम नहिँ जाने, करक[१२] कलेजे माँह ॥ २ ॥

---

(१) सुहावै। (२) अन्न। (३) बिलक बिलक कर। (४) खड़ी। (५) गुप्त। (६) शहद की मक्खी। (७) रिश्ता। (८) छिप कर। (९) फ़ाक़ा। (१०) बाप। (११) नाड़ी। (१२) दर्द।

जाओ बैद घर आपने रे, म्हाँरो नाँव न लेय।
मैं तो दाधी[1] बिरह की रे, काहे कूँ औषद[2] देय ॥ ३ ॥
माँस गलि गलि छीजिया रे, करक रह्या गल आहि[3]।
आँगुलियाँ की मूँदड़ी, म्हाँरे आवन लागी बाँहि ॥ ४ ॥
रहु रहु पापी पपीहा रे, पिव को नाम न लेय।
जे कोइ बिरहन साम्हले[4], तो पिव कारन जिव देय ॥ ५ ॥
खिन मन्दिर खिन आँगने रे, खिन खिन ठाढ़ी होय।
घायल ज्यूँ घूमूँ खड़ी, म्हाँरी बिथा न बूझै कोय ॥ ६ ॥
काढ़ि कलेजो मैं धरूँ रे, कौवा तू ले जाय।
ज्याँ देसाँ म्हाँरो पिव बसै रे, वे देखत तू खाय ॥ ७ ॥
म्हाँरे नातो नाम को रे, और न नातो कोय।
मीरा ब्याकुल बिरहनी रे, पिय दरसन दीज्यो मोय ॥ ८ ॥

(८)

दरस बिन दूखन लागे नैन ॥ टेक ॥
जब से तुम बिछुरे मेरे प्रभु जी, कबहुँ न पायो चैन ॥ १ ॥
सबद सुनत मेरी छतिया कंपै, मीठे लगे तुम बैन ॥ २ ॥
एक टकटकी पंथ निहारूँ, भई छमासी रैन ॥ ३ ॥
बिरह बिथा का सूँ कहूँ सजनी, बह गइ करवत ऐन ॥ ४ ॥
मीरा के प्रभु कब रे मिलोगे, दुख मेटन सुख देन ॥ ५ ॥

(९)

मतवारो बादल आयो रे,
हरि को सँदेसो कुछ नहिं लायो रे ॥ टेक ॥
दादुर मोर पपीहा बोले, कोयल सबद सुनायो रे।
कारी अँधियारी बिजली चमके, बिरहन अति डरपायो रे ॥१॥
गाजे बाजे पवन मधुरिया, मेहा अति झड़ लायो रे।
फूँकै[5] काली नाग बिरह की जारी, मीरा मन हरि भायो रे ॥२॥

(१) जली हुई। (२) दवा। (३) हाड़। (४) सुन पावे। (५) साँप फुफकार मारता है।

(१०)

॥ होली ॥

रमैया बिन नींद न आवे ।
नींद न आवे बिरह सतावे, प्रेम की आँच ढुलावे[1] ॥ टेक ॥
बिन पिया जोत मँदिर अँधियारो, दीपक दाय[2] न आवे ।
पिया बिना मेरी सेज अलूनी[3], जागत रैन बिहावे[4],
पिया कब रे घर आवे ॥ १ ॥
दादुर मोर पपीहा बोले, कोयल सबद सुनावे ।
घुमँड़ घटा ऊलर[5] होइ आई, दामिनि दमक डरावे,
नैन भर लावे ॥ २ ॥
कहा करूँ कित जाऊँ मोरी सजनी, बेदन कून बुतावे[6] ।
बिरह नागिन मोरी काया डसी है, लहर लहर जिव जावे,
जड़ी घस लावे ॥ ३ ॥
को है सखी सहेली सजनी, पिया कूँ आन मिलावे ।
मीरा कूँ प्रभु कब रे मिलोगे, मनमोहन मोहिं भावे,
कबै हँस करि बतलावे[7] ॥ ४ ॥

(११)

॥ होली ॥

होली पिया बिन मोहिं न भावै, घर आँगन न सुहावै ॥टेक॥
दीपक जोय कहा करूँ हेली, पिय परदेश रहावे ।
सूनो सेज जहर ज्यूँ लागे, सुसक सुसक जिय जावे,
नींद नैन नहिं आवे ॥ १ ॥
कब की ठाढ़ी मैं मग जोऊँ, निस दिन बिरह सतावे ।
कहा कहूँ कछु कहत न आवे, हिवड़ो अति अकुलावे ।
पिया कब दरस दिखावे ॥ २ ॥

---

(१) सुलगाना । (२) पसन्द । (३) फीकी (४) बीते । (५) चढना । (६) बुझावे, शांत करे । (७) बोले ।

ऐसा है कोइ परम सनेही, तुरत सँदेसो लावे।
वा बिरियाँ कब होसी मो कूँ, हँस करि निकट बुलावे,
मीरा मिल होरी गावै ॥ ३ ॥

॥ प्रेम ॥

(१)

आली साँवरो कि दृष्टि, मानो प्रेम की कटारी है ॥ टेक ॥
लागत बेहाल भई, तन की सुधि बुद्धि गई।
तन मन व्यापो प्रेम मानो मतवारी है ॥ १ ॥
सखियाँ मिलि दोइ चारी, बावरी सी भई न्यारी।
हौं[1] तो वा को नीके जानौं, कुंज को बिहारी है ॥ २ ॥
चंद को चकोर चाहै, दीपक पतंग दाहै।
जल बिना मीन जैसे, तैसे प्रीत प्यारी है ॥ ३ ॥
बिनती करौं हे स्याम, लागौं मैं तुम्हारे पाम[2]।
मीरा प्रभु ऐसे जानो, दासी तुम्हारी है ॥ ४ ॥

(२)

जावो हरि निरमोहड़ा[3] रे, जानी थाँरी प्रीत ॥ टेक ॥
लगन लगी जब और प्रीत छी[4], अब कुछ अँवली[5] रीत ॥१॥
अमृत पाय बिषै क्यूँ दीजे, कौन गाँव की रीत ॥२॥
मीरा कहे प्रभु गिरधर नागर, आप गरज के मीत ॥३॥

(३)

जब से मोहिं नंद नँदन दृष्टि पड़्यो माई।
तब से परलोक लोक कछू ना सुहाई ॥ १ ॥
मोरन की चंद्र कला सीस मुकुट सोहै।
केसर को तिलक भाल तीन लोक मोहै ॥ २ ॥
कुंडल की अलक झलक कपोलन पर छाई।
मनो[6] मीन सरवर तजि मकर[7] मिलन आई ॥ ३ ॥

(१) मैं। (२) पाँव। (३) निर्मोही। (४) थी। (५) उलटा। (६) मानो, गोया कि। (७) मगर।

कुटिल भृकुटि[१] तिलक भाल चितवन में टौना।
खंजन[२] अरु मधुप[३] मीन भूले मृग छौना[४] ॥ ४ ॥
सुन्दर अति नासिका सुग्रीव[५] तीन रेखा।
नटवर[६] प्रभु भेष धरे रूप अति बिसेषा ॥ ५ ॥
अधर बिंब अरुन नैन मधुर मंद हाँसी।
दसन[७] दमक दाड़िम[८] दुति[९] चमके चपला[१०] सी ॥ ६ ॥
छुद्र घंट किंकिनी[११] अनूप धुनि सुहाई।
गिरधर के अंग अंग मीरा बलि जाई ॥ ७ ॥

(४)

या मोहन के मैं रूप लुभानी ॥ टेक ॥
हाट बाट मोहिं रोकत टोकत,
या रसिया की मैं सार न जानी ॥ १ ॥
सुन्दर बदन कमल-दल लोचन,
बाँकी चितवन मंद मुसकानी ॥ २ ॥
जमुना के नीरे तीरे धेनु चरावत,
बंसी में गावत मीठी बानी ॥ ३ ॥
तन मन धन गिरधर पर वारूँ,
चरन कमल मीरा लपटानी ॥ ४ ॥

(५)

निपट बंकट[१२] छबि, अटके मेरे नैना ॥ टेक ॥
देखत रूप मदन मोहन को, पियत पियूष[१३] न मटके[१४] ॥१॥
बारिज[१५] भँवाँ अलक[१६] टेढ़ी मनो, अति सुगंधि रस अटके ॥२॥

(१) भौं। (२) खेड़रिच चिड़िया। (३) भौंरा। (४) बच्चा। (५) सुन्दर गला। (६) नट के समान काछनी काछे। (७) दाँत। (८) अनार। (९) प्रकाश। (१०) बिजली। (११) छोटी छोटी घंटियाँ जो करधनी में पोह देते हैं। (१२) बाँकी। (१३) अमृत। (१४) मुड़े। (१५) कँवल। (१६) बाल की लट।

टेढ़ी कटि[1] टेढ़ी कर मुरली, टेढ़ी पाग लर[2] लटके ॥३॥
मीरा प्रभु के रूप लुभानी, गिरधर नागर नट के ॥४॥

(६)

बरसे बदरिया सावन की, सावन की मन भावन की ॥टेक॥
सावन में उमग्यो मेरो मनवा, भनक सुनी हरि आवन की ॥१॥
उमड़ घुमड़ चहुँदिस से आयो, दामिन दमके झरलावन की ॥२॥
नन्ही नन्ही बूँदन मेहा बरसे, सीतल पवन सुहावन की ॥३॥
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, आनँद मंगल गावन की ॥४॥

॥ विनय ॥

(१)

पिया मोहिं आरत तेरी हो ।
आरत तेरे नाम की मोहिं साँझ सबेरी हो ॥ १ ॥
या तन को दियना करौं मनसा करौं बाती हो ।
तेल भरावौं प्रेम का बारौं दिन राती हो ॥ २ ॥
पटियाँ पारौं गुर ज्ञान की सुमति माँग सवारौं हो ।
पिया तेरे कारने धन जोबन वारौं हो ॥ ३ ॥
सेजड़िया बहु-रंगिया चंगा फूल बिछाया हो ।
रैन गई तारा गिणत प्रभु अजहुँ न आया हो ॥ ४ ॥
सावन भादौं ऊमड़ो बरखा रितु छाई हो ।
भौंह घटा घन घेरि के नैनन झरि लाई हो ॥ ५ ॥
मात पिता तुम को दियो तुम हीं भल जानो हो[3] ।
तुम तजि और भतार को मन में नहिं आनौं हो ॥ ६ ॥
तुम हो पूरे साइयाँ पूरन पद दीजै हो ।
मीरा ब्याकुल बिरहनी अपनी करि लीजै हो ॥ ७ ॥

---

(१) कमर। (२) पेंच। (३) देखो जीवन-चरित्र मीरा बाई का उनकी शब्दावली के ग्रंथ में।

(२)

तुम पलक उघाड़ो दीनानाथ, हूँ हाजिर नाजिर कब की खड़ी ॥टेक॥
साऊ[1] थे दुसमन होइ लागे, सब ने लगूँ कड़ी[2]।
तुम बिन साऊ कोऊ नहीं है, डिगी[3] नाव मेरी समँद अड़ी ॥१॥
दिन नहिं चैन रात नहिं निदरा, सूखूँ खड़ी खड़ी।
बान बिरह के लगे हिये में, भूलूँ न एक घड़ी ॥२॥
पत्थर की तो अहिल्या तारी, बन के बीच पड़ी।
कहा बोझ मीरा में कहिये, सौ ऊपर एक घड़ी[4] ॥३॥
गुरु रैदास मिले मोहिं पूरे, धुर से कलम भिड़ी।
सतगुरु सैन दई जब आ के, जोत में जोत रली ॥४॥

॥ उपदेश ॥

राम नाम रस पीजे मनुआँ, राम नाम रस पीजे ॥ टेक ॥
तज कुसंग सतसंग बैठ नित, हरि चरचा सुण लीजे ॥ १ ॥
काम क्रोध मद लोभ मोह कूँ, चित से बहाय दीजे ॥ २ ॥
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, ताहि के रँग में भींजे ॥ ३ ॥

नरसी मेहता जी

जीवन समय—सत्रहवाँ शतक। रचना काल—१६३०। जन्म स्थान—जूनागढ़ [गुजरात] जाति और आश्रम—गुजराती ब्राह्मण, गृहस्थ।

इन के मा बाप बचपन ही में मर गये थे इस लिये भाई भावज के साथ रहने लगे। फिर भावज के कुटिल बचन के कारण उसका घर भी छोड़ दिया और एक शिवाले में सात दिन तक भूखे प्यासे पड़े रहे; शिवजी की कृपा से बृन्दाबन आकर साक्षात दर्शन श्रीकृष्ण का पाया। बृन्दाबन से जूनागढ़ लौट आये और वहाँ एक घर अलग बनाकर अपना व्याह कर लिया जिस से एक बेटा और दो बेटी उत्पन्न हुए। इन की ईश्वर-भक्ति जगत विख्यात है और इन की हुंडी की कथा जो साधुओं की एक जमात के आग्रह बस इन्हों ने साँवल साह पर द्वारका को लिख दी और जिसका दाम श्रीकृष्ण ने आप साहूकार का रूप धारण करके चुकाया भक्तमाल में दी है।

---

(१) रक्षक। (२) कड़वी। (३) झकोला खाती है। (४) पसेरी।

(१)

म्हाँने पार उतारो जी, थाँने निज भक्तन की आन ।
हमने अवगुन नेक न चितवो, अपनो ही करि जान ॥ १ ॥
काम क्रोध मद लोभ मोह बस, भूल्यो पद निर्बान ।
अब तो सरन गही चरनन की, मत दीजो मोहिं जान ॥ २ ॥
लख चौरासी भरमत भरमत, नेक न परी पिछान ।
भवसागर में बह्यो जात हौं, रखिये स्याम सुजान ॥ ३ ॥
हौं तो कुटिल अधम अपराधी, नहिं सुमिर्यो तेरो नाम ।
नरसी के प्रभु अधम-उधारन, गावत बेद पुरान ॥ ४ ॥

(२)

कहाँ लगाई एती देर, अरे अरे साँवरे ॥ टेक ॥
हौं गुजराती सिव को उपासी, पूजौं साँझ सबेर ॥१॥
भक्ति मर्म को सार न जानौं, हाँसी कराई मेरी ढेर ॥२॥
ऊँचे चढ़ि के टेर सुनाऊँ, अन सुनिये म्हारी टेर ॥३॥
क्या कहिं काज सँवारे भक्तन के, क्या निद्रा ने लिये घेर ॥४॥
नरसी के प्रभु अधम-उधारन, राखिये अब की बेर ॥५॥

गुसाईं तुलसीदासजी

[सक्षिप्त जीवन चरित्र के लिये देखो संतवानी संग्रह, भाग १ पृष्ठ ७१]

॥ प्रेम ॥

ये दोउ झूलत रंग हिंडोरें ।
दसरथ-सुत अरु जनक-नंदनी, चितवन में चित चोरें ॥१॥
नान्ही नान्ही बूँद पवन पुरवैया, बरसत थोरें थोरें ।
हरि हरि भूमि घटा झुकि आईं, सरजू लेत हिलोरें ॥२॥
हय दल पैदल गज दल रथ दल, कोटि बने चहुँ ओरें ।
उपबन माहिं मधुर सुर बोलें, कोकिल मोर चकोरें ॥३॥

रत्न जड़ित को बन्यो हिँडोरा, रेसम लागी डोरैं ।
अरस परस दोउ भूलत्त झुलावें, इक साँवर इक गोरैं ॥ ४ ॥
वा में बिमल सखी उरझानी, अपनी अपनी ओरैं ।
तुलसिदास अनुकूल जानि के, सियाजी हँसीं मुख मोरैं ॥५॥

॥ विनय ।

(१)

काहे तें हरि मोहिँ बिसारो ।
जानत निज महिमा मेरे अघ, तदपि न नाथ सम्हारो ॥१॥
पतित-पुनीत दीनहित, असरण-सरण कहत स्रुति चारो ।
हौं नहिँ अधम सभीत दीन, किधौं वेदन मृषा पुकारो ॥२॥
खग गणिका गज ब्याध पाँति जहँ, तहँ हौं हूँ बैठारो ।
अब केहि लाज कृपानिधान, परसत पनवारो फारो ॥३॥
मसक बिरंचि बिरंचि मसक सम, करहु प्रभाव तुम्हारो ।
यह सामर्थ्य अछत मोहिँ त्यागहु, नाथ तहाँ कछु चारो ॥४॥
जनहि न नरक परत मोकहँ डर, यद्यपि हौं अति हारो ।
यह बड़ि त्रास दास तुलसी, प्रभु नामहुँ पाप न जारो ॥५॥

शब्द १ विनय के अर्थ—हे हरि मुझको क्यों भूले जाते हो, तुम तो अपनी बड़ाई और मेरे दोष दोनों को जानते हो फिर मुझे क्यों नहीं सम्हालते। चारो वेद आप के पतित-पावन, दुखिया के हितकारी, असरन की सरन होने की महिमा गाते हैं फिर जो आप मुझ सरीखे अधम, संसारी भय मानने वाले और अबल दुखिया के तारने में देर लगाते हो तो सिवाय इस के क्या कहा जाय कि या तो मेरे समस्त औगुनों में निपुन होने में कसर है या आपकी महिमा वेदों ने मिथ्या भाखी है। आपके प्रन के सहारे मैं खग [जटायु], गणिका [वेश्या], गज, और व्याधा जिस ने श्रीकृष्ण के चरन में तीर मारा था ऐसे अधमों की पाँति में बैठाया गया तो फिर पंगत में बैठालने के पीछे कौन लाज आप को लगती है कि परोसने के समय मेरी पत्तल को फाड़ते हो। आपका सुभाव है कि छिन में मच्छड़ को ब्रह्मा और ब्रह्मा को मच्छड़ बना देते हो फिर ऐसे समरथ होकर जो मुझे त्यागते हो तो मेरा क्या बस है। सो यद्यपि मैं जनम भर पाप करते करते अति थक गया हूँ फिर भी मुझे नर्क में पड़ने का डर नहीं है पर यह चिन्ता अवश्य है कि द्रोही हँसेंगे कि नाम भी पापों को नहीं काट सका।

(२)

केसव कारन कवन गुसाईं ।
जेहि अपराध असाधु जानि मोहिं, तज्यो अज्ञ[1] की नाईं ॥१॥
परम पुनीत सन्त कोमल चित, तिन्हहिं तुमहिं बनि आई ।
तौ बिप्र ब्याध गनिकहिं कस तार्‌यो, का कछु रही सगाई[2] ॥२॥
काल कर्म गति अगति जीव की, सब हरि हाथ तुम्हारे ।
सोइ कछु करहु हरहु ममता मम, फिरहु[3] न तुमहिं बिसारे ॥३॥
जौं तुम तजहु भजौं न आन प्रभु, यह प्रमान पन मोरे ।
मन बच कर्म नरक सुरपुर जहँ, तहँ रघुबीर निहोरे[4] ॥४॥
जद्यपि नाथ उचित न होत अस, प्रभु सों करौं ढिठाई ।
तुलसिदास सीदत[5] निसि दिन, देखत तुम्हारि निठुराई ॥५॥

(३)

माधव अब न द्रवहु[6] केहिं लेखे ।
प्रनतपाल[7] पन तोर, मोर पन जियउँ कमल पद देखे ॥१॥
जब लगि मैं न दीन दयाल तैं, मैं न दास तैं स्वामी ।
तब लगि जो दुख सहेउँ कहेउँ नहिं, जद्यपि अन्तर्जामी ॥२॥
तैं उदार मैं कृपन पतित मैं, तैं पुनीत स्तुति गावै ।
बहुत नात रघुनाथ तोहिं मोहिं, अब न तजे बनि आवै ॥३॥
जनक जननि गुरु बन्धु सुहृद पति, सब प्रकार हितकारी ।
द्वैत रूप तम कूप परौं नहिं, अस कछु जतन बिचारी[8] ॥४॥

---

(१) अनजान बन कर। (२) जो तुम केवल पवित्र सज्जनों को ही ग्रहन करते होते तो अजामिल विप्र, व्याध, गनिका इत्यादि दुर्जन क्या तुम्हारे कोई नातेदार थे जो उनको तारा। (३) फिर भी। (४) जो तुम मुझे त्याग दोगे तौ भी यह मेरा प्रन है कि दूसरे स्वामी को न भजूँगा, चाहे मुझे नर्क में डाल देव चाहे देव लोक में पहुँचाओ मैं मनसा वाचा कर्मना तुम्हारा ही जस गाऊँगा। (५) दुख पाता है। (६) पसीजते, दया करते। (७) जो एक बार भी प्रनाम करै तिस का पालन करनेहारा। (८) पिता, माता, गुरु, भाई, मित्र, स्वामी, सब प्रकार तुम्हीं मेरे हितकारी हो सो ऐसा कुछ जतन करो कि द्वैत रूप अर्थात् हौं मैं के अंध-कूप में न गिर जाऊँ।

सुनु अदभ्र करुना बारिज-लोचन, मोचन भय भारी।
तुलसिदास प्रभु तव प्रकास बिनु, संसय टरत न टारी[1] ॥५॥

(४)

तू दयाल दीन हौं, तू दानि हौं भिखारी।
हौं प्रसिद्ध पातकी, तू पाप-पुंज हारी ॥ १ ॥
नाथ तू अनाथ को, अनाथ कौन मो सों।
मो समान आरत नहिं, आरत-हर तो सों ॥ २ ॥
ब्रह्म तू हौं जीव हौं, तू ठाकुर हौं चेरो।
तात मात गुरु सखा तू, सब बिधि हित मेरो ॥ ३ ॥
तोहि मोहिं नातो अनेक, मानिये जो भावै।
ज्यौं त्यौं तुलसी, कृपालु चरन सरन पावै ॥ ४ ॥

(५)

हरि जू मेरो मन हठ न तजै।
निसि दिन नाथ देउँ सिख बहु बिधि, करत सुभाव निजै ॥१॥
ज्यौं जुवती अनुभवत प्रसव[2] अति, दारुन दुख उपजै।
ह्वै अनुकूल बिसारि सूल सठ, पुनि खल पतिहिं भजै ॥२॥
लोलुप भ्रमत स्रमित निसि बासर, सिर पदत्रान बजै।
तदपि अधम बिचरत तेहिं मारग, कबहुँ न मूढ़ लजै ॥३॥[3]
हौं हार्‍यो करि जतन बिबिधि बिधि, अतिसय प्रबल अजै[4]।
तुलसिदास बस होत तबै, जन प्रेरक प्रभु बरजै ॥४॥

---

(१) सुनो हे अधिक [अदभ्र] करुना-निधान कमल नैन, भयहरन प्रभु तुम्हारे प्रकाश बिना मेरा भ्रम अपने पुरुषार्थ से टाले नहीं टलता। (२) जनने का दुख सहती है। (३) जैसे लालची रात दिन रुपया कमाने के फेर में थक जाता है और जूतियाँ खाता है फिर भी वही चाल चलता है और लाज नहीं लाता। (४) अजीत।

शब्द ४ का अर्थ—इस शब्द में गुसाईं जी ग्यारह नाते गिनाकर अपने इष्ट से बिनय करते हैं कि जो नाता आप को भावै उसी एक को मान कर मुझे चरन सरन में लीजिये।

(६)

दीन को दयालु दानि दूसरो न कोई।
जाहि दीनता कहौं हौं दीन देखौं सोई[1] ॥ १ ॥
मुनि सुर नर नाग असुर साहिब तौ घनेरे।
पै तौ लौं जौ लौं रावरे न नेकु नैन फेरे[2] ॥ २ ॥
त्रिभुवन तिहुँ काल बिदित बदत[3] बेद चारी।
आदि अंत मध्य राम साहिबी तिहारी ॥ ३ ॥
तोहि माँगि माँगनो न माँगनो कहायो[4]।
सुनि सुभाव सील सुजस जाचक जन आयो ॥ ४ ॥
पाहन पसु बिटप बिहँग अपने करि लीन्हे।
महाराज दसरथ के रंक राव कीन्हे ॥ ५ ॥[5]
तू गरीब को निवाज हौं गरीब तेरो।
बारक[6] कहिये कृपालु तुलसिदास मेरो ॥ ६ ॥

(७)

मैं हरि पतित-पावन सुने।
मैं पतित तुम पतित-पावन, दोऊ बानिक[7] बने ॥१॥
ब्याध गनिका गज अजामिल, साखि निगमन भने।
और अधम अनेक तारे, जात का पै गने ॥२॥
जानि नाम अजानि लीन्हें, नरक जमपुर मने।
दास तुलसी सरन आयो, राखिये आपने ॥३॥

---

(१) ईश्वर को छोड़ दूसरा दीनता छुड़ाने का समरथ नहीं है, जिस किसी से अपनी दीनता का दुख रोता हूँ उसी को आप दीन दुखी अर्थात असमरथ पाता हूँ। (२) सुर नर मुनि आदि की तभी तक प्रभुता है जब तक तेरी भौं उनकी ओर टेढ़ी नहीं होती। (३) कहता है। (४) जिसने आप से माँगा वह फिर मंगता न रहा अर्थात् परिपूर्ण हो गया। (५) दशरथ के पुत्र श्रीरामचंद्र ने जिस जिस को अपनाया वह दरिद्री से राजा हो गया यहाँ तक कि पत्थर जैसे अहिल्या, जानवर [बन्दर भालु], पेड़ [यमलार्जुन], चिड़िया [जटायु] की योनियों तक से दीन दुखियों का उद्धार कर दिया। (६) एक बेर। (७) सुभाव, बना।

लोभ मोह काम कोह[1], दोष कोष मो सों कौन,
कलि[2] हूँ जो सीखि लई मेरी ये मलीनता ॥३॥
एक ही भरोसो राम रावरो कहावत हौं,
रावरे दयाल दीन-बंधु मेरी हीनता ॥४॥

(१२)

स्वारथ को साज न समाज परमारथ को,
मो सों दगाबाज दूसरो न जग जाल है ॥१॥
कौन आयो करो न करौंगो करतूति भलि,
लिखी न बिरंचिहूँ[3] भलाई मोरे भाल[4] है ॥२॥
रावरी सपथ[5] राम नाम ही की गति मेरे,
इहाँ झूठो झूठो सो तिलोक तिहूँ काल है ॥३॥
तुलसी को भलो पै तुम्हारे ही किये कृपाल,
कीजै न बिलंब बलि पानी भरी खाल है ॥४॥

(१३)

केहि कहौं बिपति अति भारी, स्रीरघुबीर धीर हितकारी ॥१॥
मम हृदय भवन प्रभु तोरा, तहँ बसे आइ बहु चोरा ॥२॥
अति कठिन करहिं बरजोरा, मानहिं नहिं बिनय निहोरा॥३॥
तम मोह लोभ अहंकारा, मद क्रोध बोध[6] रिपु मारा ॥४॥
अति करहिं उपद्रव नाथा, मर्दहिं मोहिं जानि अनाथा॥५॥
मैं एक अमित[7] बटपारा, कोउ सुनै न मोर पुकारा ॥६॥
भागेहुँ नहिं नाथ उबारा, रघुनायक करहु सँभारा ॥७॥
कह तुलसिदास सुनु रामा, लूटहिं तसकर तव धामा[8] ॥८॥
चिंता यहि मोहिं अपारा, अपजस नहिं होहि तुम्हारा॥९॥

---

(१) क्रोध। (२) कलियुग। (३) ब्रह्मा। (४) माथा। (५) क़सम। (६) बुद्धि, समझ। (७) अनेक। (८) मेरा हृदय जो हे प्रभु तुम्हारा मन्दिर है यह ठग लूट रहे हैं।

(१४)

ऐसी मूढ़ता या मन की ॥ टेक ॥
परिहरि राम भक्ति सुरसरिता[1], आस करत ओसकन[2] की ॥१॥
धूम समूह निरखि चातक ज्यौं, तृषित जानि मति घन[3] की॥२॥
नहिँ तहँ सीतलता न बारि पुनि, हानि होत लोचन की ॥३॥
ज्यौं गच काँच बिलोकि सेन जड़, छाँह आपने तन की ॥४॥
टूटत अति आतुर अहार बस, छति बिसारि आनन की ॥५॥[4]
कहँ लग कहौं कुचाल कृपा-निधि, जानत हौ गति जन की ॥६॥
तुलसिदास प्रभु हरो दुसह दुख, लाज करो निज पन की ॥७॥

(१५)

कबहुँक हौं यहि रहनि रहौंगो ।
श्रीरघुनाथ कृपालु कृपा तें, सन्त सुभाव गहौंगो ॥१॥
जथा लाभ सन्तोष सदा, काहू सौं कछु न चहौंगो ।
परहित परत निरंतर मन, क्रम बचन नेम निबहौंगो ॥२॥
परुष[5] बचन अति दुसह[6] स्रवन सुनि, तेहि पावक न दहौंगो ।
बिगत[7] मान सम सीतल मन, परगुन नहिँ दोष कहौंगो ॥३॥
परिहरि देह-जनित[8] चिन्ता दुख, सुख सम बुद्धि सहौंगो ।
तुलसिदास प्रभु यहि पथ रहि के, अबिचल भक्ति लहौंगो ॥४॥

॥ उपदेश ॥

(१)

जा के प्रिय न राम बैदेही ।
तजिये ताहि कोटि बैरी सम, जद्यपि परम सनेही ॥१॥
तज्यो पिता प्रहलाद, बिभीषन बंधु, भरत महतारी ।
बलि गुरु तज्यो, कंत ब्रज बनिता, भये जग मंगलकारी ॥२॥

---

(१) गंगा। (२) ओस का बूँद। (३) बादल (४) जैसे शीशा का गच में अज्ञान बाज चिड़िया (श्येन) अपने शरीर की छाया देख कर दूसरी चिड़िया का भ्रम कर के अपने मुँह (आनन) में चोट (क्षति) लगने का डर छोड़ कर भूख से टूट पड़ता है (५) कटु, कड़ा। (६) असह, सहने योग्य नहीं। (७) मृत, बीता हुआ। (८) देह से उत्पन्न हुई।

नाते नेह राम के मनियत, सुहृद सुसेव्य जहाँ लौं।
अंजन कहा आँखि जेहि फूटै, बहुतक कहैं कहाँ लौं ॥३॥
तुलसी सो सब भाँति परम हित, पूज्य प्रान तें प्यारो।
जा सों होय सनेह राम पद, एतो मतो हमारो ॥४॥

(२)

राम राम राम जीह[1], जौ लौं तू न जपिहै।
तौ लौं तू कहूँ जाय तिहूँ ताप तपिहै ॥१॥
सुरसरि[2] तीर बिनु नीर दुख पाइहै।
सुरतरु[3] वर तोहिं दुख दारिद सताइ है ॥२॥
जागत बागत[4] सुख सपने न सोइहै।
जनम जनम जुग जुग जग रोइहै ॥३॥
छूटिबे के जतन बिसेष बाँध्यो जायगो।
ह्वैहै बिष भोजन जो सुधा[5] सानि खायगो ॥४॥
तुलसी बिलोक तिहूँ काल तो सें दीन को।
राम नाम ही गति जैसे जल मीन को ॥५॥

(३)

स्री रघुबीर की यह बानि[6]।
नीच हूँ सोँ करत नेह सो, प्रीति मन अनुमानि ॥ १ ॥
परम अधम निषाद पामर, कौन ता की कानि।
लियो सो उर लाय सुत ज्यों, प्रेम को पहिचानि ॥ २ ॥
गीध कौन दयालु जो, बिधि रच्यो हिंसा सानि।
जनक ज्यों रघुनाथ ता को, दियो जल निज पानि[7] ॥ ३ ॥
प्रकृति मलिन कुजाति सबरी, सकल अवगुन खानि।
खात ता के दिये फल, अति रुचि बखानि बखानि ॥ ४ ॥

(१) जीभ। (२) गंगा। (३) कल्प वृक्ष। (४) चलते। (५) अमृत। (६) सुभाव। (७) जैसे कोई पिता को अपने हाथ से तिलांजुली देता है।

रजनिचर अरु रिपु बिभीषन, सरन आयो जानि ।
भरत ज्यौं उठि ताहि भेंटत, देह दसा भुलानि ॥ ५ ॥
कौन सौम्य[1] सुसील बानर[2], जिनहिं सुमिरत हानि ।
किये ते सब सखा पूजे, भवन अपने आनि ॥ ६ ॥
राम सहज कृपाल कोमल, दीन-हित दिन-दानि ।
भजहि ऐसे प्रभुहिं तुलसी, कुटिल कपट न ठानि ॥ ७ ॥

(४)

जागु जागु जीव जड़ जोहे जग जामिनी ।
देह गेह नेह जानि जैसे घन दामिनी ॥ १ ॥[3]
सोवत सपने सहै संसृति सन्ताप रे ।
बूझ्यो मृग-बारि खायो जेवरि को साँप रे ॥ २ ॥[4]
कहे बेद बुध[5] तू तो बूझ मन माहिं रे ।
दोष दुख सपने के जागे ही पै जाहिं रे ॥ ३ ॥
तुलसी जागे तें जाय ताप तिहुं ताय रे ।
राम नाम सुचि[6] रुचि[7] सहज सुभाय रे ॥ ४ ॥

(५)

सवैया

अपराध अगाध भये जन तें, अपने उर आनत नाहिं न जू ।
गनिका गज गीध अजामिल के, गनि पातक पुंज सराहिन जू ॥
लिये बारक[8] नाम सुधाम दिये, जेहि धाम महा मुनि जाहिं न जू ।
तुलसी भजु दीनदयालहिं रे, रघुनाथ अनाथ हिं दाहिन[9] जू ॥

(६)

सवैया

सो जननी सो पिता सोइ भ्रात, सो भामिनि सो सुत सो हित मेरो ।
सोई सगा सो सखा सोइ सेवक, सो गुरु सो सुर साहिब चेरो ॥

---

(१) रुचिर, दिलपसंद । (२) बन्दर । (३) हे जीव जो घोर निद्रा मे सोय रहा है जाग कर रात्रि रूप जक्त को देख जहाँ देह और घर की प्रीत बादल मे बिजली के समान छिन-भंगी है । (४) नींद की दशा मे तू संसार सम्बन्धी कष्ट भोगता है जो मृग-जल और रस्सी के साँप की नाईं केवल भ्रम रूप है । (५) पंडित । (६) पवित्र । (७) प्रिय लगै । (८) एक बार । (९) दाहिने = सहायक ।

सो तुलसी प्रिय प्रान समान, कहाँ लौं बनाय कहौं बहुतेरो।
जो तजि देह को गेह को नेह, सनेह सों राम को होय सबेरो॥

॥ मिश्रित ॥

अमता तू न गई मेरे मन तें ॥ टेक ॥
पाके केस जन्म के साथी, लाज गई लोकन तें।
तन थाके कर कम्पन लागे, जोति गई नैनन तें॥ १॥
सरवन बचन न सुनत काहु के, बल गये सब इंद्रिन तें।
टूटे दसन बचन नहिं आवत, सोभा गई मुखन तें॥ २॥
कफ पित बात कंठ पर बैठे, सुतहिं बुलावत कर तें।
भाइ बन्धु सब परम पियारे, नारि निकारत घर तें॥ ३॥
जैसे ससि मंडल बिच स्याही, छुटे न कोटि जतन तें।
तुलसिदास बलि जाउँ चरन के, लोभ पराये धन तें॥ ४॥

दादू दयाल

[संक्षिप्त जीवन-चरित्र के लिये देखो पृष्ठ ७६ संतबानी संग्रह भाग १]

॥ सब्र समरथ ॥

जिनि सत छाड़ै बावरे, पूरिक है पूरा।
सिरजे की सब चिंत है[1], देबे कौं सूरा॥ टेक॥
गर्भ बास जिन राखिया, पावक थैं न्यारा।
जुगति जतन करि सींचिया, दे प्राण अधारा॥ १॥
कुंज कहाँ धरि संचरै[2], तहँ को रखवारा।
हेम हरत जिन राखिया[3], सो खसम हमारा॥ २॥
जल थल जीव जिते रहैं, सो सब कौं पूरै।
संपट सिला में देत है, काहे नर झूरै[4]॥ ४॥

---

(१) उस सारी रचना की चिन्ता है। (२ अंडे को सवै—कहते हैं कि कुंज चिड़िया दूर रह कर सुरत से अंडे को सेती है। (३) श्रीकृष्ण ने युधिष्ठिर को हिमालय पर्वत पर बर्फ में गलन से बचा लिया था। (४) मालिक दो पत्थरों की संधि में बंद जीव जन्तु की खबर लेता है तो हे नर तू क्यों सोच करता है।

जिन यहु भार उठाइया, निरबाहै सोई ।
दादू छिन न बिसारिये, ता थैं जीवन होई ॥ ४ ॥

॥ नाम और सुमिरन ॥

(१)

नाँउ रे नाँउ रे, सकल सिरोमणि नाँउ रे,
मैं बलिहारी जाउँ रे ॥ टेक ॥
दूतर तारै पारि उतारै, नरक निवारै नाँउ रे ॥ १ ॥
तारणहारा भौजल पारा, निर्मल सारा नाँउ रे ॥ २ ॥
नूर दिखावै तेज मिलावै, जोति जगावै नाँउ रे ॥ ३ ॥
सब सुख दाता अमृत राता, दादू माता नाँउ रे ॥ ४ ॥

(२)

मनाँ भजि राम नाम लीजे ।
साध संगति सुमिरि सुमिरि, रसना रस पीजे ॥ टेक ॥
साधू जन सुमिरण करि, केते जपि जागे ।
अगम निगम अमर किये, काल कोइ न लागे ॥ १ ॥
नीच ऊँच चिंतन करि, सरणागति लीये ।
भगति मुकति अपणी गति, ऐसैं जन कीये ॥ २ ॥
केते तिरि तीर लागे, बंधन भव छूटे ।
कलिमल बिष जुग जुग के, राम नाम खूटे[1] ॥ ३ ॥
भरम करम सब निवारि, जीवन जपि सोई ।
दादू दुख दूर करण, दूजा नहिँ कोई ॥ ४ ॥

॥ चितावनी ॥

(१)

मन रे राम बिना तन छीजै ।
जब यहु जाइ मिलै माटी मैं, तब कहु कैसैं कीजै ॥ टेक ॥
पारस परसि कंचन करि लीजै, सहज सुरति सुखदाई ।
माया बेलि बिषै फल लागे, ता परि भूलि न भाई ॥ १ ॥

---

(१) दूर किये, खतम किये ।

जब लग प्राण प्यंड है नीका, तब लग ताहि जिनि भूलै ।
यहु संसार सेँबल[1] के सुख ज्यूँ, ता पर तूँ जिनि फूलै ॥२॥
औसर येह जानि जग जीवन, समझि देखि सचु पावै ।
अंग अनेक आन मति भूलै, दादू जिनि डहकावै[2] ॥३॥

(२)

सजनी रजनी घटती जाइ ।
पल पल छीजै अवधि दिन आवै, अपनौँ लाल मनाइ ॥टेक॥
अति गति नीँद कहा सुख सोवै, यहु औसर चलि जाइ ।
यहु तन बिछरैँ बहुरि कहँ पावै, पीछैँ ही पछिताइ ॥१॥
प्राणपति जागै सुंदरि क्यौँ सोवै, उठि आतुर गहि पाँइ ।
कोमल बचन करुणा करि आगैँ, नख सिख रहु लपटाइ ॥२॥
सखी सुहाग सेज सुख पावै, प्रीतम प्रेम बढ़ाइ ।
दादू भाग बड़े पिव पावै, सकल सिरोमणि राइ ॥३॥

(३)

कागा रे करंक परि बोलै,
खाइ माँस अरु लगहीँ[3] डोलै ॥ टेक ॥
जा तन कौँ रचि अधिक सँवारा,
सो तन ले माटी मेँ डारा ॥ १ ॥
जा तन देखि अधिक नर फूले,
सो तन छाड़ि चल्या रे भूले ॥ २ ॥
जा तन देखि मन मेँ गरवाना,
मिलि गया माटी तजि अभिमाना ॥ ३ ॥
दादू तन की कहा बड़ाई,
निमख माहिँ माटी मिलि जाई ॥ ४ ॥

(१) सेमर एक वृत्त होता है जिसके बड़े सुंदर लाल फूल देख कर सुआ मगन होता है पर फल पर चाच मारने से केवल रुई उसके भीतर से निकलती है । (२) ठगावै । (३) निकट ।

॥ बिरह ॥

(१)

कौण बिधि पाइये रे, मीत हमारा सोइ ॥ टेक ॥
पास पीव परदेस है रे, जब लग प्रगटै नाहिँ ।
बिन देखे दुख पाइये, यहु सालै मन माहिँ ॥ १ ॥
जब लग नैन न देखिये, परगट मिलै न आइ ।
एक सेज संगहि रहै, यहु दुख सह्या न जाइ ॥ २ ॥
तब लग नेड़े दूरि है, जब लग मिलै न मोहिँ ।
नैन निकट नहिँ देखिये, संगि रहे क्या होइ ॥ ३ ॥
कहा करौँ कैसे मिलै रे, तलफै मेरा जीव ।
दादू आतुर बिरहनी, कारण अपने पीव ॥ ४ ॥

(२)

अजहुँ न निकसै प्राण कठोर ॥ टेक ॥
दरसन बिना बहुत दिन बीते, सुन्दर प्रीतम मोर ॥ १ ॥
चारि पहर चारौँ जुग बीते, रैन गँवाई भोर ॥ २ ॥
अवधि गई अजहूँ नहिँ आये, कतहुँ रहे चित चोर ॥ ३ ॥
कबहूँ नैन निरखि नहिँ देखे, मारग चितवत तोर ॥ ४ ॥
दादू ऐसे आतुर बिरहणी, जैसे चंद चकोर ॥ ५ ॥

(३)

कतहूँ रहे हो बिदेस, हरि नहिँ आये हो ।
जनम सिरानो जाइ, पिव नहिँ पाये हो ॥ टेक ॥
बिपति हमारी जाइ, हरि सौँ को कहै हो ।
तुम्ह बिन नाथ अनाथ, बिरहनि क्यूँ रहै हो ॥ १ ॥
पिव के बिरह बियोग, तन की सुधि नहिँ हो ।
तलफि तलफि जिव जाइ, मिरतक ह्वै रही हो ॥ २ ॥
दुखित भई हम नारि, कब हरि आवैँ हो ।
तुम्ह बिन प्राण-अधार, जिव दुख पावै हो ॥ ३ ॥

प्रगटहु दीनदयाल, बिलम न कीजै हो।
दादू दुखी बेहाल, दरसन दीजै हो ॥ ४ ॥

(४)

आवौ राम दया करि मेरे, बार बार बलिहारी तेरे ॥ टेक ॥
बिरहनि आतुर पंथ निहारै, राम राम कहि पीव पुकारै ॥१॥
पंथी बूझै मारग जोवै, नैन नीर जल भरि भरि रोवै ॥२॥
निस दिन तलफै रहै उदास, आतम राम तुम्हारे पास ॥३॥
बप[1] बिसरै तन को सुधि नाहीं, दादू बिरहनि मिरतक माहीं ॥४॥

॥ प्रेम ॥

(१)

बाला सेज हमारी रे, तूँ आव हौं वारी रे,
हौं दासी तुम्हारी रे ॥ टेक ॥
तेरा पंथ निहारूँ रे, सुन्दर सेज सँवारूँ रे,
जियरा तुम पर वारूँ रे ॥ १ ॥
तेरा अँगना पेखौं रे, तेरा मुखड़ा देखौं रे,
तब जीवन लेखौं रे ॥ २ ॥
मिलि सुखड़ा दीजै रे, यह लाहड़ा[२] लीजै रे,
तुम देखैं जीजै रे ॥ ३ ॥
तेरे प्रेम की माती रे, तेरे रगड़े राती रे,
दादू वारणै जाती रे ॥ ४ ॥

(२)

अरे मेरा अमर उपावणहार रे, खालिक आसिक तेरा ॥ टेक ॥
तुम सौँ राता तुम सौँ माता, तुम सौँ लागा रंग रे खालिक ॥१॥
तुम सौँ खेला तुम सौँ मेला, तुम सौँ प्रेम सनेह रे खालिक ॥२॥
तुम सौँ लेणा तुम सौँ देणा, तुमहीं सौँ रत होइ रे खालिक ॥३॥
खालिक मेरा आसिक तेरा, दादू अनत न जाइ रे खालिक ॥४॥

(३)

हरि रस माते मगन भये ।
सुमिरि सुमिरि भये मतवाले, जामण मरण सब भूलि गये ॥टेक॥
निर्मल भगति प्रेम रस पीवैं, आन न दूजा भाव धरैं ।
सहजैं सदा राम रँगि राते, मुकति बैकुंठैं कहा करैं ॥१॥
गाइ गाइ रस लीन भये हैं, कछू न माँगैं संत जनाँ ।
और अनेक देहु दत आगैं, आन न भावै राम बिनाँ ॥२॥
इकटग ध्यान रहैं ल्यौ लागे, छाकि परे हरि रस पीवैं ।
दादू मगन रहैं रसिमाते, ऐसैं हरि के जन जीवैं ॥३॥

(४)

तेरे नाँउ की बलि जाऊँ, जहाँ रहौं जिस ठाऊँ ॥टेक॥
तेरे बैनौं की बलिहारी, तेरे नैनहुँ ऊपरि वारी ।
तेरी मूरति की बलि कीती, वारि वारि हौं दीती ॥ १ ॥
सोभित नूर तुम्हारा, सुंदर जोति उजारा ।
मीठा प्राण - पियारा, तूँ है पीव हमारा ॥ २ ॥
तेज तुम्हारा कहिये, निर्मल काहे न लहिये ।
दादू बलि बलि तेरे, आव पिया तूँ मेरे ॥ ३ ॥

॥ विनय ॥

(१)

पार नहिँ पाइये रे राम बिना को निरबाहणहार ॥टेक॥
तुम बिन तारण को नहीँ, दूभर[१] यहु संसार ।
पैरत थाके केसवा, सूझै वार न पार ॥ १ ॥
बिषम भयानक भौजला, तुम बिन भारी होइ ।
तूँ हरि तारण केसवा, दूजा नाहीँ कोइ ॥ २ ॥
तुम बिन खेवट को नहीँ, अतिर[२] तिर्यो नहिँ जाइ ।
औघट भेरा[३] डूबिहै, नाहीँ आन उपाइ ॥ ३ ॥

(१) कठिन । (२) तैरने के योग्य नहीं । (३) बेड़ा ।

यहु घट औघट बिषम है, डूबत माहिँ सरीर।
दादू काइर राम बिन, मन नहिँ बाँधै धीर॥ ४॥

(२)

हमारे तुमहीँ हौ रखपाल।
तुम बिन और नहीँ कोइ मेरे, भौ दुख मेटणहार॥ टेक॥
बैरी पंच निमष नहिँ न्यारे, रोकि रहे जम काल।
हा जगदीस दास दुख पावै, स्वामी करो सँभाल॥ १॥
तुम बिन राम दहैँ ये दुंदर, दसौँ दिसा सब साल।
देखत दीन दुखी क्योँ कीजे, तुम हौ दीनदयाल॥ २॥
निर्भय नाँव हेत हरि दीजे, दरसन परसन लाल।
दादू दीन लीन करि लीजे, मेटहु सबै जँजाल॥ ३॥

(३)

क्यौँ बिसरै मेरा पीव पियारा,
जीव की जीवन प्राण हमारा॥ टेक॥
क्योँकर जीवै मीन जल बिछुरैँ, तुम बिन प्राण सनेही।
च्यंतामणि जब कर थैँ छूटै, तब दुख पावै देही॥ १॥
माता बालक दूध न देवै, सो कैसैँ करि पीवै।
निर्धन का धन अनत भुलाना, सो कैसैँ करि जीवै॥ २॥
बरखहु राम सदा सुख अमृत, नीझर निर्मल धारा।
प्रेम पियाला भरि भरि दीजै, दादू दास तुम्हारा॥ ३॥

(४)

तौ निबहै जन सेवग तेरा, ऐसैँ दया करि साहिब मेरा॥टेक॥
ज्यूँ हम तोरैँ त्यूँ तूँ जोरै, हम तोरैँ पै तूँ नहिँ तोरै॥१॥
हम बिसरैँ त्यूँ तूँ न बिसारै, हम बिगरैँ पै तूँ न बिगारै॥२॥
हम भूलैँ तूँ आनि मिलावै, हम बिछुरैँ तूँ अंगि लगावै॥३॥
तुम भावै सो हम पै नाहीँ, दादू दरसन देहु गुसाईँ॥४॥

॥ साध ॥

ोई साध सिरोमणी, गोबिँद गुण गावै ।
ाम भजै बिषिया तजै, आपा न जनावै ॥ टेक ॥
मथ्या मुखि बोलै नहीँ, पर-निंद्या नाहीँ ।
औगुण छाड़ै गुण गहै, मन हरि पद माहीँ ॥ १ ॥
निबैंरी सब आतमा, पर आतम जानै ।
सुखदाई समिता गहै, आपा नहिँ आनै ॥ २ ॥
आपा पर अंतर नहीँ, निर्मल निज सारा ।
तबादी साचा कहै, लैलीन बिचारा ॥ ३ ॥
नेभैं भजि न्यारा रहै, काहू लिपत न होई ।
ादू सब संसार मेँ, ऐसा जन कोई ॥ ४ ॥

॥ घट मठ ॥

(१)

ई रे घर ही मेँ घर पाया ।
जि समाइ रह्यौ ता माहीँ, सतगुर खोज बताया ॥ टेक ॥
घर काज सबै फिरि आया, आपै आप लखाया ।
लि कपाट महल के दीन्हे, थिर अस्थान दिखाया ॥ १ ॥
 औ भेद भरम सब भागा, साच सोई मन लाया ।
ड परे जहाँ जिव जावै, ता मेँ सहज समाया ॥ २ ॥
हचल सदा चलै नहिँ कबहूँ, देख्या सब मेँ सोई ।
ही सूँ मेरा मन लागा, और न दूजा कोई ॥ ३ ॥
ादि अन्त सोई घर पाया, इब मन अनत न जाई ।
दू एक रंगै रँग लागा, ता मेँ रह्या समाई ॥ ४ ॥

(२)

ाप आपण मेँ खोजो रे भाई, बस्तु अगोचर गुरू लखाई ॥ टेक ॥
ूँ मही बिलोयेँ माखण आवै, त्यूँ मन मथियाँ तैँ तत पावै ॥ १ ॥

काठ हुतासन[1] रह्या समाई, त्यूँ मन माहिँ निरंजन राइ ॥२॥
ज्यूँ अवनी[2] मेँ नीर समाना, त्यूँ मन माहैँ साच सयाना ॥३॥
ज्यूँ दर्पन के नहिँ लागै काई, त्यूँ मूरति माहैँ निरखि लखाई ॥४॥
सहजैँ मन मथियाँ ते तत पाया, दादू उन तो आप लखाया ॥५॥

॥ सेवक ॥

तूँ साहिब मैँ सेवग तेरा, भावै सिर दे सूली मेरा ॥ टेक ॥
भावै करवत सिर पर सारि, भावै लेकर गरदन मारि ॥१॥
भावै चहुँ दिसि अगिन लगाइ, भावै काल दसौं दिसि खाइ ॥२॥
भावै गिरवर गगन गिराइ, भावै दरिया माहिँ बहाइ ॥३॥
भावै कनक कसौटी देहु, दादू सेवग कसि कसि लेहु ॥४॥

॥ उपदेश ॥

(१)

जियरा मेरे सुमिर सार, काम क्रोध मद तजि बिकार ॥ टेक॥
तूँ जिनि भूले मन गँवार, सिर भार न लीजै मानि हार ॥१॥
सुणि समझायो बारबार, अजहुँ न चेतै हो हुसियार ॥२॥
करि तैसैँ भव तिरिये पार, दादू इब थैँ यहि बिचार ॥३॥

(२)

डरिये रे डरिये, परमेसुर थैँ डरिये रे ।
लेखा लेवै भरि भरि देवै, ता थैँ बुरा न करिये रे ॥ टेक ॥
साचा लीजी साचा दीजी, साचा सौदा कीजी रे ।
साचा राखी झूठा नाखी, बिष ना पीजी रे ॥ १ ॥
निर्मल गहिये निर्मल रहिये, निर्मल कहिये रे ।
निर्मल लीजी निर्मल दीजी, अनत न बहिये रे ॥ २ ॥
साह पठाया बनिज न आया, जिनि डहकावै रे ।
झूठ न भावै फेरि पठावै, कीया पावै रे ॥ ३ ॥
पंथ दुहेला जाइ अकेला, भार न लीजी रे ।
दादू मेला होइ सुहेला, सो कुछ कीजी रे ॥ ४ ॥

---

(१) आग । (२) पृथ्वी ।

॥ मन ॥

(१)

मन चंचल मेरो कह्यौ न मानै, दसौं दिसा दौरावै रे ।
आवत जात बार नहिं लागै, बहुत भाँति बौरावै रे ॥टेक॥
बेर बेर बरजत या मन कौं, किंचित सीख न मानै रे ।
ऐसैं निकसि जात या तन थैं, जैसैं जीव न जानै रे ॥१॥
कोटिक जतन करत या मन कौं, निहचल निमिष न होई रे ।
चंचल चपल चहूँ दिसि भरमै, कहा करै जन कोई रे ॥२॥
सदा सोच रहत घट भीतरि, मन थिर कैसैं कीजै रे ।
सहजैं सहज साध की संगति, दादू हरि भजि लीजै रे ॥३॥

(२)

मेरे तुमहीं राखणहार, दूजा को नहीं ।
ये चंचल चहुँ दिसि जाइ, काल तहीं तहीं ॥ टेक ॥
मैं केते किये उपाइ, निहचल ना रहै ।
जहँ बरजौं तहँ जाइ, मदमातौ बहै ॥ १ ॥
जहँ जाणै तहँ जाइ, तुम थैं ना डरै ।
ता स्यौं कहा बसाइ, भावै त्यूँ करै ॥ २ ॥
सकल पुकारैं साध, मैं केता कह्या ।
गुर अंकुस मानै नाहिं, निरभै ह्वै रह्या ॥ ३ ॥
तुम बिन और न कोइ, इस मन को गहै ।
तूँ राखै राखणहार, दादू तौ रहै ॥ ४ ॥

॥ जगत-मिथ्या ॥

मन रे तू देखै सो नाहीं, है सो अगम अगोचर माहीं ॥टेक॥
निस अँधियारी कछू न सूझै, संसै सरप दिखावा ।
ऐसैं अंध जगत नहिं जानै, जीव जेवड़ी[1] खावा ॥ १ ॥

(१) रस्सी ।

मृग-जल देखि तहाँ मन धावै, दिन दिन झूठी आसा ।
जहँ जहँ जाइ तहाँ जल नाहीं, निहचै मरै पियासा ॥ २ ॥
भरम बिलास बहुत बिधि कीन्हा, ज्यौं सुपिनैं सुख पावै ।
जागत झूठ तहाँ कुछ नाहीं, फिरि पीछैं पछितावै ॥ ३ ॥
जब लग सूता तब लग देखै, जागत भरम बिलाना ।
दादू अंति इहाँ कुछ नाहीं, है सो सोधि सयाना ॥ ४ ॥

॥ करम धरम ॥

मूल सींचि बधै[1] ज्यूँ बेला, सो तत तरवर रहै अकेला ॥टेक॥
देवी देखत फिरैं ज्यूँ भूले, खाइ हलाहल बिष कौं फूले ।
सुख कौं चाहै पड़ै गल पासी[2], देखत हीरा हाथ थैं जासी ॥१॥
केइ पूजा रचि ध्यान लगावैं, देवल देखैं खबरि न पावैं ।
तोरैं पाती जुगति न जानी, इहि भ्रमि रहे भूलि अभिमानी ॥२॥
तीरथ बरत न पूजै[3] आसा, बनखँडि जाहीं रहैं उदासा ।
यूँ तप करि करि देह जलावैं, भरमत डोलैं जनम गँवावैं ॥३॥
सतगुर मिलैं न संसा जाई, ये बंधन सब देइँ छुड़ाई ।
तब दादू परम गति पावै, सो निज मूरति माहिँ लखावै ॥४॥

॥ कपट भक्ति ॥

हम पाया हम पाया रे भाई, भेष बनाइ ऐसी मनि आई ॥टेक॥
भीतर का यहु भेद न जानै, कहै सुहागनि क्यूँ मन मानै ॥१॥
अंतर पीव सौं परचा नाहीं, भई सुहागनि लोगन माहीं ॥२॥
साईं सुपिनै कबहुँ न आवै, कहिबा ऐसैं महल बुलावै ॥३॥
इन बातन मोहिँ अचिरज आवै, पटम[4] कियें पिव कैसैं पावै॥४॥
दादू सुहागनि ऐसैं कोई, आपा मेटि राम रत होई ॥५॥

॥ निंदक ॥

न्यंदक बाबा बीर हमारा, बिनहीं कौड़े बहै बिचारा[5] ॥टेक॥
कर्म कोटि के कुसमल काटै, काज सँवारै बिनहीं साटै[6] ॥१॥

---

(१) बढ़ै । (२) फाँसी । (३) पूरन होय । (४) पाखंड । (५) बेचारा बिना पैसे (कौड़े) के काम करता रहता है (बहै) । (६) बदला, मुआवज़ा ।

आपण डूबै और कौं तारै, ऐसा प्रीतम पार उतारै ॥२॥
जुगि जुगि जीवौ न्यंदक मोरा, राम देव तुम करौ निहोरा ॥३॥
न्यंदक बपुरा पर-उपगारी, दादू न्यंद्या करै हमारी ॥४॥

बाबा मलूकदास

[संक्षिप्त जीवन चरित्र के लिये देखो संतबानी संग्रह, भाग १ पृष्ठ ९९]

॥ गुरुदेव ॥

हमरा सतगुरु बिरले जाने ।
सुई के नाके सुमेर चलावै, सो यह रूप बखानै ॥ १ ॥
की तो जानै दास कबीरा, की हरिनाकस पूता ।
की तो नामदेव औ नानक, की गोरख अवधूता ॥ २ ॥
हमरे गुरु की अदभुत लीला, ना कछु खाय न पीवै ।
ना वह सोवै ना वह जागै, ना वह मरै न जीवै ॥ ३ ॥
बिन तरवर फल फूल लगावै, सो तो वा का चेला ।
छिन में रूप अनेक धरत है, छिन में रहै अकेला ॥ ४ ॥
बिन दीपक उँजियारा देखै, एँड़ी समुँद थहावै ।
चीँटी के पग कुंजर बाँधै, जा को गुरू लखावै ॥ ५ ॥
बिन पंखन उड़ि जाय अकासे, बिन पंखन उड़ि आवै ।
सोई सिष्य गुरू का प्यारा, सूखे नाव चलावै ॥ ६ ॥
बिन पायन सब जग फिरि आवै, सो मेरा गुरु भाई ।
कहै मलूक ता की बलिहारी, जिन यह जुगत बताई ॥ ७ ॥

॥ नाम ॥

नाम तुम्हारा निरमला, निरमोलक हीरा ।
तू साहिब समरत्थ, हम मल मुत्र के कीरा ॥ १ ॥
पाप न राखै देहँ में, जब सुमिरन करिये ।
एक अच्छर के कहत ही, भौसागर तरिये ॥ २ ॥

अधम-उधारन सब कहैं, प्रभु बिरद तुम्हारा ।
सुनि सरनागत आइया, तब पार उतारा ॥ ३ ॥
तुझ सा गरुवा औ धनी, जा में बड़ई समाई ।
जरत उबारे पांडवा, ताती बाव न लाई ॥ ४ ॥
कोटिक औगुन जन करै, प्रभु मनहिँ न आनै ।
कहत मलूकादास को, अपना करि जानै ॥ ५ ॥

॥ प्रेम ॥

(१)

तेरा मैं दीदार दिवाना ।
घड़ी घड़ी तुझे देखा चाहूँ, सुन साहिब रहमाना ॥ १ ॥
हुआ अलमस्त खबर नहिँ तन की, पीया प्रेम पियाला ।
ठाढ़ होउँ तो गिरि गिरि परता, तेरे रँग मतवाला ॥ २ ॥
खड़ा रहूँ दरबार तुम्हारे, ज्योँ घर का बंदाजादा[1] ।
नेकी की कुलाह[2] सिर दीये, गले पैरहन[3] साजा ॥ ३ ॥
तौजी और निमाज न जानूँ, ना जानूँ धरि रोजा ।
बाँग जिक्रि[4] तबही से बिसरी, जब से यह दिल खोजा ॥ ४ ॥
कहैं मलूक अब कजा[5] न करिहैं, दिलही सोँ दिल लाया ।
मक्का हज्ज हिये में देखा, पूरा मुरसिद पाया ॥ ५ ॥

(२)

दर्द-दिवाने बावरै, अलमस्त फकीरा ।
एक अकीदा[6] लै रहे, ऐसे मन धीरा ॥ १ ॥
प्रेम पियाला पीवते, बिसरे सब साथी ।
आठ पहर योँ झूमते, ज्योँ माता हाथी ॥ २ ॥
उनकी नजर न आवते, कोइ राजा रंक ।
बंधन तोड़े मोह के, फिरते निहसंक ॥ ३ ॥

---

(१) गुलाम बच्चा । (२) टोपी । (३) मेखली । (४) सुमिरन । (५) छूटी हुई नमाज़ ॥ । (६) प्रतीत ।

साहिब मिल साहिब भये, कुछ रहि न तमाई[1] ।
कहैं मलूक तिस घर गये, जहँ पवन न जाई ॥ ४ ॥

॥ विनय ॥

(१)

अब तेरी सरन आयो राम ॥ १ ॥
जबै सुनिया साध के मुख, पतित-पावन नाम ॥ २ ॥
यही जान पुकार कीन्ही, अति सतायो काम ॥ ३ ॥
बिषय सेती भयो आजिज, कह मलूक गुलाम ॥ ४ ॥

(२)

दीन-बंधु दीना-नाथ, मेरी तन हेरिये ॥ टेक ॥
भाई नाहिँ बँधु नाहिँ, कुटुम परिवार नाहिँ ।
ऐसा कोई मित्र नाहिँ, जाके ढिँग जाइये ॥ १ ॥
सोने की सलैया नाहिँ, रूपे का रुपैया नाहिँ ।
कौड़ी पैसा गाँठि नाहिँ, जा से कछु लीजिये ॥ २ ॥
खेती नाहिँ बारी नाहिँ, बनिज ब्यौपार नाहिँ ।
ऐसा कोई साहु नाहिँ, जा सोँ कछु माँगिये ॥ ३ ॥
कहत मलूकदास, छोड़ दे पराई आस ।
राम धनी पाय के, अब का की सरन जाइये ॥ ४ ॥

(३)

सवैया

दीन दयाल सुने जब तेँ तब तेँ, मन मेँ कछु ऐसी बसी है ॥१॥
तेरो कहाय के जाऊँ कहाँ, तुम्हरे हित की पट[2] खैँचि कसी है ॥२॥
तेरोही आसरो एक मलूक, नहीँ प्रभु सोँ कोउ दूजो जसी है ॥३॥
ए हो मुरार पुकार कहैँ अब, मेरी हँसी नहिँ तेरी हँसी है ॥४॥

(१) इच्छा, चाह । (२) पटका ।

॥ उपदेश ॥

(१)

ना वह रीझै जप तप कीन्हे, ना आतम को जारे ।
ना वह रीझै धोती नेती, ना काया के पखारे ॥ १ ॥
दाया करै धरम मन राखै, घर में रहै उदासी ।
अपना सा दुख सब का जानै, ताहि मिलै अबिनासी ॥ २ ॥
सहै कुसबद बाद हू त्यागै, छाड़ै गर्ब गुमाना ।
यही रीझ मेरे निरंकार की, कहत मलूक दिवाना ॥ २ ॥

(२)

मन तें इतने भरम गँवावो ।
चलत बिदेस बिप्र जनि पूछो, दिन का दोष न लावो ॥ १ ॥
संझा होय करो तुम भोजन, बिनु दीपक के बारे ।
जौन कहैं असुरन की बिरिया, मूढ़ दई के मारे ॥ २ ॥
आप भले तो सबहि भलो है, बुरा न काहू कहिये ।
जा के मन कछु बसै बुराई, ता सोँ भागे रहिये ॥ ३ ॥
लोक बेद का पैँड़ा औरहि, इनकी कौन चलावै ।
आतम मारि पषानै पूजैँ, हिरदे दया न आवै ॥ ४ ॥
रहो भरोसे एक राम के, सूरे का मत लीजै ।
संकट पड़े हरज नहिँ मानो, जिय का लोभ न कीजै ॥ ५ ॥
किरिया करम अचार भरम है, यही जगत का फंदा ।
माया जाल मेँ बाँधि अँड़ाया[1], क्या जानै नर अंधा ॥ ६ ॥
यह संसार बड़ा भौसागर, ता को देखि सकाना[2] ।
सरन गये तोहिँ अब क्या डर है, कहत मलूक दिवाना ॥ ७ ॥

॥ माया ॥

हम से जनि लागै तू माया ।
थोरे से फिर बहुत होयगी, सुनि पैहैँ रघुराया ॥ १ ॥

---

(१) गिराया । (२) डरा ।

अपने में है साहिब हमरा, अजहूँ चेतु दिवानी।
काहू जन के बस परि जैहो, भरत मरहुगी पानी ॥ २ ॥
तर ह्वै चितै[1] लाज करु जन की, डारु हाथ की फाँसी।
जन तेँ तेरो जोर न लहिहै, रच्छपाल अबिनासी ॥ ३ ॥
कहै मलूका चुप करु ठगनी, औगुन राखु दुराई।
जो जन उबरै राम नाम कहि, ता तेँ कछु न बसाई ॥ ४ ॥

नाभाजी

इनका जीवन समय सत्रहवाँ शतक था और इनका देहान्त होना सं० १७०० में इनके शिष्य प्रियादास जी ने लिखा है जिन्हों ने अपने गुरू की आज्ञानुसार उनके मुख्य ग्रन्थ भक्तमाल छंदवंद की टीका उनके देहान्त होने के पीछे बनाई, परन्तु मिश्र-बन्धु बिनोद में सं० १७२० के लगभग इनका मृत्यु-काल सिद्ध किया गया है। इनकी जाति के विषय में झगड़ा है, प्राय: लोग डोम बतलाते हैं। इनके शिष्य प्रियादासजी ने अपनी टीका में इन्हें हनुमान वशी लिखा है और माड़वाड़ी भाषा में डोम शब्द का प्रयोजन हनुमान है। दूसरे टीकाकार ने ऐसा लिखा है कि वैश्नवों की जाति पाँति वक्तव्य नहीं है। नाभाजी अग्रदास के शिष्य और गुसाईं तुलसीदासजी के वड़े मित्र थे।

॥ शब्द ॥

नाभा नभ खेला कँवल केल रस सैला ॥ टेक ॥
दरशन नैन सैन मन माँजा, लाजा अलख अकेला ॥ १ ॥
पल पर दल दल ऊपर दामिनि, जोत में होत उजेला ॥ २ ॥
अंडा पार सार लख सूरत, सुन्नी सुन्न सुहेला ॥ ३ ॥
चढ़ गइ धाय जाय गढ़ ऊपर, सबद सुरत भया मेला ॥ ४ ॥
यह सब खेत अलेख अमेला, सिंध नीर नद मेला ॥ ५ ॥
जल जलधार सार पद जैसे, नहाँ गुरू नहिँ चेला ॥ ६ ॥
नाभा नैन श्रैन अंदर के, खुल गये निरख निहाला ॥ ७ ॥
संत उचिष्ट वार मन झेला, दुर्लभ दीन दुहेला ॥ ८ ॥

---

(१) नीची निगाह कर देख।

सुंदरदासजी

[संक्षिप्त जीवन-चरित्र के लिए देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ १०६]

॥ गुरुदेव ॥

(१)

सो गुरुदेव लिपै न छिपै कछु, सत्व रजो तम ताप निवारी ।
इंद्रिय देह मृषा[१] करि जानत, सीतलता समता[२] उर धारी ॥
ब्यापक ब्रह्म बिचार अखंडित, द्वैत उपाधि सबै जिन टारी ।
सबद सुनाय सँदेह मिटावत, सुंदर वा गुरु की बलिहारी ॥

(२)

गोबिँद के किये जीव, जात है रसातल को ।
गुरु उपदेसे से तो, छूटै जम फंद तेँ ॥
गोबिँद के किये, जीव बस परे कर्मन के ।
गुरु के निवाजे से, फिरत है स्वछंद[३] तेँ ॥
गोबिँद के किये, जीव बूड़त भवसागर मेँ ।
सुंदर कहत गुरु, काढ़ै दुःख द्वंद[४] तेँ ॥
और हू कहाँ लौँ कछू, मुख तेँ कहूँ बनाय ।
गुरु की तौ महिमा, अधिक है गोबिँद तेँ ॥

॥ अजपा जाप ॥

स्वासोँ स्वास राति दिन सोहं सोहं होइ जाप ।
याही माला बारंबार दृढ़ कै धरतु है ॥
देह परे इंद्री परे अंतःकरण परे ।
एकही अखंड जाप ताप[५] कूँ हरतु है ॥
काठ की रुद्राच्छ की रु सूतहू की माला और ।
इनके फिराये कछु कारज सरतु है ॥

(१) वृथा । (२) सम-दृष्टि । (३) स्वाधीन । (४) झगड़ा । (५) तपन, दुख ।

सुंदर कहत ता तें आतमा चैतन्य रूप ।
आप को भजन सो तो आपही करतु है ।

॥ शूर ॥

(१)

पाँव रोपि रहै, रण माहिँ रजपूत कोऊ ।
हय गज गाजत, जुरत जहाँ दल है ॥
बाजत जुझाऊ सहनाई, सिंधु राग पुनि ।
सुनतहि कायर की, छुटि जात कल है ॥
झलकत बरछी, तिरछी तरवार बहै ।
मार मार करत, परत खलभल[1] है ॥
ऐसे जुद्ध मेँ अडिग्ग, सुंदर सुभट सोई ।
घर माहिँ सूरमा, कहावत सकल है ॥

(२)

असन बसन[2] बहु भूषण सकल अंग ।
संपति बिबिधि भाँति भर्‌यो सब घर है ॥
स्रवण नगारो सुनि, छिनक मेँ छाड़ि जात ।
ऐसे नहिँ जाने कछु, मेरो वहाँ मर है ॥
मन मेँ उछाह, रण माहिँ टूक टूक होइ ।
निर्भय निसंक वा के, रंचहू न डर है ॥
सुंदर कहत कोउ, देह को ममत्व नाहिँ ।
सूरमा को देखियत, सीस बिनु धर है ॥

॥ पतिव्रता ॥

(१)

जल को सनेही मीन, बिछुरत तजै प्रान ।
मणि बिनु अहि[3] जैसे, जीवत न लहिये ॥
स्वाँति बुंद को सनेही, प्रगट जगत माहिँ ।
एक सीप दूसरो सु, चातक हु कहिये ॥

---

(१) खलबल, घबराहट । (२) भोजन और वस्त्र । (३) साँप ।

रवि को सनेही पुनि, कमल सरोवर में ।
ससि को सनेही हू, चकोर जैसे रहिये ॥
तैसेही सुंदर एक, प्रभु सूँ सनेह जोरि ।
और कछु देखि, काहू ओर नहिँ वहिये ॥

(२)

एक सही सब के उर अंतर, ता प्रभु कूँ कहु काहि न गावै ।
संकट माहिँ सहाय करै पुनि, सो अपनो पति क्यूँ बिसरावै ॥
चार पदारथ और जहाँ लगि, आठहु सिद्धि नवो निधि पावै ।
सुंदर छार परौ तिन के मुख, जो हरि कूँ तजि आनकूँ ध्यावै ॥

॥ बिरह उराहना[१] ॥

(१)

पीव को अँदेसो भारी, तो सूँ कहूँ सुन प्यारी ।
यारी[२] तोरि गये सो तौ, अजहूँ न आये हैं ॥
मेरे तो जीवन-प्राण, निसि दिन उहै ध्यान ।
मुख सूँ न कहू आन, नैन उर लाये हैँ ॥
जब तेँ गये बिछोहि, कल न परत मोहिँ ।
ता तेँ हूँ पूछत तोहि, किन बिरमाये[३] है ॥
सुंदर बिरहिनी को, सोच सखी बार बार ।
हम कूँ बिसार अब, कौन के कहाये हैँ ॥

(२)

हम कूँ तौ रैन दिन, संक मन माहिँ रहै ।
उनकी तौ बातनि मैँ, ठीकहु न पाइये ॥
कबहूँ सँदेसा सुनि, अधिक उछाह[४] होइ ।
कबहुँक रोइ रोइ, आँसुन बहाइये ॥
औरन के रस बस, सोइ रहे प्यारे लाल ।
आवन की कहि कहि, हम कूँ सुनाइये ॥

(१) उलहना । (२) स्नेह । (३) रिझाकर रोक लेना । (४) आनन्द ।

सुन्दर कहत ताहि, काटिये सु कौन भाँति ।
जोइ तरु आपने सु, हाथ तें लगाइये ॥

॥ अद्वैत ॥

(१)

ब्रह्म निरंतर ब्यापक अग्नि, अरूप अखंडित है सब माहीं ॥
ईसुर पावक रासि प्रचंड जु, संग उपाधि लिये बरताहीं ॥
जीव अनंत मसाल चिराग, सु दीप पतंग अनेक दिखाहीं ॥
सुंदर द्वैत उपाधि मिटै जब, ईससुर जीव जुदे कछु नाहीं ॥

(२)

जैसे ईख रस की मिठाई, भाँति भाँति भई ।
फेरि करि गारे, ईख रसही लहतु है ॥
जैसे घृत थीज के, डरा सों बँधि जात पुनि ।
फेर पिघले तें वह, घृतही रहतु है ॥
जैसे पानी जमि के, पषाण हू सों देखियत ।
सो पषाण फेरि पानी, होय के बहतु है ॥
तैसेही सुन्दर यह, जगत है ब्रह्ममय ।
ब्रह्म सो जगतमय, वेद सु कहतु है ॥

॥ जीवात्मा वा सुरत ॥

स्रोत्र सुनैं दृग देखत हैं, रसना रस घ्राण सुगंध पियारो ॥
कोमलता त्वक[1] जानत है पुनि, बोलत है मुख सबद उचारो ॥
पाणि[2] गहै पद गौन करै, मलमूत्र तजे उभयो[3] अध-द्वारो ॥
जासु प्रकास प्रकासत हैं सब, सुन्दर सोई रहै घट न्यारो ॥

॥ स्वरूप विस्मरण ॥

(१)

आप न देखत है अपनो मुख, दर्पण काट[4] लग्यो अति थूला ॥
ज्यूँ दृग देखत तें रहि जात, भयो जबहीं पुतरी परि फूला ॥
आय अज्ञान रह्यो अभि अंतर, जानि सकै नहिं आतम मूला ॥
सुंदर यूँ उपजे मन के मल, ज्ञान बिना निज रूपहि भूला ॥

---

(१) त्वचा । (२) हाथ । (३) दोनों । (४) मोरचा ।

(२)

इंद्रिन कूँ प्रेरि पुनि, इद्रिन के पीछे पर्यो ।
आपनी अविद्या करि, आप तनु गह्यो है ॥
जोइ जोइ देह कूँ, संकट आइ परै कछु ।
सोइ सोइ मानै आप, या तेँ दुख सह्यो है ॥
भ्रमत भ्रमत कहूँ, भ्रम को न आवै अंत ।
चिरकाल बीत्यो पै, स्वरूप कूँ न लह्यो है ॥
सुंदर कहत देखो भ्रम की प्रबलताई ।
भूतन मेँ भूत मिलि, भूत होइ रह्यो है ॥

॥ भ्रम ॥

जैसे स्वान काच के, सदन[१] मध्य देखि और ।
भूँकि भूँकि मरत, करत अभिमान जू ॥
जैसे गज फटिक, सिला सूँ लरि तोरै दंत ।
जैसे सिंह कूप माहिँ, उझक भुलान जू ॥
जैसे कोउ फेरी खात, फिरत सु देखै जग ।
तैसेही सुंदर सब, तेरोही अज्ञान जू ॥
अपनो ही भ्रम सो तौ, दूसरो दिखाई देत ।
आप कूँ बिचार कोऊ, देखिये न आन जू ॥

॥ मन ॥

(१)

पलही मेँ मरि जाय, पलही मेँ जीवतु है,
पलही मेँ पर हाथ, देखत बिकानो है ।
पलही मे फिरै, नवखंड हू ब्रह्मांड सब,
देख्यो अनदेख्यो सो तौ, या तेँ नहिँ छानो[२] है ।
जातो नहिँ जानियत, आवतो न दीसै कछु,
ऐसेसी बलाइ अब, ता सूँ पर्यो पानो[३] है ।

(१) घर । (२) छिपा । (३) पाला, वास्ता ।

सुंदर कहत या की, गति हू न लखि परै,
मन की प्रतीत कोऊ, करै सो दिवानो है ॥

(२)

घेरिये तौ घेरे हू, न आवत है मेरो पूत,
जोई परबोधिये, सो कान न धरतु है ।
नीति न अनीति देखै, सुभ न असुभ पेखै,
पल ही मैं होती, अनहोती हू करतु है ॥
गुरु की न साधु की, न लोक वेदहू की संक,
काहू की न मानै, न तौ काहू तैं डरतु है ।
सुंदर कहत ताहि, धीजिये[1] सु कौन भाँति,
मन को सुभाव, कछु कह्यो न परतु है ॥

(३)

तो सौं न कपूत कोऊ, कितहूँ न देखियत ।
तो सौं न सपूत कोऊ, देखियत और है ॥
तूही आप भूलै महा, नीचहू तैं नीच होइ ।
तूही आप जानै तो, सकल सिर मौर है ॥
तूही आप भ्रमै तब, जगत भ्रमत देखै ।
तेरे स्थित भये सब, ठौर ही को ठौर है ॥
तूही जीवरूप तूही, ब्रह्म है अकासवत ।
सुंदर कहत मन, तेरी सब दौर है ॥

॥ विचार ॥

(१)

एकहि कूप तैं नीरहि सींचत, ईख अफीमहि अंब अनारा ॥
होत उहै जल स्वाद अनेकनि, मिष्ट कटूक[2] खटा अरु खारा ॥

(१) पतियाइये । (२) कडुवा ।

त्यूँ ही उपाधि सँजोग तेँ आतम, दीसत आहि मिल्यो सबिकार ॥।
काढ़ि लिये सु बिबेक बिचार सुँ, सुंदर सुद्ध सरूपहि न्यारा ॥

(४)

देह ओर देखिये तौ, देह पंचभूतन को।
ब्रह्मा अरु कीट लग, देहही प्रधान है ॥
प्राण ओर देखिये तौ, प्राण सबही के एक।
छुधा पुनि तृषा दोऊ, व्यापत समान है ॥
मन ओर देखिये तौ, मन को सुभाव एक।
संकल्प बिकल्प करै, सदाही अज्ञान है ॥
आतम बिचार किये, आतमाही दीसै एक।
सुंदर कहत कोऊ, दूसरो न आन है ॥

॥ बचन विवेक ॥

(१)

और तौ बचन ऐसे, बोलत हैं पसु जैसे।
तिन के तौ बोलिबे में, ढंगहूँ न एक है ॥
कोऊ रात दिवस, बकतही रहत ऐसे।
जैसी बिधि कूप में, बकत मानो भेक[१] है ॥
बिबिधि प्रकार करि, बोलत जगत सब।
घट घट प्रतिमुख, बचन अनेक है ॥
सुंदर कहत ता तेँ, बचन बिचारि लेहु।
बचन तो वहै जा मेँ, पाइये बिबेक है ॥

(२)

एकनि के बचन सुनत, अति सुख होइ।
फूल से झरत हैँ, अधिक मनभावने ॥

---

(१) मेंढक।

एकनि के बचन तौ, असि[१] मानौं बरसत ।
स्रवण के सुनत, लगत अलखावने ॥
एकनि के बचन, कटुक- कहु बिष रूप ।
करत मरम छेद, दुक्ख उपजावने ॥
सुंदर कहत घट घट में बचन भेद ।
उत्तम मध्यम अरु, अधम सुहावने ॥

(३)

बोलिये तौ तब जब, बोलिबे की सुधि होइ ।
न तौ मुख मौन गहि, चुप होइ रहिये ॥
जोरिये तौ तब जब, जोरिबे की जानि परै ।
तुक छंद अरथ, अनूप जा में लहिये ॥
गाइये तौ तब जब, गाइबे को कंठ होइ ।
स्रवण के सुनतही, मन जाइ गहिये ॥
तुक-भंग छंद-भंग, अरथ मिलै न कछु ।
सुंदर कहत ऐसी, बाणी नहीं कहिये ॥

॥ बिश्वास ॥

(१)

धीरज धारि बिचारि निरंतर, तोहि रच्यो सोइ आपुहि ऐहै ॥
जेतिक भूख लगी घट प्राणहिं, तेतिक तू अनयासहि पैहै ॥
जो मन में तृस्ना करि धावत, तौ तिहुँलोक न खात अघैहै ॥
सुंदर तू मत सोच करै कछु, चोंच दई जिन चूनहु दैहै ॥

(२)

जगत में आइ के, बिसार्यो है जगतपति ।
जगत कियो है सोई, जगत भरतु है ॥

(१) तलवार ।

तेरे निसि दिन चिंता, औरहि परी है आइ ।
उद्यम अनेक, भाँति भाँति के करतु है ॥
इस उत जाय के, कमाई करि लाऊँ कछु ।
नेक न अज्ञानी नर, धीरत धरतु है ॥
सुंदर कहत एक, प्रभु के बिस्वास बिनु ।
बादहि कूं बृथा सठ, पचि के मरतु है ॥

॥ ज्ञानी ॥

(१)

तमोगुण बुद्धि सो तौ, तवा के समान जैसे ।
ता के मध्य सूरज की, रंचहू न जोत है ॥
रजोगुण बुद्धि जैसे, आरसी की औंधी ओर ।
ता के मध्य सूरज की, कछुक उद्योत[1] है ॥
सत्वगुण बुद्धि जैसे, आरसी की सूधी ओर ।
ता के मध्य प्रतिबिंब, सूरज को पोत[2] है ॥
त्रिगुण अतीत[3] जैसे, प्रतिबिंब मिटि जात ।
सुंदर कहत एक, सूरजही होत है ॥

(२)

बिधि न निषेध कछु, भेद न अभेद पुनि ।
क्रिया सो करत दीसै, यूँही नितप्रति है ॥
काहू कूँ निकट राखै, काहू कूँ तो दूर भाखै ।
काहू सूँ नेरे न दूर, ऐसी जा की मति है ॥
रागहू न द्वेष कोऊ, सोक न उछाह दोऊ ।
ऐसी बिधि रहै कहूँ, रति न बिरति[4] है ॥
बाहरि ब्योहार ठानै, मन मैं सुपन जानै ।
सुंदर ज्ञानी की कछु, अदभुत गति है ॥

---

१) चमक । (२) गुण । (३) तीनों गुण से रहित । (४) न कहीं आशक्त और न बिरक्त ।

(३)

ज्ञानी कर्म करै नाना बिधि, अहंकार या तन को खोवै ।
कर्मन को फल कछू न जोवै, अंतःकरण बासना धोवै ॥
ज्यूँ कोऊ खेती कूं जोतत, लेकरि बीज भूमि के बोवै ।
सुंदर कहै सुनो दृष्टांतहि, नाँगि[1] नहाई कहा निचोवै ॥

॥ साख्य ज्ञान ॥

(१)

छीर नीर मिले दोऊ, एकठेही होइ रहे ।
नीर जैसे छाड़ि हंस, छीर कूँ गहतु है ॥
कंचन में और धातु, मिलि करि बनि पर्‍यो ।
सुद्ध करि कंचन, सुनार ज्यूँ लहतु है ॥
पावकहूँ दारु[2] मध्य, दारुहू सों होइ रह्यो ।
मथि करि काढ़ै वह, दारु कूं दहतु है ॥
तैसैही सुंदर मिल्यो, आतमा अनातमा जु ।
भिन्न भिन्न करै सो तौ, सांख्यही कहतु है ॥

(२)

देह के सँजोगही तेँ, सीत लगै घाम लगै ।
देह के सँजोगही तेँ, छुधा तृषा पौन कूँ ॥
देह के सँजोगही तेँ, कटुक[3] मधुर स्वाद ।
देह के सँजोग कहै, खाटो खारो लौन कूँ ॥
देह के सँजोग कहै, मुख तेँ अनेक बात ।
देह के सँजोगही, पकरि रहै मौन कूँ ॥
सुंदर देह के सँजोग, दुख मानै सुख मानै ।
देह के सँजोग गये, दुख सुख कौन कूँ ॥

॥ निःसशय ज्ञानी ॥

भावै देह छूटि जाहु, कासी माहिँ गंगा तट ।
भावै देह छूटि जाहु, छेत्र मगहर में ॥

(१) नंगी । (२) काठ । (३) कड़ुवा ।

भावै देह छूटि जाहु, बिप्र के सदन[1] मध्य ।
भावै देह छूटि जाहु, स्वपच[2] के घर में ॥
भावै देह छूटै देस, आरज अनारज[3] में ।
भावै देह छूटि जाहु, बन में नगर में ॥
सुंदर ज्ञानी के कछु, संसय रहत नाहिं ।
सुरग नरक सब, भागि गयो भरमें ॥

॥ प्रेम ज्ञानी ॥

द्वंद बिना बिचरै बसुधा पर, जा घट आतमज्ञान अपारो ।
काम न क्रोध न लोभ न मोह, न राग न द्वेष न म्हारु न थारो[4] ॥
जोग न भोग न त्याग न संग्रह, देह दसा न ढँक्यो न उघारो ।
सुंदर कोउक जानि सकै यह, गोकुल गाँव को पैंडो हि न्यारो ॥

॥ बाचक ज्ञान ॥

(१)

देह सूँ ममत्व पुनि, गेह सूँ ममत्व ।
सुत दारा[5] सूँ ममत्व, मन माया में रहतु है ॥
थिरता न लहै जैसे, कंदुक[6] चौगान[7] माहिं ।
कर्मनि के बस मार्‍यो, धका कूँ बहतु है ॥
अंतःकरण सदा, जगत सूँ रचि रह्यो ।
मुख सूँ बनाय बात, ब्रह्म की कहतु है ॥
सुंदर अधिक मोहिं, याहि तें अचंभो आहि ।
भूमि पर पर्‍यो कोऊ, चंद कूँ गहतु है ॥

(२)

ज्ञानी की सी बात कहै, मन तौ मलीन रहै ।
बासना अनेक भरि, नेक न निवारी है ।
जैसे कोऊ आभूषण, अधिक बनाइ राखै ।
कलई ऊपर करि, भीतर भँगारी है ॥

(१) घर । (२) डाम । (३) पवित्र चाहे अपवित्र देश में । (४) मेरा और तेरा । (५) स्त्री । (६) गेंद । (७) गेंद का खेल ।

ज्यूँ ही मन आवै त्यूँ ही, खेलत निसंक होइ ।
ज्ञान सुनि सीखि लियो, ग्रंथ[1] न बिचारी है ॥
सुंदर कहत वा के, अटक न कोऊ आहि ।
जोई वा सूँ मिलै जाइ, ताही कूँ बिगारी है ॥

॥ आत्म अनुभव ॥

(१)

है दिल में दिलदार सही, अँखियाँ उलटी करि ताहि चितैये ।
आब[2] में खाक में बाद[3] में आतस[4], जान में सुंदर जानि जनैये ॥
नूर[5] में नूर है तेज में तेजहि, ज्योति में ज्योति मिलै मिलि जैये ।
क्या कहिये कहते न बनै कछु, जो कहिये कहते हि लजैये ॥

(२)

न्याय सास्त्र कहत है, प्रगट ईसुरवाद ।
मीमांसाहि सास्त्र माहिँ, कर्मवाद कह्यो है ॥
वैसेषिक सास्त्र पुनि, कालवादी है प्रसिद्ध ।
पातंजलि सास्त्र माहिँ, योगवाद लह्यो है ॥
सांख्य सास्त्र माहिँ पुनि, प्रकृति पुरुष वाद ।
वेदांत जु सास्त्र तिन, ब्रह्मवाद गह्यो है ॥
सुंदर कहत षटसास्त्र, माहिँ भयो वाद ।
जा के अनुभव ज्ञान, वाद में न बह्यो है ॥

(३)

काहू कूँ पूछत रंक, धन कैसे पाइयत ।
कान देके सुनत, स्रवण सोई जानिये ॥
उन कह्यो धन हम, देख्यो है फलानी ठौर ।
मनन करत भयो, कब घरि आनिये ॥
फेरि जब कह्यो धन, गड़्यो तेरे घर माहिँ ।
खोदन लाग्यो है तब, निदिध्यास ठानिये ॥

(१) जड़ चेतन की गाँठ । (२) पानी । (३) हवा । (४) आग । (५) प्रकाश ।

धन निकस्यो है जब, दारिद गयो है तब ।
सुंदर साच्छातकार, नृपति बखानिये ॥

॥ साध के लच्छण ॥

धूलि जैसो धन जा के, सूलि सो संसार सुख ।
भूलि जैसो भाग देखै, अंत कैसी यारी है ॥
पाप जैसी प्रभुताई, साप जैसो सनमान ।
बड़ाई बिच्छुन जैसी, नागिनी सी नारी है ॥
अग्नि जैसो इंद्र-लोक, विघ्न जैसो बिधि-लोक ।
कीरति कलंक जैसी, सिद्धि सी ठगारी है ॥
बासना[1] न कोई वा की, ऐसी मति सदा जा की ।
सुंदर कहत ताहि, बंदना[2] हमारी है ॥

॥ सतसंग ॥

(१)

प्रीति प्रचंड लगै परब्रह्महि, और सबै कछु लागत फीको ।
सुद्ध हृदय मन होइ सु निर्मल, द्वैत प्रभाव मिटै सब जी को ॥
गोष्टि रु ज्ञान अनंत चलै जहँ, सुंदर जैसो प्रवाह नदी को ।
ताहितेँ जानि करो निसि बासर, साधु को संग सदा अति नीको ॥

(२)

जो कोइ जाइ मिलै उन सूँ नर, होत पवित्र लगै हरि रंगा ।
दोष कलंक सबै मिटि जाइसु, नीचहु जाइ जु होत उतंगा ॥
ज्यूँ जल और मलीन महा अति, गंग मिल्यो हुइ जातहि गंगा ।
सुन्दर सुद्ध करै ततकाल जु, है जग माहिँ बड़ो सतसंगा ॥

॥ दुष्ट ॥

(१)

अपने न दोष देखै, पर के औगुण पेखै,
दुष्ट को सुभाव, उठि निंदाही करतु है ।

---

(१) चाह । (२) प्रणाम ।

जैसे कोई महल, सँवारि राख्यो नीके करि,
कीरी[1] तहाँ जाय, छिद्र ढूँढत फिरतु है ॥
भोरही तेँ साँझ लग, साँझही तेँ भोर लग,
सुंदर कहत दिन, ऐसेही भरतु है।
पाँव के तरे की, नहीँ सूझै आग मूरख कूँ,
और सूँ कहत तेरे, सिर पै बरतु है ॥

(२)

आपुन काज सँवारन के हित, और कु काज बिगारत जाई ।
आपुन कारज होउ न होउ, बुरो करि और कुँ डारत भाई ॥
आपहु खोवत औरहु खोवत, खोइ दुनौँ घर देत बहाई ।
सुंदर देखत ही बनि आवत, दुष्ट करै नहिँ कौन बुराई ॥

(३)

सर्प डसै सु नहीँ कछु तालुक, बीछू लगै स भले करि मानौ ।
सिंहहु खाय तु नाहिँ कछू डर, जो गज मारत तौ नहिँ हानौ ॥
आगि जरौ जल बूड़ि मरौ, गिरि जाइ गिरौ कछु भै मत आनौ ।
सुंदर और भले सबही यह, दुर्जन संग भलो जिनि जानौ ॥

॥ तृष्णा ॥

(१)

जो दस बीस पचास भये मत[2], होइ हजार तु लाख मँगैगी ।
कोटि अरब्ब खरब्ब असंख्य, पृथ्वीपति[3] होन की चाह जगैगी ॥
स्वर्ग पताल को राज करौँ, तृष्ना अधिकी अति आग लगैगी ।
सुंदर एक सँतोष बिना सठ, तेरी तो भूख कधी न भगैगी ॥

(२)

किधौँ पेट चूल्हो कीधौँ, भाठि किधौँ भाड़ आहि ।
जोइ कछु झोँकिये, सु सब जरि जातु है ॥
किधौँ पेट थल किधौँ, वापि[4] किधौँ सागर है ।
जेतो जल परै तेतो, सकल समातु है ॥

---

(१) चींटी । (२) सौ । (३) राजा । (४) बावड़ी ।

किधौं पेट दैत किधौं, भूत प्रेत राच्छस है।
खाउँ खाउँ करै कछु. नेक न अघातु है॥
सुंदर कहत प्रभु, कौन पाप लायो पेट।
जबही जनम भयो, तबही को खातु है॥

॥ कामिनी ॥

(१)

कामिनी को तनु मानु कहिये सघन बन,
वहाँ कोऊ जाय सो तौ भूलेही परतु है।
कुंजर है गति कटि केहरी को भय जा में,
बेनी काली नागिनीऊ फन कूँ धरतु है॥
कुच हैं पहार जहाँ काम चोर रहै तहाँ,
साधि के कटाच्छ बान प्रान कूँ हरतु है।
सुंदर कहत एक और डर जा में अति,
राच्छसी बदन खाउँ खाउँ ही करतु है॥

(२)

रसिक प्रिया रस मंजरी, और सिँगारहि जान।
चतुराई करि बहुत बिधि, बिषय बनाई आन॥
बिषय बनाई आन, लगत बिषयिन[1] कूँ प्यारी।
जागे मदन[2] प्रचंड, सराहै नखसिख नारी॥
ज्यूँ रोगी मिष्टान खाइ, रोगहि बिस्तारे।
सुंदर ये गति होइ, रसिक जो रस प्रिया धारै॥

॥ करम धरम ॥

(१)

मेघ सहै सीत सहै, सीस पर घाम सहै।
कठिन तपस्या करि, कंद मूल खात है॥
जोग करै जज्ञ करै, तीरथ रु ब्रत करै।
पुन्य नाना बिधि करै, मन में सुहात है॥

(१) कामी। (२) कामदेव।

और देवी देवता, उपासना अनेक करै ।
आँबन की हौस कैसे, आक डोंड़े[१] जात है ॥
सुंदर कहत एक, रबि के प्रकास बिनु ।
जेंगना[२] की जोति, कहा रजनी[३] बिलात है ॥

(२)

गेह तज्यो पुनि नेह तज्यो, पुनि खेह लगाइ के देह सँवारी ॥
मेघ सहै सिर सीत सहै तन, धूप समय जु पंचागिनि बारी ॥
भूख सहै रहि रूख तरे, पर सुंदरदास सहै दुख भारी ॥
डासन[४] छाड़ि के कासन ऊपर, आसन मारिपै आस न मारी ॥

॥ चितावनी ॥

(१)

तू कछु और बिचारत है नर, तेरो बिचार धर्योहि रहैगो ।
कोटि उपाय करै धन के हित, भाग लिख्यो तितनाहि लहैगो ॥
भोर कि साँझ घरी पल माँझ सु. काल अचानक आइ गहैगो ।
राम भज्यो न कियो कछु सुकिरत, सुंदर यूँ पछताइ रहैगो ॥

(२)

मातु पिता युवती[५] सुत बांधव, लागत है सब कूँ अति प्यारो ।
लोक कुटुंब खरो हित राखत, होइ नहीं हम तें कहुँ न्यारो ॥
देह सनेह तहाँ लग जानहु, बोलत है मुख सबद उचारो ।
सुंदर चेतन सक्ति गई जब, बेगि कहै घरबार निकारो ॥

॥ उपदेश ॥

(१)

कार उहै अबिकार[६] रहै नित, सार[७] उहै जु असारहि नाखै[८] ॥
प्रीति उहै जु प्रतीति धरै उर, नीति उहै जु अनीतिन भाखै ॥
तंत[९] उहै लगि अंत न टूटत, संत उहै अपनो सत राखै ॥
नाद[१०] उहै सुनि बाद[११] तजै सब, स्वाद उहै रस सुंदर चाखै ॥

---

(१) मदार का फल या डोंड़ी। (२) जुगनू। (३) रात। (४) बिछौना। (५) स्त्री। (६) बिकार रहित। (७) सत्य। (८) फेंक दे। (९) तत्व—यहाँ ध्यान से अभिप्राय है। (१०) शब्द। (११) झगड़ा।

(२)

सोवत सोवत सोइ गयो सठ, रोवत रोवत कै बेर रोयो ॥
गोवत[1] गोवत गोइ धर्‍यो धन, खोवत खोवत तैं सब खोयो ॥
जोवत[2] जोवत बीत गये दिन, बोवत बोवत लै बिष बोयो ॥
सुंदर सुंदर राम भज्यो नहिं, ढोवत ढोवत बोझहिं ढोयो ॥

॥ मिश्रित ॥

(१)

जा सरीर माहिं तू अनेक सुख मानि रह्यो,
ताहि तू बिचार या में कौन बात भली है।
मेद मज्जा मांस रग रग में रकत भर्‍यो,
पेटहू पिटारी सी में ठौर ठौर मली है ॥
हाड़न सूँ भर्‍यो मुख हाड़न के नैन नाक,
हाथ पाँव सोऊ सब हाड़न की नली है।
सुंदर कहत याहि देखि जनि भूलै कोई,
भीतर भँगार भरी ऊपर तौ कली है ॥

(२)

प्रीति सी न पाती कोऊ प्रेम से न फूल और,
चित्त सोँ न चंदन सनेह सोँ न सेहरा।
हृदय सोँ न आसन सहज सोँ न सिंहासन,
भाव सी न सेज और सून्य सोँ न गेहरा ॥
सील सोँ न स्नान अरु ध्यान सोँ न धूप और,
ज्ञान सोँ न दीपक अज्ञान तम केहरा।
मन सी न माला कोऊ सोहं सो न जाप और,
आतम सोँ देव नाहिं देह सोँ न देहरा ॥

---

(१) छिपाना। (२) देखना।

धरनीदासजी

[संक्षिप्त जीवन-चरित्र के लिए देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ ११२]

॥ चितावनी ॥

पानी से पैदा कियो सुनु रे मन बौरे,
ऐसा खसम खुदाय कहाई रे ।
ाह[1] भयो दस मास को सुनु रे मन बौरे,
तर सिर ऊपर पाँई रे ॥ १ ॥

ँच लगी जब आग की सुनु रे मन बौरे,
आजिज ह्वै अकुलाई रे ।
ोल[2] कियो मुख आपने सुनु रे मन बौरे,
नाहक अंक लिखाई रे ॥ २ ॥

बकी करिहौं बंदगी सुनु रे मन बौरे,
जो पइहौं मुकलाई[3] रे ।
जग आये जंगल परे सुन रे मन बौरे,
भरम रहे अरुझाई रे ॥ ३ ॥

पर की पीर न जानिया सुनु रे मन बौरे,
नाहक छुरी चलाई रे ।
बाँधि जँजीरे जाइहौ सुनु रे मन बौरे,
बहुरि ऐसहीं जाई रे ॥ ४ ॥

सतगुरु के उपदेस ले सुनु रे मन बौरे,
दोजख दरद मिटाई रे ।
मानुष देह दुरलभ अहै सुनु रे मन बौरे,
धरनी कह समुझाई रे ॥ ५ ॥

---

(१) गर्भ की जलन । (२) प्रतिज्ञा । (३) मुकलना = भेजना, गर्भ में जब बालक बहुत तकलीफ पाता है तो मालिक से प्रार्थना करता है कि अबकी कष्ट से छुड़ा दो तो बंदगी भक्ति करूँगा ।

(२)

सोवत सोवत सोइ गयो सठ, रोवत रोवत कै बेर रोयो ॥
गोवत[1] गोवत गोइ धर्‌यो धन, खोवत खोवत तैं सब खोयो ॥
जोवत[2] जोवत बीत गये दिन, बोवत बोवत लै विष बोयो ॥
सुंदर सुंदर राम भज्यो नहिँ, ढोवत ढोवत बोझहिँ ढोयो ॥

॥ मिश्रित ॥

(१)

जा सरीर माहिँ तू अनेक सुख मानि रह्यो,
ताहि तू बिचार या में कौन बात भली है।
मेद मज्जा मांस रग रग में रकत भर्‌यो,
पेटहू पिटारी सी में ठौर ठौर मली है ॥
हाड़न सूँ भर्‌यो मुख हाड़न के नैन नाक,
हाथ पाँव सोऊ सब हाड़न की नली है।
सुंदर कहत याहि देखि जनि भूलै कोई,
भीतर भँगार भरी ऊपर तौ कली है ॥

(२)

प्रीति सी न पाती कोऊ प्रेम से न फूल और,
चित्त सोँ न चंदन सनेह सोँ न सेहरा।
हृदय सोँ न आसन सहज सोँ न सिंहासन,
भाव सी न सेज और सून्य सोँ न गेहरा ॥
सील सोँ न स्नान अरु ध्यान सोँ न धूप और,
ज्ञान सोँ न दीपक अज्ञान तम केहरा।
मन सी न माला कोऊ सोहं सो न जाप और,
आतम सोँ देव नाहिँ देह सोँ न देहरा ॥

---

(१) छिपाना। (२) देखना।

धरनीदासजी

[संक्षिप्त जीवन-चरित्र के लिए देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ ११२]

॥ चितावनी ॥

पानी से पैदा कियो सुनु रे मन बौरे,
ऐसा खसम खुदाय कहाई रे ।
दाह[1] भयो दस मास को सुनु रे मन बौरे,
तर सिर ऊपर पाँई रे ॥ १ ॥
आँच लगी जब आग की सुनु रे मन बौरे,
आजिज ह्वै अकुलाई रे ।
कौल[2] कियो मुख आपने सुनु रे मन बौरे,
नाहक अंक लिखाई रे ॥ २ ॥
अबकी करिहौं बंदगी सुनु रे मन बौरे,
जो पइहौं मुकलाई[3] रे ।
जग आये जंगल परे सुन रे मन बौरे,
भरम रहे अरुझाई रे ॥ ३ ॥
पर की पीर न जानिया सुनु रे मन बौरे,
नाहक छुरी चलाई रे ।
बाँधि जँजीरे जाइहौ सुनु रे मन बौरे,
बहुरि ऐसहीं जाई रे ॥ ४ ॥
सतगुरु के उपदेस ह्वै सुनु रे मन बौरे,
दोजख दरद मिटाई रे ।
मानुष देह दुरलभ अहै सुनु रे मन बौरे,
धरनी कह समुझाई रे ॥ ५ ॥

---

(१) गर्भ की जलन। (२) प्रतिज्ञा। (३) मुकलना = भेजना, गर्भ में जब बालक बहुत तकलीफ़ पाता है तो मालिक से प्रार्थना करता है कि अबकी कष्ट से छुड़ा दो तो बंदगी भक्ति करूँगा।

॥ विरह ॥

अजहुँ मिलो मेरे प्रान-पियारे।
दीनदयाल कृपाल कृपानिधि,
करहु छिमा अपराध हमारे ॥ १ ॥
कल न परत अति बिकल सकल तन,
नैन सकल जनु[1] बहत पनारे।
माँस पचो अरु रक्त रहित भे,
हाड़ दिनहुँ दिन होत उघारे ॥ २ ॥
नासा नैन स्रवन रसना रस,
इन्द्री स्वाद जुआ जनु हारे।
दिवस दसो दिसि पंथ निहारत,
राति बिहात[2] गनत जस तारे ॥ ३ ॥
जो दुख सहत कहत न बनत मुख,
अंतरगत के हौ जाननहारे।
धरनी जिव झिलमलित दीप ज्यों,
होत अँधार करो उँजियारे ॥ ४ ॥

॥ प्रेम ॥

(१)

इक पिय मोरे मन मान्यो, पतिब्रत ठानोँ हो।
अवरो जो इन्द्र समान, तो तृन करि जानोँ हो ॥ १ ॥
जहँ प्रभु बैसि सिँहासन, आसन डासब हो।
तहवाँ बेनियाँ डोलइबोँ, बड़ सुख पइबोँ हो ॥ २ ॥
जहँ प्रभु करहिँ लवासन[3], पवढ़हिँ आसन हो।
कर तेँ पग सुहरैबोँ, हृदय सुख पइबोँ हो ॥ ३ ॥
धरनी प्रभु चरनामृत, नितहिँ अचइबोँ हो।
सन्मुख रहिबोँ मैँ ठाढ़ि, अंतै नहिँ जइबोँ हो ॥ ४ ॥

(१) जैसे। (२) बीतती है। (३) भोजन।

(२)

पिया मोर बसैं गउरगढ़[1], मैं बसौं प्राग[2] हो ।
सहजहिं लागु सनेह, उपजु अनुराग हो ॥ १ ॥
असन बसन तन भूषन, भवन न भावै हो ।
पल पल समुझि सुरति, मन गहबरि[3] आवै हो ॥ २ ॥
पथिक न मिलहि सजन जन, जिनहिं जनावौं हो ।
बिहबल बिकल बिलखि चित, चहुँ दिसि धावौं हो ॥ ३ ॥
होय अस मोहिं ले जाय, कि ताहि ले आवै हो ।
तेकरि होइबौं लौंड़िया, जे रहिया बतावै हो ॥ ४ ॥
तबहिं त्रिया पत[4] जाय, दोसर जब चाहै हो ।
एक पुरुष समरथ, धन बहुत न चाहै हो ॥ ५ ॥
धरनी गति नहिं आनि, करहु जस जानहु हो ।
मिलहु प्रगट पट[5] खोलि, भरम जनि मानहु हो ॥ ६ ॥

(३)

हरि जन हरि के हाथ बिकाने ।
भावै कहो जग धृग जीवन है, भावै कहो बौराने ॥ १ ॥
जाति गँवाय अजाति कहाये, साधु सँगति ठहराने ।
मेटो दुख दारिद्र परानो[6], जूठन खाय अघाने ॥ २ ॥
पाँच जने परबल परपंची, खलटि परे बंदिखाने ।
छुटी मजूरी भये हजूरी, साहिब के मन माने ॥ ३ ॥
निरममता निरबैर सभन तें, निरसंका निरबाने ।
धरनी काम राम अपने तें, चरन कमल लपटाने ॥ ४ ॥

॥ विनय ॥

(१)

प्रभुजी अब जिनि मोहिं बिसारो ।
असरन-सरन अधम-जन-तारन, जुग जुग बिरद तिहारो ॥ १ ॥

(१) स्वेत वा दयाल देश । (२) माया देश । (३) पछताना, घबराना । (४) हुर्मत । (५) घूँघट । (६) भागा ।

जहँ जहँ जनम करम बसि पाय, तहँ अरुझे रस खारो ।
पाँचहुँ के परपंच भुलानो, धरेउ न ध्यान अधारो ॥ २ ॥
अंध गर्भ दस मास निरंतर, नखसिख सुरति सँवारो ।
मज्जा[1] मुत्र अग्नि कल्ल कृम जहँ, सहजे तहँ प्रतिपारो ॥ ३ ॥
दीजे दरस दयाल दया करि, गुन ऐगुन न बिचारो ।
धरनी भजि[2] आयो सरनागति, तजि लज्जा कुल गारो[3] ॥ ४ ॥

(२)

तुहि अवलंब हमारे हो ।
भावै पशु नाँगे करो, भावै तुरय[4] सवारे हो ॥ १ ॥
जनम अनेकन बादि गे, निजु नाम बिसारे हो ।
अब सरनागत रावरी, जन करत पुकारे हो ॥ २ ॥
भवसागर बेरा[5] परो, जल माँझ मँझारे हो ।
संतत[6] दीनदयाल ही, करि पार निकारे हो ॥ ३ ॥
धरनी मन बच कर्मना, तन मन धन वारें हो ।
अपनो बिरद निबाहिये, नहिँ बनत बिचारे हो ॥ ४ ॥

(३)

मो सोँ प्रभु नाहिँ दुखित, तुम सोँ सुखदाई ॥ टेक ॥
दीनबन्धु बान तेरो, आइ करु सहाई ।
मो सोँ नहिँ दीन और, निरखो जग माँई ॥ १ ॥
पतित-पावन निगम कहत, रहत हौ कित गोई[7] ।
मो सोँ नहिँ पतित और, देखो जग टोई ॥ २ ॥
अधम के उधारन तुम, चारो जुग ओई ।
मो तेँ अब अधम आहि, कवन धौँ बड़ोई ॥ ३ ॥
धरनी मन मनिया, इक ताग मेँ पराई ।
आपन करि जानि लेहु, कर्म फंद छोई[8] ॥ ४ ॥

---

(१) मज्जा=हड्डी का गूदा या सड़ा पंछा । (२) भाग कर । (३) गाली । (४) घोड़ा । (५) वेड़ा, नाव । (६) निरंतर । (७) गुप्त । (८) छोड़ा कर, काट कर ।

॥ उपदेश ॥

कवित्त–जीव की दया जेहि जीव ब्यापै नहीँ,
भूखे न अहार प्यासे न पानी ।
साधु से संग नहिँ सबद से रंग नहिँ,
बोलि जानै न मुख मधुर बानी ॥
एक जगदीस को सीस अरपै नहीँ,
पाँच पचीस बहु बात ठानी ॥
राम को नाम निज धाम बिस्राम नहिँ,
धरनी कह धरनि मोँ ध्रिग सो प्रानी[1] ॥

जगजीवन साहिब

[संक्षिप्त जीवन-चरित्र के लिये देखो संतबानी संग्रह, भाग १ पृष्ठ ११७]

॥ चितावनी ॥

(१)

अरे मन देहु तजि मतवारि ।
जे जे आये जगत महँ इहि, गये ते ते हारि ॥ १ ॥
नाहिँ सुमिर्यो नाम काँ, सब गयो काम बिगारि ।
आपु काँ जिन बड़ा जान्यो, काल खायो मारि ॥ २ ॥
जानि आपुहिँ छोट जग, रहि रहो डोरि सँभारि ।
बैठि कै चौगान निरखहु, रूप छबि अनुहारि[2] ॥ ३ ॥
रहौ थिर सतसंग बासी, देहु सकल बिसारि ।
जगजिवन सतगुरु कृपा करि, लेहिँ सबै सँवारि ॥ ४ ॥

(२)

अरे मन समुझि करु पहिचान ।
को तैँ अहसि कहाँ तेँ आयसि, काहे भर्म भुलान ॥ १ ॥
सुधि सँभारु बिचार करिकै, बूझु पाछिल ज्ञान ।
नात यहि दुइ चारि दिन का, अचल नहिँ अस्थान ॥ २ ॥

(१) पृथ्वी पर ऐसे जीव को धिक्कार है । (२) सदृश ।

लोक गढ़ यहु कोट काया, कठिन माया बान ।
लाग सब के बचे कोउ नहिँ, हर्यो सब को ध्यान ॥ ३ ॥
खबरदार बेखबर हो नहिँ, ओट नाम निरवान ।
जगजीवन सतगुरु राखि लैहैँ, चरन रहुँ लपटान ॥ ४ ॥

(३)

मैँ तैँ जग त्यागि मन, चलिये सिर नाई ।
नाम जानि दीन हीन, करिये दीनताई ॥ १ ॥
अहंकार गर्ब तेँ, सब गये हैँ बिलाई ।
रावन के सीस काटि, राम की दुहाई ॥ २ ॥
जिन जिन गुमान कीन्ह, मारि गर्दही मिलाई ।
साधि साधि बाँधि प्रीति, ताहि पर सहाई ॥ ३ ॥
परसहु गुरु सीस डारि, दुनिया बिसराई ।
जगजीवन आस एक, टेक रहिये लगाई ॥ ४ ॥

(४)

मन महँ नाहिँ बूझत कोय ।
नहीँ बसि कछु अहै आपन, करै करता होय ॥ १ ॥
कहत मैँ तैँ सूझि नाहीँ, भर्म भूला सोय ।
पड़े धारा मोह की बसि, डारि सर्बस खोय ॥ २ ॥
करै निंदा साध की, परि पाप बूड़ै सोय ।
अंत फजिहत होहिँगे, पछिताय रहिहैँ रोय ॥ ३ ॥
कहौँ समुझि बिचारि कै, गहि नाम दृढ़ धरु टोय ।
जगजीवन ह्वै रहहु निर्भय, चरन चित्त समोय ॥ ४ ॥

(५)

कहाँ गयो मुरली को बजइया, कहाँ गयो रे ॥ टेक ॥
एक समय जब मुरली बजायो, सब सुनि मोहि रह्यो रे ।
जिनके भाग भये पूर्बज[1] के, ते वहि संग गह्यो रे ॥ १ ॥

---

(१) पूर्ब जन्म ।

खबरि न कोई केहुँ की पाई, को धौं कहाँ गयो रे।
ऐसे करता हरता यहि जग, तेऊ थिर न रह्यो रे॥ २॥
रे नर बौरे तैं कितान है, केहिँ गनती माँ है रे।
जगजीवनदास गुमान करहु नहिँ, सत्त नाम गहि रहु रे॥ ३॥

॥ बिरह ॥

(१)

सखी री करौं मैं कौन उपाई।
मैं तौ ब्याकुल निसि दिन डोलौं, उनहिँ दरद नहिँ आई॥१॥
काह जानि कै सुधि बिसराई, कछु गति जानि न जाई।
मैं तौ दासी कलपौं पिय बिनु, घर आँगन न सुहाई॥२॥
तलफि तलफि जल बिना मीन ज्यों, अस दुख मोहिँ अधिकाई।
निर्गुन नाह[1] बाँह गहि सेजिया, सूतहि हियरा जुड़ाई॥३॥
बिन सँग सूते सुख नहिँ कबहूँ, जैसे फूल कुम्हिलाई।
है जोगिनि मैं भस्म लगायौं, रहिउँ नयन टक लाई॥४॥
पैयाँ परौं मैं निरति निरखि कै, महिँ का देहु मिलाई।
सुरति सुमति करि मिलहिँ एक है, गगन मँदिल चलि जाई॥५॥
रहि यहि महल टहल महँ लागी, सत की सेज बिछाई।
हम तुम उनके सूति रहहि सँग, मिटै सबै दुचिताई॥६॥
जगजीवन सिव ब्रह्मा बिस्नू, मन नहिँ रहि ठहराई।
रबि ससि करि कुरबान ताहि छबि, पीवो दरस अघाई॥७॥

(२)

उनहीँ सौं कहियो मोरी जाय॥ टेक॥
ए सखि पैयाँ परि मैं बिनवौं, काहे हमैं डारिन बिसराय॥१॥
मैं का करौं मोर बस नाहीँ, दीन्ह्यो अहै मोहिँ भटकाय॥२॥
ए ससि साईं मोहिँ मिलावहु, देखि दरस मोर नैन जुड़ाय॥३॥
जगजीवन मन मगन होउँ मैं, रहौं चरन कमल लपटाय॥४॥

---

(१) पति।

(३)

अरी मोरे नैन भये बैरागी ॥ टेक ॥
भसम चढ़ाय मैं भइउँ जोगिनियाँ, सबै अभूषन त्यागी ।
तलफि तलफि मैं तन मन जारयो, उनहिं दरद नहिं लागी ॥१॥
निसु बासर मोहिं नींद हरी है, रहत एक टक लागी ।
प्रीति सों नैनन नीर बहतु है, पीपी पी बिनु जागी ॥२॥
सेज आय समुझाय बुझावहु, लेउँ दरस छबि माँगी ।
जगजीवन सखि तृप्त भये हैं, चरन कमल रस पागी ॥३॥

(४)

सखि बाँसुरी[1] बजाय कहाँ गयो प्यारो ॥ टेक ॥
घर की गैल बिसरि गइ मोहिं तें, अंग न बस्तु सँभारो ।
चलत पाँव डगमगत धरनि पर, जैसे चलत मतवारो ॥१॥
घर आँगन मोहिं नीक न लागै, सबद बान हिये मारो ।
लागि लगन मैं मगन वही सों, लोक लाज कुल कानि बिसारो ॥२॥
सुरत दिखाय मोर मन लीन्ह्यों, मैं तो चहौं होय नहिं न्यारो ।
जगजीवन छबि बिसरत नाहीं, तुम से कहौं सो इहै पुकारो ॥३॥

(५)

॥ होली ॥

कौनि बिधि खेलौं होरी, यहि बन माँ भुलानी ॥ टेक ॥
जोगिन ह्वै अँग भसम चढ़ायो, तनहिं खाक करि मानी ।
ढूँढ़त ढूँढ़त मैं थकित भई हौं, पिया पीर नहिं जानी ॥१॥
औगुन सब गुन एकौ नाहीं, माँगन ना मैं जानी ।
जगजीवन सखि सुखित होहु तुम, चरनन में लिपटानी ॥२॥

॥ प्रेम ॥

(१)

ऐसे साईं की मैं बलिहारियाँ री ।
ए सखि संग रंग रस मातिउँ, देखि रहिउँ अनुहरियाँ री ॥१॥

---

(१) भँवरगुफा की धुनि ।

गगन भवन माँ मगन भइउँ मैं, बिनु दीपक उजियरियाँ री ।
झलकि चमकि तहँ रूप बिराजे, मिटी सकल अँधियरियाँ री ॥२॥
काह कहौं कहिबे की नाहीं, लागि जाहि मन मँहियाँ री ।
जगजीवन वह जोती निरमल, मोती हीरा वरियाँ[1] री ॥३॥

(२)

साईं तुम सों लागो मन मोर ॥ टेक ॥
मैं तो भ्रमत फिरौं निसुबासर,
चितवौ तनिक कृपा करि कोर ॥ १ ॥
नहिं बिसरावहु नहिं तुम बिसरहु,
अब चित राखहु चरनन ठौर ॥ २ ॥
गुन ऐगुन मन आनहु नाहीं,
मैं तो आदि अंत को तोर ॥ ३ ॥
जगजीवन बिनती करि माँगै,
देहु भक्ति बर जानि कै थोर ॥ ४ ॥

(३)

गुरु बलिहारियाँ मैं जाउँ ॥ टेक ॥
डोरि लागी पोढ़ि, अब मैं जपहुँ तुम्हरा नाउँ ।
नाहिं इत उत जात मनुवाँ, गगन बासा गाँउ[2] ॥ १ ॥
महा निर्मल रूप छबि सत, निरखि नैन अन्हाउँ ।
नाहिं दुख सुख भर्म ब्यापै, तत्त नीचे आउँ[3] ॥ २ ॥
मारि आसन बैठि थिर ह्वै, काहु नाहिं डेराउँ ।
जगजीवन निरबान भे, सत सदा संगी आउँ ॥ ३ ॥

(४)

जोगिया भँगिया खवाइल, बौरानी फिरौं दिवानी ॥ टेक ॥
ऐसे जोगिया की बलि बलि जैहौं, जिन्ह मोहिं दरस दिखाइल ॥१॥
नहिं कर तें नहिं मुखहिं पियावै, नैनन सुरति मिलाइल ॥२॥

---

(१) वारी=न्योछावर । (२) गाँव । (३) हूँ ।

काह कहौं कहि आवत नाहीं, जिन्ह के भाग तिन्ह पाइल ॥३॥
जगजीवनदास निरखि छबि देखै, जोगिया मुरति मन भाइल ॥४॥

॥ विनय ॥

(१)

अब की बार तारु मोरे प्यारे, बिनती करि कै कहौं पुकारे ॥१॥
नहिँ बसि अहै केतो कहि हारे, तुम्हरे अब सब बनहि सवारे ॥२॥
तुम्हरे हाथ अहै अब सोई, और दूसरो नाहीं कोई ॥३॥
जो तुम चहत करत सो होई, जल थल महँ रहि जोत समोई ॥४॥
काहुक देत हो मंत्र सिखाई, सो भजि अंतर भक्ति दृढ़ाई ॥५॥
कहौं कछू कहा नहिँ जाई, तुम जानत तुम देत जनाई ॥६॥
जगत भगत केते तुम तारा, मैं अजान केतान बिचारा ॥७॥
चरन सीस मैं नाहीं टारौं, निर्मल मुरति निर्बान निहारौं ॥८॥
जगजीवन का अब बिस्वास, राखहु सतगुरु अपने पास ॥९॥

(२)

प्रभु गति जानि नाहीं जाइ।
अहै केतिक बुद्धि केहिँ महँ, कहै को गति गाइ ॥ १ ॥
सेस सम्भू थके ब्रह्मा, बिस्नु तारी लाइ।
है अपार अगाध गति प्रभु, केहू नाहीं पाइ ॥ २ ॥
भान गन ससि तीनि चौथो, लियौ छिनहिँ बनाइ।
जोति एकै कियो बिस्तर, जहाँ तहाँ समाइ ॥ ३ ॥
सीस दैकै कहौं चरनन, कबहुँ नहिँ बिसराइ।
जगजीवन के सत्य गुरु तुम, चरन की सरनाइ ॥ ४ ॥

(३)

अब मैं कवन गनती आउँ।
दियो जबहिँ लखाइ महिँ कहँ, तबहिँ सुमिरौं नाउँ ॥ १ ॥
समुझि ऐसे परत महिँ कहँ, बसे सरबस ठाउँ।
अहो न्यारे कहूँ[1] नाहीं, रूप की बलि जाउँ ॥ २ ॥

(१) कहीं।

नाम का बल दियो जेहि कहँ, राखि निर्भय गाउँ ।
काल को डर नाहिँ उहवाँ, भला पायो दाउँ ॥ ३ ॥
चरन सीसहिँ राखि निरखी, चाखि दरस अघाउँ ।
जगजीवन गुर करहु दाया, दास तुम्हरा आउँ ॥ ४ ॥

(४)

साईं को केतानि गुन गावै ।
सूझि बूझि तस आवै तेहि काँ, जेहि काँ जौन लखावै ॥ १ ॥
आपुहि भजत है आपु भजावत, आपु अलेख लखावै ।
जेहिँ कहँ अपनी सरनहिँ राखै, सोई भगत कहावै ॥ २ ॥
टारत नहीँ चरन तेँ कबहूँ, नाहिँ कबहूँ बिसरावै ।
सूरति खैँचि ऐँचि जब राखत, जोतिहिँ जोति मिलावै ॥ ३ ॥
सतगुर कियो गुरुमुखी तेहिकाँ, दूसर नाहिँ कहावै ।
जगजीवन ते भे सँग बासी, अंत न कोऊ पावै ॥ ४ ॥

(५)

प्रभुजी का बसि अहै हमारो ।
जब चाहत तब भजन करावत, चाहत देत बिसारी ॥ १ ॥
चाहत पल छिन छूटत नाहीँ, बहुत होत हितकारी ।
चाहत डारि[1] सूखि पल डारत, डारि देत संसारी ॥ २ ॥
कहँ लगि बिनय सुनावौँ तुम ते, मैँ तौ अहौँ अनारी ।
जगजीवन दास पास रहै चरनन, कबहूँ करहु न न्यारी ॥ ३ ॥

(६)

तुम सोँ यह मन लागा मोरा ॥ टेक ॥
करौँ अरदास[2] इतनी सुनि लीजे, तको तनक मोहिँ कोरा ॥ १ ॥
कहँ लगि ऐगुन कहौँ आपना, कामी कुटिल लोभी औ चोरा ॥२॥
तब के अब के बहु गुनाह भे, नाहिँ अंत कछु छोरा ॥३॥

---

(१) शाखा । (२) अर्ज़दाश्त, प्रार्थना ।

साईं अब गुनाह सब मेटहु, चितै आपनी ओरा ।।४।।
जगजीवन कै इतनी बिनती, टूटै प्रीति न डोरा ।।५।।

(७)

बालक बुद्धि हीन मति मोरी, भरमत फिरौं नाहिं दृढ़ डोरी ।।१।।
सूरति राखो चरनन मोरी, लागि रहै कबहूँ नहिं तोरी[1] ।।२।।
निरखत रहौं जाउँ बलिहारी, दास जानि कै नाहिं बिसारी ।।३।।
तुमहिं सिखाय पढ़ायो ज्ञाना, तब मैं धर्यौं चरन कै ध्याना ।।४।।
साईं समरथ तुम हौ मोरे, बिनती करौं ठाढ़ कर जोरे ।।५।।
अब दयाल ह्वै दाया कीजै, अपने जन कहँ दरसन दीजै ।।६।।
नाम तुम्हार मोहिं है प्यारा, सोई भजे घट भा उजियारा ।।७।।
जगजीवन चरनन दियो माथ, साहिब समरथ करहु सनाथ ।।८।।

(८)

तेरा नाम सुमिरि ना जाय ।
नहीं बस कछु मोर अहै, करहुँ कौन उपाय ।। १ ।।
जबहिं चाहत हितू करि कै, लेत चरनन लाय ।
बिसरि जब मन जात अहै, देत सब बिसराय ।। २ ।।
अजब ख्याल अपार लीला, अंत काहु न पाय ।
जीव जंत पतंग जग महँ, काहु ना बिलगाय ।। ३ ।।
करौं बिनती जोरि दोउ कर, कहत अहौं सुनाय ।
जगजीवन गुरु चरन सरनं, ह्वै तुम्हार कहाय ।। ४ ।।

(९)

साईं मोहिं भरोस तुम्हारा ।
मोरे बस नहिं अहै एको, तुमहिं करो निस्तारा ।। १ ।।
मैं अज्ञान बुद्धि है नाहीं, का करि सकौं बिचारा ।
जब तुम लेत पढ़ाय सिखावत, तब मैं प्रगट पुकारा ।। २ ।।

---

(१) तोड़ी ।

बहुतन भवसागर महँ बूड़त, तेहिँ उबारि कै तारा ।
बहुतन काँ जब कष्ट भया है, तिन कै कष्ट निवारा ॥ ३ ॥
अब तौ चरन कि सरनहिँ आयोँ, गह्यौँ मैँ पच्छ तुम्हारा ।
जगजीवन के साँईँ समरथ, मोहिँ बल अहै तुम्हारा ॥ ४ ॥

(१०)

साहिब अजब कुदरत तोर ।
देखि गति कहि जात नाहीँ, केतिक मति है मोर ॥ १ ॥
नचत सब कोउ काछि कछनी, भ्रमत फिर बिन डोर ।
होत औगुन आप तेँ, सब देत साहिब खोर[1] ॥ २ ॥
कौल करि जग पठै दीन्ह्यो, तोन डार्‌यो तोर[2] ।
करत कपट संत तेतीँ, कहैँ मोरी मोर ॥ ३ ॥
ऐसी जग की रीति आहै, कहा कहिये टेर ।
जगजीवनदास चरन गुरू के, सुरत करिये पोढ़ ॥ ४ ॥

(११)

चरनन तर दियो माथ, करिये अब मोहिँ सनाथ ।
दास करिकै जानी ॥ १ ॥
बूड़ा सब जग्त सार, सूझै नहिँ वार पार ।
देखि नैनन बूझिय हित आनी ॥ २ ॥
सुमति मोहिँ देउ सिखाय, आनि मेँ न रहि लुभाय ।
बुद्धिहीन भजनहीन, सुद्धि नाहिँ आनी ॥ ३ ॥
सहस फन तेँ सेस गावै, संकर तेहिँ ध्यान लावै ।
ब्रह्मा बेद परगट कहै बानी ॥ ४ ॥
कहौँ का कहि जात नाहिँ, जोती वा सर्ब माहिँ ।
जगजीवन दरस चहै, दीजै बरदानी ॥ ५ ॥

(१) दोष । (२) तोड़ ।

(१२)

आरत अरज लेहु सुनि मोरी, चरनन लागि रहै दृढ़ डोरी ॥१॥
कबहुँ निकट तें टारहु नाहीं, राखहु मोहिं चरन की छाहीं ॥२॥
दीजै केतिक बास यहँ कीजै, अघ कर्म मेटि सरन करि लीजै ॥३॥
दासन दास ह्वै कहौं पुकारी, गुन मोहिं नहिं तुम लेहु सँवारी ॥४॥
जगजीवन काँ आस तुम्हारी, तुम्हरी छबि मूरति पर वारी ॥५॥

(१३)

केतिक बूझि, का आरति करऊँ, जैसे रखिहहिं तैसे रहऊँ ॥१॥
नाहीं कछु बसि आहै मोरी, हाथ तुम्हारे आहै डोरी ॥२॥
जस चाहौ तस नाच नचावहु, ज्ञान बास करि ध्यान लगावहु ॥३॥
तुमहिं जपत तुमहीं बिसरावत, तुमहिं चिताइ सरन लै आवत ॥४
दूसर कवन एक हौ सोई, जेहिं काँ चाहौ भक्त सो होई ॥५॥
जगजीवन करि बिनय सुनावै, साहिब समरथ नहिं बिसरावै ॥६॥

(१४)

॥ होली ॥

यहि जग होरी, अरी मोहिं तें खेलि न जाई ।
साईं मोहिं बिसराय दियो है, तब तें पर्यौं भुलाई ॥१॥
सुख परि सुद्धि गई हरि मोरी, चित्त चेत नहिं आई ।
अनहित हित करि जानि बिषै महँ, रह्यो ताहि लपटाई ॥२॥
यहि साँचे महँ पाँचौ नाचैं, अपनि अपनि प्रभुताई ।
मैं का करौं मोर बस नाहीं, राखत हैं अरुझाई ॥३॥
गगन मँदिल चलि थिर ह्वै रहिये, तकि छबि छकि निरखाई ।
जगजीवन सखि साईं समरथ, लेहैं सबै बनाई ॥४॥

॥ साध ॥

(१)

जब मन मगन भा मस्तान ।
भयो सीतल महा कोमल, नाहिं भावै आन ॥ १ ॥

डोरि लागी पोढ़ि गुरु तें, जग्त तें बिलगान।
अहै मता अगाध तिन का, करै को पहिचान ॥ २ ॥
अहैं ऐसे जग्त माँ कोइ, कहत आहैं ज्ञान।
ऐसे निर्मल ह्वै रहे हैं, जैसे निर्मल भान ॥ ३ ॥
बड़ा बल है ताहि के रे, थमा है असमान।
जगजीवन गुरु चरन परि कै, निर्गुनं धरि ध्यान ॥ ४ ॥

(२)

गऊ निकसि बन जाहीं, बाछा उन घर ही माहीं ॥ १ ॥
तृन चरहिं चित्त सुत पासा, यहि जुक्ति साध जग बासा ॥ २ ॥
साध तें बड़ा न कोई, कहि राम सुनावत सोई ॥ ३ ॥
राम कही हम साधा, रस एक मता औराधा ॥ ४ ॥
हम साध साध हम माहीं, कोउ दूसर जानै नाहीं ॥ ५ ॥
जिन दूसर करि जाना, तेहिं होइहि नरक निदाना ॥ ६ ॥
जगजीवन चरन चित लावै, सो कहि के राम समुझावै ॥ ७ ॥

॥ भेद ॥

(१)

जा के लगी अनहद तान हो, निरबान निरगुन नाम की ॥ १ ॥
जिकर करके सिखर हेरे, फिकर साररंकार की ॥ २ ॥
जा के लगी अजपा गगन झलकै, जोति देख निसान की ॥ ३ ॥
मद्ध मुरली मधुर बाजे, बाँए किँगरी सारँगी ॥ ४ ॥
दहिने जो घंटा संख बाजे, गैब धुन झनकार की ॥ ५ ॥
अकह की यह कथा न्यारी, सीखा नाहीं आन है ॥ ६ ॥
जगजीवन प्रानहि सोधि के, मिलि रहे सतनाम है ॥ ७ ॥

(२)

गगरिया मोरी चित सोँ उतरि न जाय ॥ टेक ॥
इक कर करवा[1] एक कर उबहनि[2], बतियाँ कहौं अरथाय ॥ १ ॥

(१) डाल। (२) रस्सी।

सास ननद घर दारुन आहै, ता सोँ जियरा डेराय ॥२॥
जो चित छूटै गागर फूटै, घर मोरि सासु रिसाय ॥३॥
जगजीवन अस भक्ती मारग, कहत अहैँ गोहराय ॥४॥

॥ ज्ञान ॥

आनंद के सिंध मेँ आन बसे, तिन को न रह्यो तन को तपनो ।
जब आपु मेँ आपु समाय गये, तब आपु मेँ आपु लह्यो अपनो ॥
जब आपु मेँ आपु लह्यो अपनो, तब अपनो ही जाप रह्यो जपनो ।
जब ज्ञान को भान प्रकास भयो, जगजीवन होय रह्यो सपनो ॥

॥ कर्म भर्म ॥

कोउ बिन भजन तरिहैँ नाहिँ ।
करैँ जाय अचार केतौ, प्रात नित्त अन्हाहिँ ॥ १ ॥
दान पुन्यं करि तपस्या, बर्त बहुत रहाहिँ ।
त्यागि बस्ती बैठि बन महँ, कंदमूरहिँ खाहिँ ॥ २ ॥
पाठ करि पढ़ि बहुत बिद्या, रैन दिनहिँ बकाहिँ ।
गाय बहुत बजाय बाजा, मनहिँ समुझत नाहिँ ॥ ३ ॥
करहिँ स्वासा बंद कष्टित, भौँह की गति आहिँ ।
साधि पवन चढ़ाय गगनहिँ, कमल उलटै नाहिँ ॥ ४ ॥
साध नहिँ केहु कीन्ह ऐसे, सीखि बहुत कहाहिँ ।
प्रीति रस मन नाहिँ उपजत, परे ते भव माहिँ ॥ ५ ॥
जस संजोग बिजोग तैसे, तत अच्छर दुइ आहिँ ।
रटत अंतर भेँट गुरु तेँ, मंत्र अजपा माहिँ ॥ ६ ॥
कहौँ प्रगट पुकारि जेहि के, प्रीति अंतर आहिँ ।
जगजीवन दास रीति अस, तब चरन महँ मिलि जाहिँ ॥ ७ ॥

॥ उपदेश ॥

(१)

अरे मन चरन तेँ रहु लागि ।
जोरि दुइ कर सीस दैकै, भक्ति बर ले माँगि ॥ १ ॥

और आसा झूठि आहै, गरम जैसे आगि ।
परहिँगे सो जरहिँगे पै, देहु सर्ब तियागि ॥ २ ॥
समो फिरि एहु पाइहै नहिँ, सोउ नहिँ गहि जागि ।
चेतु पाछिल सुद्धि करिकै, दरस रस रहु पागि ॥ ३ ॥
कठिन माया है अपरबल, संग सब के लागि ।
सूल तेँ कोइ बचे बिरले, गगन बैठे भागि ॥ ४ ॥
भर्म नहिँ तहँ भयो निर्भय, सच्च रत बैरागि ।
जगजीवन निरबान भे, गुरु दया जागे भागि ॥ ५ ॥

(२)

मन तन खाक करि कै जानु ।
नीचे तेँ ह्वै नीच, तेहि तेँ नीच आपुहि मानु ॥ १ ॥
त्यागु मैँ तैँ दीन ह्वै रहु, तजहु गर्ब गुमान ।
देतु हौँ उपदेस याहै, निरखु सो निरबान ॥ २ ॥
कर्म धागा लाय बाँधा, हिंदु मूसलमान ।
खैँचि लीन्ह्यो तोरि धागा, बिरल कोइ बिलगान ॥ ३ ॥
खाक है सब खाक होइहि, समुझि आपन ज्ञान ।
सबद सत कहि प्रगट भाखौँ, रहहि नाम निदान ॥ ४ ॥
काल को डर नाहिँ तिन्ह काँ, चौथ[1] रहि चोगान ।
जगजीवन दास सतगुरु के, चरन रहि लपटान ॥ ५ ॥

(३)

मन मेँ जेहिँ लागी जस भाई ।
सो जानै तैसे अपने मन, का सोँ कहै गोहराई ॥ १ ॥
साँची प्रीति की रीति है ऐसी, राखत गुप्त छिपाई ।
झूठे कहुँ सिखि लेत अहहिँ पढ़ि, जहँ तहँ झगरा लाई ॥ २ ॥
लागे रहत सदा रस पागे, तजे अहहिँ दुचिताई ।
ते मस्ताने तिनहीँ जाने, तिनहिँ को देइ जनाई ॥ ३ ॥

(१) चौथे लोक में ।

राखत सीस चरन तेँ लागा, देखत सीस उठाई ।
जगजीवन सतगुरु की मूरति, सूरति रहे मिलाई ॥ ४ ॥

(४)

जो कोइ घरहिँ बैठा रहै ।
पाँच संगत करि पचीसो, सबद अनहद लहै ॥ १ ॥
दीन सीतल लीन मारग, सहज बाहनि बहै ।
कुमति कर्म कठोर काठहिँ, नाम पावक दहै ॥ २ ॥
मारि मैँ तैँ लाय डोरी, पवन थाम्हे रहै ।
चित्त कर तहँ सुमति साधू, सुरति माला गहै ॥ ३ ॥
राति दिन छिन नाहिँ छूटै, भक्त सोई अहै ।
जगजीवन कोइ संत बिरला, सबद की गति कहै ॥ ४ ॥

(५)

सत्त नाम बिना कहौ, कैसे निस्तरिहौ ॥ टेक ॥
कठिन अहै माया जार, जा को नहिँ वार पार,
कहौ काह करिहौ ॥ १ ॥
हो सचेत चौंकि जागु, ताहि त्यागि भजन लागु,
अंत भरम परिहौ ॥ २ ॥
डारहि जमदूत फाँसि, आइहि नहिँ रोइ हाँसि,
कौन धीर धरिहौ ॥ ३ ॥
लागहि नहिँ कोइ गोहारि, लेइहि नहिँ कोइ उबारि,
मनहिँ रोइ रहिहौ ॥
भगनी सुत नारि भाइ, मातु पितु सखा सहाइ,
तिनहिँ कहा कहिहौ ॥
काहुक नहिँ कोऊ जगत, मनहिँ अपने जानु गत,
जीवत मरि जाहु दीन अंतर माँ रहिहौ ।

सिद्ध साध जोगि जती, जाइहि मरि सब कोई,
रसना सतनाम गहि रहिहौ ॥ ७ ॥
जगजीवनदास रहै, बैठे सतगुरु के पास,
चरन सीस धरि रहिहौ ॥ ८ ॥

यारी साहिब

[संक्षिप्त जीवन-चरित्र के लिए देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ १२०]

॥ गुरुदेव ॥

॥ झूलना ॥

गुरु के चरन की रज लै के, दोउ नैन के बिच अंजन दीया ॥
तिमिर मेटि उँजियार हुआ, निरंकार पिया को देखि लिया ॥
कोटि सुरज तहँ छिपे घने, तीनि लोक धनी धन पाय पिया ॥
सतगुरु ने जो करी किरपा, मरि के यारी जुग जुग जीया ॥

॥ अनहद शब्द ॥

(१)

झलमिल झिलमिल बरखै नूरा, नूर जहूर सदा भरपूरा ॥१॥
रुनझुन रुनझुन अनहद बाजे, भँवर गुँजार गगन चढ़ि गाजे ॥२॥
रिमझिम रिमझिम बरखै मोती, भयो प्रकास निरंतर जोती ॥३॥
निरमल निरमल निरमल नामा, कह यारी तहँ लियो बिस्रामा ॥४॥

(२)

सुन्न के मुकाम में बेचून[1] की निसानी है ॥ १ ॥
जिकिर[2] रूह सोई अनहद बानी है ॥ २ ॥
अगम को गम्म नाहीं झलक पिसानी[3] है ॥ ३ ॥
कहै यारी आपा चीन्हे सोई ब्रह्मज्ञानी है ॥ ४ ॥

॥ प्रेम ॥

(१)

बिरहिनी मंदिर दियना बार ॥ टेक ॥
बिन बाती बिन तेल जुगति सों, बिन दीपक उँजियार ॥ १ ॥

(१) मालिक। (२) सुमिरन। (३) पेशानी, माथा।

प्रान पिया मेरे गृह आयो, रचि पचि सेज सँवार ॥ २ ॥
सुखमन सेज परम तत रहिया, पिय निर्गुन निरकार ॥ ३ ॥
गावहु री मिलि आनँद मंगल, यारी मिलि के यार ॥ ४ ॥

(२)

होली

हौं तो खेलौं पिया सँग होरी ॥ १ ॥
दरस परस पतिबरता पिय की, छबि निरखत भइ बौरी ॥२॥
सोरह कला सँपूरन देखौं, रबि ससि भे इक ठौरी ॥३॥
जब तें दृष्टि परो अबिनासी, लागो रूप ठगौरी ॥४॥
रसना रटत रहत निस बासर, नैन लगो यहि ठौरी ॥५॥
कह यारी भक्ती करु हरि की, कोई कहै सो कहौ री ॥६॥

॥ भेद ॥

(१)

भूलना

दोउ मूँदि के नैन अंदर देखा, नहिँ चाँद सुरज दिन राति है रे।
रोसन समा बिनु तेल बाती, उस जोति सोँ सबै सिफाति[1] है रे॥
गोता मारि देखो आदम, कोउ अवर नाहिँ सँग साथि है रे।
यारी कहै तहकीक किया, तू मलकुलमौत[2] की जाति है रे॥

(२)

भूलना

जमीँ बरखै असमान भीँजे, बिन बातिहिँ तेल जलाइये जी।
जहाँ नूर तजल्ली[3] बीच है रे, बेरंगी रंग दिखाइये जी॥
फूल बिना जहि भल होवै, तदि हीर[4] की लज्जत पाइये जी।
यारी कहै यहि कौन बूझै, यह का सोँ बात जनाइये जी॥

॥ उपदेश ॥

(१)

गहने के गढ़े तेँ कहीँ सोनो भी जातु है,
सोनो बीच गहनो और गहनो बीच सोन है।

(१) गुन। (२) जमराज। (३) प्रकाश। (४) तत्व, गूदा।

भीतर भी सोनो और बाहर भी सोन दीसै,
सोनो तो अचल अंत गहनो को मीच[1] है ॥
सोन को तो जानि लीजै गहनो बरबाद कीजै,
यारी एक सोनो ता में ऊँच कवन नीच है ॥

(१)

झूलना

बिन बंदगी इस आलम में, खाना तुझे हराम है रे ।
बंदा करै सोइ बंदगी, खिदमत में आठो जाम है रे ॥
यारी मौला बिसारि के, तू क्या लागा बेकाम है रे ।
कुछ जीते बंदगी करले, आखिर को गोर[2] मुकाम है रे ॥

॥ मिश्रित ॥

कबित्त

आँधरे को हाथी हरि, हाथ जा को जैसो आयो ।
बूझो जिन जैसो, तिन तैसोई बतायो है ॥ १ ॥
टकाटोरी दिन रैन, हिये हू के फूटे नैन ।
आँधरे को आरसी में, कहा दरसायो है ॥ २ ॥
मूल की खबरि नाहिँ, जा सोँ यह भयो मुलुक ।
वा को बिसारि भोँदू, डारै[3] अरुझायो है ॥ ३ ॥
आपनो सरूप रूप, आपु माहिँ देखै नाहिँ ।
कहै यारी आँधरे ने, हाथी कैसो पायो है ॥ ४ ॥

---

(१) मृत्यु । (२) क़बर । (३) शाखा में ।

दरिया साहिब (बिहार वाले)

[संक्षिप्त जीवन-चरित्र के लिए देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ १२१]

॥ अनहद ॥

होरी सद संत समाज संतन गाइया ॥ टेक ॥
बाजा उमँग झाल झनकारा, अनहद धुन घहराइया ।
झरि झरि परत सुरंग रंग तहँ, कौतुक नभ में छाइया ॥ १ ॥
राग रुबाब अघोर तान तहँ, झिनझिन जंतर लाइया ।
छवो राग छत्तीस रागिनी, गंधर्ब सुर सब गाइया ॥ २ ॥
पाँच पचीस भवन में नाचहिं, भर्म अबीर उड़ाइया ।
कह दरिया चित चन्दन चर्चित, सुन्दर सुभग सुहाइया ॥ ३ ॥

॥ बिरह ॥

अमर पति प्रीतम काहे न आवो ।
तुम सत बर्ग हौ सदा सुहावन, किमि नहिं उर गहि लावोँ ॥१॥
बरषा बिबिधि प्रकार पवन अति, गरजि घुमरि घहरावो ।
बुन्द अखंडित मंडित महि पर, छटा चमकि चहुँ जावो ॥२॥
झीँगुर झनकि झनकि झनकारहि, बान बिरह उर लावो ।
दादुर मोर सोर सघन बन, पिय बिनु कछु न सुहावो ॥३॥
सरिता उमड़ि घुमड़ि जल छावो, लघु दिर्घ सब बढ़ियावो ।
थाके पंथ पथिक नहिं आवत, नैनन में झरि लावोँ ॥४॥
केहि पूछौँ पछितावत दिल में, जो परि होइ उड़ि धावोँ ।
जो पिय मिलैं तो मिलौँ प्रेम भरि, अमि[1] भाजन भरि लावोँ ॥५॥
है बिस्वास आस दिल मेरे, फिरि दृग दर्सन पावोँ ।
कह दरिया धन भाग सुहागिनि, चरन कँवल लपटावो ॥६॥

(१) अमृत से बरतन को भर लूँ ।

॥ प्रेम ॥

तुम मेरो साईं मैं तेरो दास, चरन कँवल चित मेरो बास
पल पल सुमिरौं नाम सुबास, जीवन जग में देखो दास।
जल में कुमुदिनि चन्द अकास, छाइ रहा छबि पुहुप बिलास।
उनमुनि गगन भया परगास, कह दरिया मेटा जम त्रास।

॥ विनय ॥

(१)

अब के बार बकस मोरे साहिब, तुम लायक सब जोग हे।
गुनह[1] बकसिहो सब भ्रम नसिहो, रखिहो आपन पास हे।
अछै बिरिछि तरि लै बैठैहो, तहवाँ धूप न छाँह हे।
चाँद न सुरज दिवस नहिं तहवाँ, निहँ निसु होत बिहान हे॥
अमृत फल मुख चाखन दैहो, सेज सुगन्धि सुहाय हे॥
जुग जुग अचल अमर पद दैहो, इतनी अरज हमार हे॥
भौसागर दुख दारुन मिटि है, छुटि जैहै कुल परिवार हे॥
कह दरिया यह मंगल मूला, अनूप फुलै जहाँ फूल हे॥

(२)

मैं जानहुँ तुम दीन-दयाल, तुम सुमिरे नहिं तपत काल॥१
ज्यौं जननी प्रतिपाले सूत[2], गर्भ बास जिन दियो अकूत॥२
जठर अगिनि तें लियो है काढ़ि, ऐसी वा की ठवर गाढ़ि॥३
गाढ़े जो जन सुमिरन कीन्ह, परघट जग में तेहि गति दीन्ह॥४
गरबी मारेउ गैब बान, संत को राखेउ जीव जान॥५
जल में कुमुदिनि इन्दु[3] अकास, प्रेम सदा गुरु चरन पास॥६
जैसे पपिहा जल से नेह, बुन्द एक बिस्वास तेह॥७
स्वर्ग पताल मृत मंडल तीनि, तुम ऐसो साहिब मैं अधीन॥८
जानि आयो तुम चरन पास, निज मुख बोलेउ कहेउ दास॥९
सत पुरुष वचन नहिं होहिं आन, बलु पुरब से पच्छिम उगहि भान॥१
कह दरिया तुम हमहिं एक, ज्यौं हारिल की लकड़ी टेक[4]॥११

॥ भेद ॥

मानु सबद जो करु बिबेक, अगम पुरुष जहँ रूप न रेख ॥१॥
अठदल कँवल सुरति लौ लाय, अजपा जपि के मन समुझाय ॥२॥
भँवर गुफा में उलटि जाय, जगमग जोति रहे छबि छाय ॥३॥
बंक नाल गहि खैंचे सूत, चमके बिजुली मोती बहुत ॥४॥
सेत घटा चहुँ ओर घनघोर, अजरा जहवाँ होय अँजोर ॥५॥
अमिय कँवल निज करो बिचार, चुवत बुन्द जहँ अमृत धार ॥६॥
छव चक्र खोजि करो निवास, मूल चक्र जहँ जिव को बास ॥७॥
काया खोजि जोगी भुलान, काया बाहर पद निरबान ॥८॥
सतगुर सबद जो करै खोज, कहैं दरिया तब पूरन जोग ॥९॥

॥ उपदेश ॥

(१)

पेड़ को पकरु तब डारि पालो मिलै,
डारि गहि पकर नहिं पेड़ यारा[1] ॥
देख दिब दृष्टि असमान में चन्द्र है,
चन्द्र की जोति अनगिनित तारा ॥ १ ॥
आदि औ अंत सब मध्य है मूल में,
मूल में फूल धौं केति डारा ।
नाम निर्गुन निर्लेप निर्मल बरै,
एक से अनंत सब जगत सारा ॥ २ ॥
पढ़ि बेद कितेब बिस्तार बक्ता कथै,
हारि बेचून वह नूर न्यारा ।
निर्पेच निर्बान निःकर्म निःभर्म वह,
एक सर्वज्ञ सत नाम प्यारा ॥ ३ ॥

(१) हे यार पेड़ पकड़ने से डाल पत्ती भी मिल जायगी, पर डाल के पकड़ने से पेड़ नहीं हाथ आवैगा ।

तजु मान मनी करु काम के काबु[1] यह,
खोजु सतगुरू भरपूर सूरा।
असमान कै बुन्द गरकाब[2] हूआ,
दरियाव की लहरि कहि बहुरि मूरा[3] ॥ ४ ॥

(२)

भीतर मैलि चहल[4] कै लागी, ऊपर तन का धोवै है ॥१॥
अविगति मुरति महल के भीतर, वा का पंथ न जोवै है ॥२॥
जुगुति बिना कोइ भेद न पावै, साधु सँगति का गोवै है ॥३॥
कह दरिया कुटने बे गीदी[5], सीस पटकि का रोवै है ॥४॥

॥ मिश्रित ॥

सत सुकृत दूनोँ खंभा हो, सुखमनि लागलि डोरि।
अरध उरध दूनोँ मचवा[6] हो, इंगला पिँगला झकझोरि ॥१॥
कौन सखी सुख बिलसै हो, कौन सखी दुख साथ।
कौन सखिया सुहागिनि हो, कौन कमल गहि हाथ ॥२॥
सत सनेह सुख बिलसै हो, कपट करम दुख साथ।
पिया-मुख सखिया सुहागिनि हो, राधा कमल गहि हाथ ॥३॥
कौन झुलावै कौन झूलहिँ हो, कौन बैठलि खाट।
कौन पुरुष नहिँ झूलहिँ हो, कौन रोकै बाट ॥४॥
मन रे झुलावै जिव झूलहिँ हो, सक्ति बैठलि खाट।
सत्त पुरुष नहिँ झूलहिँ हो, कुमति रोकै बाट ॥५॥
सुर नर मुनि सब झूलहिँ हो, झूलहिँ तीनि देव।
गनपति फनपनि[7] झूलहिँ हो, जोगी जती सुकदेव ॥६॥
जीव जंतु सब झूलहिँ हो, झूलहिँ आदि गनेस।

---

(१) बस में। (२) पानी में डूब गया। (३) मुड़ा (४) कीचड़। (५) भोँदू, मूढ़। (६) मचिया या खटोला जिस पर बैठ कर हिँडोला झूलते हैं। (७) शेष नाग।

कल्प कोटि लै भूलहिँ हो, कोइ कहै न सँदेस ॥७॥
सत्त सब्द जिन पावल हो, भयो निर्मल दास ।
कहै दरिया दर देखिय हो, जाय पुरुष के पास ॥८॥

दरिया साहिब (मारवाड़ वाले)

[संक्षिप्त जीवन-चरित्र के लिये देखो संतबानी सग्रह भाग १ पृष्ठ १२६]

॥ नाम ॥

नाम बिन भाव करम नहिँ छूटै ॥ टेक ॥
साध संग औ राम भजन बिन, काल निरंतर लूटै ॥१॥
मल सेती जो मल को धोवै, सो मल कैसे छूटै ॥२॥
प्रेम का साबुन नाम का पानी, दुई मिलि ताँता टूटै ॥३॥
भेद अभेद भरम का भाँडा, चौड़े परि परि फूटै ॥४॥
गुरुमुख सबद गहै उर अंतर, सकल भरम से छूटै ॥५॥
राम का ध्यान धरहु रे प्रानी, अमृत का मेँह बूटै[१] ॥६॥
जन दरियाव अरप दे आपा, जरा मरन तब टूटै ॥७॥

॥ प्रेम ॥

(१)

बाबल[२] कैसे बिसरा जाई ।
यदि मैँ पति सँग रल खेलूँगी, आपा धरम समाई ॥टेक॥
सतगुर मेरे किरपा कीन्ही, उत्तम बर परनाई[३] ।
अब मेरे साईँ को सरम पड़ैगी, लेगा चरन लगाई ॥१॥
थे[४] जानराय मैँ बाली भोली, थे निर्मल मैँ मैली ।
वे बतरायेँ[५] मैँ बोल न जानू, भेद न सकूँ सहेली ॥२॥
थे ब्रह्म भाव मैँ आतम कन्या, समझ न जानूँ बानी ।
दरिया कहै पति पूरा पाया, यह निस्चय करि जानी ॥३॥

---

(१) बरसै। (२) बाप। (३) ब्याह कराया। (४) तुम। (५) बात करैं।

(२)

कहा कहूँ मेरे पिउ की बात । जो रे कहूँ सोइ अंग सुहात ॥टेक॥
जब मैं रही थी कन्या कारी । तब मेरे करम हता[1] सिर भारी ॥१॥
जब मेरी पिउ से मनसा दौड़ी । सतगुरु आन सगाई जोड़ी ॥२॥
तब मैं पिउ का मंगल गाया । जब मेरा स्वामी ब्याहन आया ॥३॥
हथलेवा दै बैठी संगा । तब मोहिं लीन्ही बायें अंगा ॥४॥
जन दरिया कहै मिटि गइ दूती[2] । आपा अरपि पीव सँग सूती ॥५॥

॥ भेद ॥

पतिब्रता पति मिली है लाग । जहँ गगन मँडल में परम भाग ॥टेक॥
जहँ जल बिन कँवला बहु अनंत । जहँ बपु[3] बिन भौंरा गोह[4] करंत ॥१॥
अनहद बानी अगम खेल । जहँ दीपक जरै बिन बाती तेल ॥२॥
जहँ अनहद सबद है करत घोर । बिन मुख बोलै चात्रिक मोर ॥३॥
बिन रसना गुन उदत[5] नार । बिन पग पातर निरतकार[6] ॥४॥
जहँ जल बिन सरवर भरा पूर । जहँ अनँत जोर बिन चंद सूर ॥५॥
बारह मास जहँ रितु बसंत । ध्यान धरैं जहँ अनँत संत ॥६॥
त्रिकुटी सुखमन चुवत छीर । बिन बादल बरखै मुक्ति नीर ॥७॥
अमृत धारा चलै सीर[7] । कोइ पीवै बिरला संत धीर ॥८॥
ररंकार धुन अरूप एक । सुरत गही उनहीं की टेक ॥९॥
जन दरिया बैराट चूर । जहँ बिरला पहुँचै संत सूर ॥१०॥

॥ पारख ॥

जा के उर उपजी नहिं भाई । सो क्या जाने पीर पराई ॥टेक॥
ब्यावर[8] जानै पीर की सार । बाँझ नार क्या लखै बिकार ॥१॥
पतिव्रता पति को ब्रत जानै । बिभचारिनि मिलि कहा बखानै ॥२॥
हीरा पारख जौहरि पावै । मूरख निरख के कहा बतावै ॥३॥
लागा घाव कराहै सोई । कौतुकहार[9] के दर्द न कोई ॥४॥

(१) था । (२) द्वैत भाव । (३) शरीर । (४) गुंजार । (५) गाती है । (६) वेश्या नाचती है । (७) ठंडी । (८) लड़कौरी । (९) बनावट करनेवाला, तमाशा देखने वाला ।

राम नाम मेरा प्रान-अधार। सोई राम रस पीवनहार ॥५॥
जन दरिया जानैगा सोई। (जाके)प्रेम की भाल कलेजे पोई ॥६॥

॥ मिश्रित ॥

संतो कहा गृहस्थ कहा त्यागी।
जेहि देखू तेहि बाहर भीतर, घट घट माया लागी ॥टेक॥
माटी की भीत पवन का थंभा, गुन औगुन से छाया।
पाँच तत्त आकार मिलाकर, सहजाँ गिरह बनाया ॥१॥
मन भयो पिता मनसा भइ माई, दुख सुख दोनोँ भाई।
आसा तृस्ना बहिनेँ मिलकर, गृह की सौँज[1] बनाई ॥२॥
मोह भयो पुरुष कुबुधि भइ घरनी[2], पाँचो लड़का जाया।
प्रकृति अनंत कुटुंबी मिलकर, कलहल[3] बहुत उपाया ॥३॥
लड़कोँ के सँग लड़की जाई, ता का नाम अधीरी।
बन मेँ बैठी घर घर डोलै, स्वारथ संग खपी री ॥४॥
पाप पुन्न दोउ पाड़ पड़ोसी, अनँत बासना नाती।
राग द्वेष का बंधन लागा, गिरह बना उतपाती ॥५॥
कोइ गृह माँडि[4] गिरह मेँ बैठा, बैरागी बन बासा।
जन दरिया इक राम भजन बिन, घट घट मेँ घर बासा ॥६॥

दूलनदासजी

[संक्षिप्त जीवन-चरित्र के लिये देखो संतबानी संग्रह, भाग १ पृष्ठ १३३]

॥ नाम महिमा ॥

(१)

कोई बिरला यहि बिधि नाम कहै ॥ टेक ॥
मंत्र अमोल नाम दुइ अच्छर, बिनु रसना रट लागि रहै ॥१॥
होठ न डोलै जीभ न बोलै, सूरति धरनि दिढ़ाइ गहै ॥२॥

(१) सामान। (२) स्त्री। (३) झगड़ा। (४) बनाकर।

दिन औ राति रहै सुधि लागी, यहि माला यहि सुमिरन है ॥३॥
जन दूलन सतगुरन बतायो, ता की नाव पार निबहै ॥४॥

(२)

बाजत नाम नौबति आज ।
है सावधान सुचित्त सीतल, सुनहु गैब अवाज ॥१॥
सुख-कंद अनहद नाद सुनि, दुख दुरित[1] क्रम भ्रम भाज ।
सतलोक बरसो पानि, धुनि निर्बान यहि मन बाज ॥२॥
तोइँ चेत चित दै प्रेम मगन, अनंद आरति साज ।
घर राम आये जानि, भइनि[2] सनाथ बहुरा[3] राज ॥३॥
जगजिवन सतगुरु कृपा पूरन, सुफल भे जन काज ।
धनि भाग दूलनदास तेरे, भक्ति तिलक बिराज ॥४॥

(३)

मन वहि नाम की धुनि लाउ ।
रटु निरंतर नाम केवल, अवर सब बिसराउ ॥१॥
साधि सूरति आपनो, करि सुवा[4] सिखर[5] चढ़ाउ ।
पोखि प्रेम प्रतीत तें, कहि राम नाम पढ़ाउ ॥२॥
नामही अनुरागु निसु दिन, नाम के गुन गाउ ।
बनी तौ का अबहिं, आगे और बनी बनाउ ॥३॥
जगजिवन सतगुरु बचन साचे, साच मन माँ लाउ ।
करु बास दूलनदास सत माँ, फिरि न यहि जग आउ ॥४॥

(४)

जब गज अरध नाम गुहरायो ।
जब लगि आवै दूसर अच्छर, तब लगि आपुहि धायो ॥१॥
पाँय पियादे भे करुनामय, गरुड़ासन बिसरायो ।
धाय गजंद गोद प्रभु लीन्हो, आपनि भक्ति दिढ़ायो ॥२॥

---

(१) दूर हुए । (२) हुई । (३) पलटा, लौटा । (४) तोता । (५) पहाड़ की चोटी ।

मीरा को बिष अमृत कीन्हो, बिमल सुजस जग छायो ।
नामदेव हित कारन प्रभु तुम, मिर्तक गाय जियायो ॥३॥
भक्त हेत तुम जुग जुग जनमेउ, तुमहिँ सदा यह भायो ।
बलि बलि दूलनदास नाम की, नामहिँ तेँ चित लायो ॥४॥

॥ भेद ॥

(१)

साईँ तेरो गुप्त मर्म हम जानी ।
कस करि कहौँ बखानी ॥ टेक ॥
सतगुरु संत भेद मोहिँ दीन्हा, जग से राखा छानी ।
निज घर का कोउ खोज न कीन्हा, करम भरम अटकानी ॥१॥
निज घर है वह अगम अपारा, जहाँ बिराजै स्वामी ।
ता के परे अलोक अनामी, जा का रूप न नामी ॥२॥
ब्रम्ह रूप धरि सृस्टि उपाई, आप रहा अलगानी ।
बेद कितेब की रचन रचाई, दस औतार धरानी ॥३॥
निज माता सीता सोइ राधा, जिन पितु राम सुवामी ।
दोउ मिलि जीवन बंद छुड़ाया, निज पद मेँ दिया ठामी ॥४॥
दूलनदास के साईँ जगजीवन, निज सुत जक्त पठानी ।
मुक्ति द्वार की कूँची दीन्ही, ता तेँ कुलुफ खुलानी ॥५॥

॥ दोहा ॥

दूलन यह मत गुप्त है, प्रगट न करौ बखान ।
ऐसे राखु छिपाय मन, जस बिधवा औधान ॥६॥

(२)

देख आयोँ मैँ तो साईँ की सेजरिया ।
साईँ की सेजरिया सतगुरु की डगरिया ॥१॥
सबदहि ताला सबदहि कूँची, सब्द की लगी है जँजिरिया ॥२॥

सबद ओढ़ना सबद बिछौना, सबद की चटक चुनरिया ॥३॥
सबदसरूपी स्वामी आप बिराजैं, सीस चरन में धरिया ॥४॥
दूलनदास भजु साईं जगजीवन, अगिन से अहँग उजरिया ॥५॥

॥ चेतावनी ॥

(१)

पछितात क्या दिन जात बीते, समुझ करु नर चेत रे।
अंध तेरे कंध सिर पर, काल डंका देत रे ॥१॥
हुसियार ह्वै गुन गाव प्रभु के, ठाढ़ रहु गुरु खेत रे।
ताके रहै छूटै नहीं, जिमि राहु रबि ससि केत रे ॥२॥
जम द्वार तर सब पीसिगे, चर अचर निन्दक जेत रे।
नहिं पियत अमृत नाम रस, भरि स्वास सुरति सचेत रे ॥३॥
मद मोह महुवा दारु दुख, विष का पियाला लेत रे।
जग नात गोत बिसारि सब, हर दम गुरू से हेत रे ॥४॥
सगलो सुपन अपना वही, जिस रोज परत सँकेत रे।
वह आइ सिरजनहार हरि, सतनाम भौजल सेत रे।
जन दुलन सतगुरु चरन बंदत, प्रेम प्रीति समेत रे ॥५॥

(२)

तू काहे को जग में आया, जो पै नाम से प्रीति न लाया रे ॥टेक॥
तृस्ना काम सवाद घनेरे, मन से नहिं बिसराया रे।
भोग बिलास आस निस बासर, इतउत चित भरमाया रे ॥१॥
त्रिकुटी तिरथ प्रेम जल निर्मल, सुरत नहीं अन्हवाया रे।
दुर्मति करम मैल सब मन के, सुमिरि सुमिरिन छुड़ाया रे ॥२॥
कहँ से आयो कहँ को जैहै, अंत खोज नहिं पाया रे।
उपजि उपजि के बिनसि गये सब, काल सबै जग खाया रे ॥३॥
कर सतसंग आपने अंतर, तजि मन मोह औ माया रे।
जन दूलन बल बल सतगुरु के, जिन मोहिं अलख लखाया रे ॥४॥

|| उपदेश ||

(१)

बोल मनुआँ राम राम || टेक ||

सत्त जपना और सुपना, जिकर लावो अष्ट जाम ||१||
समुझि बूझि बिचारि देखो, पिंड पिंजरा घूम धाम ||२||
बालमीकि हवाल पूछो, जपत उलटा सिद्ध काम ||३||
दास दूलन आस प्रभु की, मुक्ति-करता सत्तनाम ||४||

राम नाम दुइ अच्छरै, रटै निरंतर कोय।
दूलन दीपक बरि उठै, मन परतीत जु होय ||५||

(२)

जागु जागु आतमा, पुरान दाग धोउ रे।
कर्म भर्म दूर करु, कीच काम खोउ रे ||१||
अपनी सुधि भूलि गई, और की क्या टोउ रे।
सच्च बात झूठ करै, झूठ ही को गोउ[1] रे ||२||
इहै बात जानि जानि, द्वार द्वार रोउ रे।
सत्तर पानी साबुन का, प्रेम पानी मोउ[2] रे ||३||
लाग दाग धोय डारु, वाह वाह होउ रे।
दूलन बेकूफ[3] काम, गाफिल ह्वै न सोउ रे ||४||

(३)

चलो चढ़ो मन यार महल अपने || टेक ||

चौक चाँदनी तारे झलकैं, बरनत बनत न जात गने ||१||
हीरा रतन जड़ाव जड़े जहँ, मोतिन कोटि कितान बने ||२||
सुखमन पलँगा सहज बिछौना, सुख सोवो को करै मने ||३||
दूलनदास के साईं जगजीवन, को आवै यह जग सुपने ||४||

(१) छिपा कर रखना, पकड़े रहना। (२) थोड़े पानी से भिँगाना। (३) मूर्ख।

(४)

जोगी चेत नगर में रहो रे ॥ टेक ॥
प्रेम रंग रस ओढ़ चदरिया, मन तसबीह गहो रे ॥१॥
अन्तर लाओ नामहि की धुनि, करम भरम सब धो रे ॥२॥
सुरत साधि गहो सत मारग, भेद न प्रगट कहो रे ॥३॥
दूलनदास के साईं जगजीवन, भवजल पार करो रे ॥४॥

(५)

प्रानी जपि ले तू सतनाम ॥ टेक ॥
मात पिता सुत कुटुम कबीला, यह नहिँ आवैं काम ।
सब अपने स्वारथ के संगी, संग न चलै छदाम ॥१॥
देना लेना जो कुछ होवै, करिले अपना काम ।
आगे हाट बजार न पावै, कोइ नहिँ पावै ग्राम ॥२॥
काम क्रोध मद लोभ मोह ने, आन बिछाया दाम ।
क्योँ मतवारा भया बावरे, भजन करो निःकाम ॥३॥
यह नर देही हाथ न आवै, चल तू अपने धाम ।
अब की चूक माफ नहिँ होगी, दूलन अचल मुकाम ॥४॥

(६)

राम राम रटु राम राम सुनु, मनुवाँ सुवा सलोना रे ॥टेक॥
तन हरियाले बदन[१] सुलाले, बोल अमोल सुहौना रे ॥१॥
सत्त तंत्र अरु सिद्ध मंत्र पढ़ु, सोई मृतक जियौना रे ॥२॥
सुबचन तेरे भौजल बेरे[२], अवागवन मिटौना रे ॥३॥
दूलनदास के साईं जगजीवन, चरन सनेह दृढ़ौना रे ॥४॥

(७)

मन रहि जा चरनन सीस धरी, लागि रहै धुनि हरी हरी ॥१॥
तोहि समझावौँ घरी घरी, कुमति बिपति तोरि जाय टरी ॥२॥

(१) चिहरा । (२) बेड़ा, नाव ।

पाँच पचीसो एक करी, पियहु दरस रस पेट भरी ॥३॥
हारे बहुत बहुत खरी[1], चरन प्रीति बिन कछु न सरी ॥४॥
चरन प्रभाव जानु कुबरी[2], परसत गोतम नारि तरी[3] ॥५॥
साईं जगजीवन कृपा करी, जन दूलन परतीत परी ॥६॥

॥ विनय ॥

(१)

साईं हो गरीब निवाज ॥ टेक ॥
देखि तुम्हें घिन लागत नाहीं, अपने सेवक के साज ॥१॥
मोहिं अस निलज न यही जग कोऊ, तुम ऐसे प्रभु लाज जहाज ॥२॥
और कछू हम चाहित नाहीं, तुम्हरे नाम चरन तें काज ॥३॥
दूलनदास गरीब निवाजहु, साईं जगजीवन महराज ॥४॥

(२)

साईं दरस माँगौं तोर, आपनो जन जानि साईं मान राखहु मोर ॥१॥
अपथ[4] पंथ न सूझि इत उत, प्रबल पाँचो चोर ।
भजन केहि बिधि करौं साईं, चलत नाहीं जोर ॥२॥
नात लाइ दुरात[5] काहे, पतित जन की दौर ।
बचन अवधि[6] अधार मेरे, आसरा नहिं और ॥३॥
हेरिये करि कृपा जन तन, ललित[7] लोचन कोर ।
दास दूलन सरन आयो, राम बंदी-छोर ॥४॥

(३)

साईं तेरे कारन नैना भये बैरागी ।
तेरा सत दरसन चहौं, कछु और न माँगी ॥१॥
निसु बासर तेरे नाम की, अंतर धुनि जागी ।
फेरत हौं माला मनौं[8], अँसुवन झरि लागी ॥२॥

(१) थक कर। (२) कुबजा जिसकी पीठ का कूब श्रीकृष्ण ने अपने चरण से सीधा किया। (३) गोतम की नारी अहिल्या जो सराप बस शिला बनी पड़ी थी और श्रीरामचन्द्र के चरण लगने से तरी। (४) कराह। (५) हटाते हो। (६) प्रतिज्ञा। (७) सुंदर, मोहिनी। (८) गोया कि।

पलक तजी इत उक्ति तें[1], मन माया त्यागी।
दृष्टि सदा सत सनमुखी, दरसन अनुरागी ॥३॥
मदमाते राते मनौं[2], दाधे बिरह आगी।
मिलि प्रभु दूलनदास के, करु परम सुभागी ॥४॥

(४)

सुनहु दयाल मोहिं अपनावहु ॥ टेक ॥
जन मन लगन सुधारन साईं, मोरि बनै जो तुमहिं बनावहु ॥१॥
इत उत चित्त न जाइ हमारा, सूरत चरन कमल लपटावहु ॥२॥
तबहूँ अब मैं दास तुम्हारा, अब जिनि बिसरौ जिनि बिसरावहु॥३॥
दूलनदास के साईं जगजीवन, हमहूँ काँ भक्तन माँ लावहु ॥४॥

(५)

साईं सुनहु बिनती मोरि ॥ टेक ॥
बुधि बल सकल उपाय-हीन मैं, पाँयन परौं दोऊ कर जोरि ॥१॥
इत उत कतहूँ जाइ न मनुवाँ, लागि रहै चरनन माँ डोरि ॥२॥
राखहु दासहिं पास आपने, कस को सकिहै तोरि ॥३॥
आपन जानि कै मेटहु मेरे, औगुन सब क्रम भ्रम खोरि[3] ॥४॥
केवल एक हितू तुम मेरे, दुनियाँ भरी लाख करोरि ॥५॥
दूलनदास के साईं जगजीवन, माँगौं सत दरस निहोरि ॥६॥

(६)

साईं भजन ना करि जाइ।
पाँच तसकर संग लागे, मोहिं हरकत[4] धाइ ॥१॥
चहत मन सतसंग करनो, अधर बैठि न पाइ।
चढ़त उतरत रहत छिन छिन, नाहिं तहँ ठहराइ ॥२॥

---

(१) इधर अर्थात संसार की चतुरता (उक्ति) की ओर से आँख मूँद ली। (२) गोया कि। (३) कसर, ऐब। (४) रोकते हैं।

कठिन फाँसी अहै जग की, लियो सबहिँ बझाइ।
पास मन मनि नैन निकटहिँ, सत्य गयो भुलाइ ॥३॥
जगजिवन सतगुरु करहु दाया, चरन मन लपटाइ।
दास दूलन बास सत माँ, सुरत नहिँ अलगाइ ॥४॥

(७)

प्रभु तुम किहेउ कृपा बरियाई[१]।
तुम कृपाल मैं कृपा अलायक[२], समुझि निवज तेहु साईं ॥१
कूकुर धोये होइ न बाछा[३], तजै न नीच निचाई।
बगुला होइ न मानस-बासी[४], बसहि जे बिपै तलाई ॥२
प्रभु सुभाउ अनुहारि चाहिये, पाय चरन सेवकाई[५]।
गिरगिट पौरुष करै कहाँ लगि, दौरि कँड़ौरे[६] जाई ॥३।
अब नहिँ बनत बनाये मेरे, कहत अहौं गोहराई।
दूलनदास के साईं जगजीवन, समरथ लेहु बनाई ॥४

॥ प्रेम ॥

(१)

धनि मोरि आज सुहागिन घड़िया ॥टेक॥
आज मोरे अँगना संत चलि आये, कौन करौं मिहमनिया ॥१॥
निहुरि निहुरि मैं अँगना बुहारौं, मातो मैं प्रेम लहरिया ॥२॥
भाव के भात प्रेम के फुलका, ज्ञान की दाल उतरिया ॥३॥
दूलनदास के साईं जगजीवन, गुरु के चरन बलिहरिया ॥४॥

(२)

जागु री मोरि सुरत पियारी। चरन कमल छबि झलक निहारी ॥१॥
बिसरि जाइ दे यह संसारी। धरहु ध्यान मन ज्ञान बिचारी ॥२॥
पाँच पचीसो दे झझकारी[७]। गहहु नाम की डोरि सँभारी ॥३॥
साईं जगजीवन अरज हमारी। दूलनदास को आस तुम्हारी ॥४॥

---

(१) जबरदस्ती। (२) अजोग (३) गऊ का बच्चा। (४) मानसरोवर का बासी। (५) ईश्वर सरीखा स्वभाव बन जाय तब उस के चरनों में बासा मिलै। (६) कंडों या उपलों का ढेर। (७) फटकार या डाँट।

(३)

सतनाम तें लागी अँखिया, मन परिगै जिकिर[1] जँजीर हो ॥१॥
सखि नैना बरजे ना रहैं, अब ठिरे[2] जात वोहि तीर[3] हो ॥२॥
नाम सनेही बावरे, दृग भरि भरि आवत नीर हो ॥३॥
रस-मतवाले रस-मसे[4], यहि लागी लगन गँभीर हो ॥४॥
सखि इस्क पिया से आसिकाँ, तजि दुनिया दौलत भीर हो[5] ॥५॥
सखि गोपीचन्दा भरथरी, सुलताना भयो फकीर हो ॥६॥
सखि दूलन का से कहै, तह अटपटि[6] प्रेम की पीर हो ॥७॥

(४)

हुआ है मस्त मंसूरा, चढ़ा सूली न छोड़ा हक़।
पुकारा इस्क़बाज़ों को, अहै मरना यही बरहक़ ॥१॥
जो बोले आशिक़ाँ याराँ, हमारे दिल में है जी शक।
अहै यह काम सूरों का, लगाये पीर से अब तक ॥२॥
शम्सतबरेज़ की सीफ़त, जहाँ में ज़ाहिरा अब तक।
निज़ामुद्दीन सुल्ताना, सभी मेटे दुनी के धक ॥३॥
निरख रहे नूर अल्लाह का, रहे जीते रहे जब तक।
हुआ हाफ़िज़ दिवाना भी, भये ऐसे नहीं हर यक ॥४॥
सुना है इश्क़ मजनूँ का, लगी लैला कि रहती ज़क।
जलाकर खाक तन कीन्हा, हुए वह भी उसी माफ़िक़ ॥५॥
दुलन जन को दिया मुरशिद, पियाला नाम का थकथक।
वही है शाह जगजीवन, चमकता देखिये लक़लक़ ॥६॥

(५)

अब तो अफ़सोस मिटा दिल का, दिलदार दीद में आया है।
संतों की सुहबत में रह कर, हक़ हादी को सिर नाया है ॥१॥

---

(१) स्मरण या सुमिरन। (२) विशेष शीतलता से जम जाने को "ठिरना" कहते हैं—प्रतिलिपि में "टरे" है जिसके अर्थ खिचने के हैं। (३) पास। (४) रस में पगे। (५) प्रेमी जन जिन की प्रीति प्रीतम से लगी है उन्हें संसार और धन माल की चिन्ता नहीं रहती। (६) अटपट, अनोखी।

उपदेस उग्र गहि सत्त नाम, सोइ अष्ट जाम धुनि लाया है।
मुरशिद की मेहर हुई यों कर, मजबूत जोश उपजाया है ॥२॥
हर वक़ तसौवर में सूरत, सूरत अंदर झलकाया है।
बूअली क़लंदर औ फ़रीद, तबरेज़ वही मत गाया है ॥३॥
कर सिद्क़ सबूरी लामकान, अल्लाह अलख दरसाया है ॥।
लखि जन दूलन जगजिवन पीर, महबूब मेरे मन भाया है॥
ख़ाविन्द ख़ास ग़ैबी हुज़ूर, वह दिल अंदर में आया है॥४॥

(६)

ऐसा रंग रँगैहों, मैं तो मतवालिन होइहौं ॥ टेक ॥
भट्ठी अधर लगाइ, नाम की सोज[१] जगैहौं।
पवन सँभारि उलटि दै झोंका, करकट कुमति जलैहौं ॥१॥
गुरुमति लहन[२] सुरति भरि गागरि, नरिया नेह लगैहौं।
प्रेम नीर दै प्रीति पुचारी, यहि बिधि मदवा चुवैहौं ॥२॥
अमल अगारी नाम खुमारी, नैनन छबि निरतैहौं।
दै चित चरन भयूँ सत सन्मुख, बहुरि न यहि जग ऐहौं ॥३॥
ह्वै रस मगन पियौं भर प्याला, माला नाम डोलैहौं।
कह दूलन सतसाइँ जगजीवन, पिउ मिलि प्यारी कहैहौं ॥४॥

॥ करुना ॥

(१)

हमारे तो केवल नाम अधार।
पूरन काम नाम दुइ अच्छर, अंतर लागि रहै खुटकार ॥१॥
दासन पास बसै निसु बासर, सोवत जागत कबहुँ न न्यार।
अरध नाम टेरत प्रभु धाये, आय तुरत गज गाढ़ निवार ॥२॥
जन मन-रंजन सब दुख-भंजन, सदा सहाय परम हित प्यार।
नाम पुकारत चीर बढ़ायो, द्रुपदी लज्या के रखवार ॥३॥

---

(१) तपन, विरह। (२) जामन जिस से शराब का ख़मीर जल्द उठ आता है।

गौरि गनेस औ सेष रटत जेहिँ, नारद सुक[1] सनकादि पुकार।
चारहु मुख जेहिँ रटत बिधाता[2], मंत्रराज सिव मन सिंगार ॥४॥

(२)

भक्तन राम चरन धुनि लाई ॥टेक॥
चारिहु जुग गोहारि प्रभु लागे, जब दासन गोहराई ॥१॥
हिरनाकुस रावन अभिमानी, छिन माँ खाक मिलाई ॥२॥
अबिचल भक्ति नाम की महिमा, कोऊ न सकत मिटाई ॥३॥
कोउ उसवास[3] न एको मानहु, दिन दिन की दिनताई ॥४॥
दूलनदास के साईं जगजीवन, है सतनाम दुहाई ॥५॥

॥ झूलना ॥

(१)

पंखा चँवर मुरछल ढुरैं, सूबा सबै खिजमत करैं।
जरबफ्त को तंबू तन्यो, बैठक बन्यो मसनंद का ॥
दिन रात झाँगरि बाजती, सुथरी सहेली नाचती।
पिलसूज[4] आगे योँ जलै, उजियार मानौ चंद का ॥
एकै अतर चोवा चमेली, बेला खुसबोई लिये।
एकै कटोरे में किये, सरबत सलोना कंद का ॥
हिन्दू तुरुक दुइ दीन आलम, आपनी ताबीन[5] में।
यह भी न दूलन खूब है, करु ध्यान दसरथ-नंद का ॥

(२)

बर[6] जे अठारह बरन में, बितपन्न[7] हैं ब्याकरन में।
पहिरे खराऊँ चरन में, जानैं न स्वाद सरीर का ॥
कुस मुद्रिका कर राखते, जे देव-बानी भाखते।
नहिँ अन्न आमिष[8] चाखते, नित पान करते छीर का ॥
धोती उपरना अंग में, रत बेद बिद्या रंग में।
बिद्यारथी बहु संग में, जिन्ह बास तीरथ तीर का ॥

---

(१) सुकदेव। (२) ब्रह्मा। (३) संशय। (४) पतील-सोज़ यानी चौमुखी दीवट।
(५) ताबेदारी। (६) श्रेष्ठ। (७) प्रवीन। (८) [illegible]।

सूतहिँ सदा भुइँ सेज जे, पूरे तपस्या तेज के।
यह भी न दूलन खूब है, करु ध्यान श्री रघुबीर का ॥

(३)

राखे जटा जिन्ह माथ में, बीभूति लाये गात में।
तिरसूल तौंबी हाथ में, छोड़ेउ सकल सुख धाम का ॥
भावे जहीँ जावेँ तहीँ, पुर बीच में आवेँ नहीँ।
रुद्राच्छ का माला गरे, आला[1] बिछावन चाम का ॥
दसहूँ दिसा जिन्ह घूमि कै, कीन्हेउ प्रदच्छिन[2] भूमि कै।
फिरि मौन होइ बैठेउ तज्यो, मजकूर दौलत दाम का[3] ॥
करि जोग देहीँ जारते, हरतार पारा मारते।
यह भी न दूलन खूब है, करु ध्यान स्यामा स्याम का ॥

॥ मिश्रित ॥

(१)

साहिब अपने पास हो, कोइ दरद सुनावै ॥टेक॥
साहिब जल थल घट घट ब्यापत, धरती पवन अकास हो ॥१॥
नीची अटरिया की ऊँची दुवरिया, दियना बरत अकास हो ॥२॥
सखिया इक पैठी जल भीतर, रटत पियास पियास हो ॥३॥
मुख नहिँ पिये चिरुआ नहिँ पीयै, नैनन पियत हुलास हो ॥४॥
साईँ सरवर[4] साईँ जगजीवन[5], चरनन दूलनदास हो ॥५॥

(२)

नीक न लागे बिनु भजन सिँगरवा ॥ टेक ॥
का कहि आयो हियाँ बरत्यो नाहीँ,
भूलि गयल तोरा कौल कररवा ॥१॥
साचा रँग हिये उपजत नाहीँ,
भेष बनाय रँग लीन्हो कपरवा ॥२॥

---

(१) उत्तम। (२) फेरा। (३) फिर मौन (चुप) साध कर बैठे और धन दौलत की चर्चा छोड़ दी। (४) तालाब। (५) संसार के प्राण-आधार।

बिन रे भजन तोरी ई गति होइहै,
बाँधल जैबे तू जम के दुवरवा ॥ ३ ॥
दूलनदास के साईं जगजीवन,
हरि के चरन पर हमरो लिलरवा ॥ ४ ॥

बुल्ला साहिब

[संक्षिप्त जीवन-चरित्र के लिए देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ १४०]

॥ गुरुदेव ॥

बलि हौं बलि हौं सतगुरु की ॥टेक॥
जन ध्यान दियो परमेसुर को । त्रिकुटी संगम जिन राह निबेरी ॥१॥
म बिलास अकास में बास है । आवागवन रहित भौ फेरी ॥२॥
अनहद बाजे झनकार कि बानी । बिन सरवन तहँ सुनत है टेरी ॥३॥
ल्ला हिरदे बिचारि बोलै । ब्रह्म ज्ञान कि बात सुनो मेरी ॥४॥

(नाम)

साईं के नाम की बलि जावँ ।
मिरत नाम बहुत सुख पायो, अंत कतहुँ नहिँ ठाँव ॥१॥
ाम बिना मन स्वान मँजारी[1], घर घर चित लै जाँव ॥२॥
ेन दरसन परसन मन कैसो, ज्यौं लूले को गाँव[2] ॥३॥
वन मथानी हिरदे ढूँढ़ो, तब पावै मन ठाँव ॥४॥
न बुल्ला बोलहि कर जोरे, सतगुरु चरन समाँव ॥५॥

॥ अनहद शब्द ॥

(१)

हं हंसा लागलि डोर । सुरति निरति चढ़ु मनवाँ मोर ॥१॥
लिमिलि झिलिमिलि त्रिकुटी ध्यान । जगमग जगमग गगन तान ॥२॥

---

(१) कुत्ता बिल्ली । (२) जिस तरह लूला अपने पैरों से चल कर गाँव (मुकाम) को
हीं पहुँच सकता इसी तरह बिना नाम के दरस परस के मन की हालत है यानी अंतर में
ब नहीं चलती ।

गह गह गह अनहद निसान । प्रान-पुरुष तहँ रहत जान ॥३॥
लहरि लहरि उठि पछिँव[1] घाट । फहरि फहरि चल उतर बाट ॥४॥
सेत बरन तहँ आवै आप । कह बुल्ला सोइ माइ बाप ॥५॥

(२)

॥ अरिल ॥

स्याम घटा घन घेरि चहुँ दिसि आइया ।
अनहद बाजे घोर जो गगन सुनाइया ॥
दामिनि दमकि जो चमकि त्रिबेनी न्हाइया ।
बुल्ला हृदे बिचार तहाँ मन लाइया ॥

(३)

॥ अरिल ॥

सामहिँ उगवे सूर भोर ससि जागई ।
गंग जमुन के संगम अनहद बाजई ॥
अजपा जापहिँ जाप सोहं डोरि लागई ।
बुल्ला ता मेँ पैठि जोति मेँ गाजई ॥

॥ बिरह ॥

(१)

देखो पिया काली घटा मो पै भारी ॥१॥
सूनी सेज भयावन लागी, मरौँ बिरह की जारी ॥२॥
प्रेम प्रीति यहि रीति चरन लगु, पल छिन नाहिँ बिसारी ॥३॥
चितवत पंथ अंत नहिँ पायो, जन बुल्ला बलिहारी ॥४॥

(२)

नैना मोरे निपट बिकट ठौर अटके ॥१॥
सुख को साथ सबै कोइ चाहे, दुखहिँ परे पर छटके ॥२॥
भौँह कमान नैन दोउ गाँसी, जहाँ लगे तहँ लटके ॥३॥
जन बुल्ला दाया सतगुरु की, देखु सकल जग भटके ॥४॥

(१) पच्छिम ।

॥ प्रेम ॥

(१)

साची भक्ति गोपाल की, मेरो मन माना ।
मनसा बाचा कर्मना, सुनु संत सुजाना ॥१॥
लँगरा लुंजा ह्वै रहो, बहिरा अरु काना[1] ।
राम नाम सोँ खेल है, दीजे तन दाना ॥२॥
भक्ति हेतु गृह छोड़िये, तजि गर्ब गुमाना ।
जन बुल्ला पायो बाक[2] है, सुमिरो भगवाना ॥३॥

(२)

मा बिधि करहु आपुहिँ पार ।
जस मीन जल की प्रीति जानै, देखु आपु बिचार ॥१॥
जस सीप रहत समुद्र माहीँ, गहत नाहिन बार[3] ।
वा की सुरत आकास लागी, स्वाँति बुंद अधार ॥२॥
(जस) चकोर चन्द सोँ दृष्टि लावै, अहार करत अँगार ।
दहत नाहिन पान कीन्हे, अधिक होत उजार[4] ॥३॥
कीट भृंग की रहनि जानो, जाति पाँति गँवाय ।
बरन अबरन एक मिलि भे, निरंकार समाय ॥४॥
(अस) दास बुल्ला आस निरखहि, राम चरन अपार ।
देहु दरसन मुक्ति परसन, आवागवन निवार ॥५॥

॥ बेहद ॥

(१)

प्रभु निराधार अधार उज्जल, बिन्दु सकल बिराजई ।
अनन्त रूप सरूप तेरो, मो पै बरनि न जावई ॥१॥
बाँधि पवनहिँ साधि गगनहिँ, गरज गरज सुनावई ।
तहँ हंस मुनि जन चूगते मनि, रस परसि परसि अघावई ॥२॥

---

(१) मन की बहिरमुख धावना बंद करो तब मालिक की ओर अंतर में चाल चलेगी। (२) बचन। (३) पानी। (४) चकोर आग खाने से नहीं जलता बल्कि उस में चेतन्यता बढ़ती है।

बिना कर मुख बेनु[1] बाजे, बीन स्रवनन गुंजई ।
बिना नैनन दरस देखो, अगति गतिहिं जनावई ॥३॥
वा के जाति पाँति न नेम धर्मा, भर्म सकल गँवावई ।
आपु आपु बिचारि देखो, ऐसो है वह रावई[2] ॥४॥
जीति पाँच पचीस तीनों, चौथे जा ठहरावई ।
तब दास बुल्ला लियो गढ़, जब गुरू दीन्ह लखावई ॥५॥

(२)

अनहद ताल इग थेइ थेइ बाजे, सकल भुवन जा को जोति बिराजे ॥
ब्रह्मा बिस्नु खड़े सिव द्वारे, परम जोति सो करहिं जुहारे[3] ॥२॥
गगन मँडल महँ निर्तन होय, सतगुरु मिलै तो देखै सोय ॥३॥
आठ पहर जन बुल्ला गाजे, भक्ति भाव माथे पर छाजे ॥४॥

॥ बिनती ॥

(१)

अब कि बार मो पै होहु दयाल, रोम रोम जन होइ निहाल ॥१॥
जन बिनवै आठौ पहवार[4] , तुम्हरे चरन पर आपा वार ॥२॥
तुम तो राम हहु निरगुन सार, मोरे हिये महं तुम आधार ॥३॥
तुम बिन जीवन कौने काज, बार बार मो को आवै लाज ॥४॥
सतगुरु चरनन साज समाज, बुल्ला माँगै भक्ती राज ॥५॥

(२)

ऐसी बिनय सुनहु अबिनासी। अब की बार काटहु जम फाँसी ॥१॥
भया प्रकास मिटा अँधियारा। आदि अंत मध भो उजियारा ॥२॥
रूप रेख तहँ बरनि न जासी। निरंकार आपुहिं अबिनासी ॥३॥
जन बुल्ला तहँ रहे हजूरा। पूरन ब्रह्म देखा जहँ नूरा ॥४॥

(भेद)

सुखमनि सुरति डोर बनाव।
मेटिहै सब कर्म जिय के, बहुरि इतहिं न आव ॥१॥

(१) एक लम्बा बाजा जो मुँह से बजाया जाता है। (२) राजा। (३) बंदगी। (४) पहर।

पैठि अंदर देखु कंदर[1], जहाँ जिय को बास।
उलटि प्रान अपान मेटो, सेत सबद निवास ॥ २ ॥
गंग जमुना मिलि सरसुती, उमँगि सिखर बहाव।
लवकंति[2] बिजुली दामिनी, अनहद गरज सुनाव ॥ ३ ॥
जीति आया आपहीँ, गुरु यारि सबद सुनाव।
तब दास बुल्ला भक्ति ठानो, सदा रामहिँ गाव ॥ ४ ॥

॥ उपदेश ॥

(१)

बटोही खोजहु क्योँ नहिँ आप, सुमिरहु अजपा जाप ॥टेक॥
बिन खोजे कहुँ राह न पैहो, कोटिन करहु बिलाप ॥ १ ॥
निकटहिँ राम नाम अभि अंतर, जानहि जाहि मिलाप ॥ २ ॥
हाजिर हजूर त्रिबेनी संगम, झिलमिलि नूर जो जाप ॥ ३ ॥
जन बुल्ला महबूब नूर मेँ, यारी पीर[3] प्रताप ॥ ४ ॥

(२)

होली

होरी खेलो रंग भरी, सब सखियन संग लगाई ॥ टेक ॥
फागुन आयो मास अनँद भो, खेलि लेहु नर नारी।
ऐसा समय बहुरि नहिँ पैहो, जैहो जनम जुवा हारी ॥ १ ॥
तीर त्रिबेनी होरी खेलो, अनहद डंक बजाई।
ब्रह्मा बिस्नु महेस तिनोँ जन, रहे चरन लिपटाई ॥ २ ॥
बनि बनि आवेँ दरस दिखावेँ, अद्भुत कला बनाई।
जन बुल्ला ऐसि होरी खेले, रहे नाम लौ लाई ॥ ३ ॥

(३)

॥ अरिल ॥

मुरगी यह संसार चेहुँ चेहुँ करत है।
आतम राम को नाम हृदे नहिँ धरत है ॥
बिना राम नहिँ मुक्ति झूठ सब कहत है।
बुल्ला हृदे बिचारि राम सँग रहत है ॥

(१) गुफा। (२) चमकती है। (३) गुरू।

केशवदास जी

[संक्षिप्त जीवन-चरित्र के लिए देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ १४२]

॥ चितावनी ॥

कवित्त

दौलत निसान बान धरे खुदी अभिमान,
करत न दाया काहू जीव की जगत में ।
जानत है नीके यह फीको है सकल रंग,
गहे फिरै काल फंद मारैगो छिनक में ॥
घेरा डेरा गज बाजि[1] झूठो है सकल साजि,
बादि[2] हरि नाम कोऊ काज नाहिँ अंत के ।
बार बार कहौं तोहि छोड़ु मान माया मोह,
केसो काहे को करै छोभ मोह काम के ॥

॥ प्रेम ॥

(१)

निरमल कंत संत हम पाया,
कोटि सूर जा की निर्मल काया ॥ १ ॥
प्रेम बिलास अमृत रस भरिया,
अनुभौ चँवर रैन दिन ढुरिया ॥ २ ॥
आनँद मंगल सोहं गावैं,
सुख सागर प्रभु कंठ लगावैं ॥ ३ ॥
सत्य पुरुष धुनि अति उजियारी,
कोटि भानु ससि छबि पर वारी ॥ ४ ॥
तेज पुंज निर्गुन उजियारा,
कह केसो सोइ कंत हमारा ॥ ५ ॥

(१) घोड़ा। (२) सिवाय।

(२)

पिय थारे रूप भुलानी हो ।
प्रेम ठगौरी मन हरो, बिन दाम बिकानी हो ॥ १ ॥
भँवर कँवल रस बोधिया, सुख स्वाद बखानी हो ।
दीपक ज्ञान पतंग सोँ, मिलि जोति समानी हो ॥ २ ॥
सिंधु भरा जल पूरना, सुख सीप समानी हो ।
स्वाँति बुंद सोँ हेतु है, ऊरध-मुख आनी हो ॥ ३ ॥
नैन स्रवन मुख नासिका, तुम अंतर जानी हो ।
तुम बिन पलक न जीजिये, जस मीन रु पानी हो ॥ ४ ॥
व्यापक पूरन दसो दिसि, परगट पहिचानी हो ।
केसो यारी गुरु मिले, आतम रति मानी हो ॥ ५ ॥

(३)

म्हारे हरिजु सूँ जुरलि सगाई हो ।
तन मन प्रान दान दै पिया को, सहज सरूपम पाई हो ॥१॥
अरध उरध के मध्य निरंतर, सुखमन चौक पुराई हो ।
रबि ससि कुंभक अमृत भरिया, गगन मँडल मठ छाई हो ॥२॥
पाँच सखी मिलि मंगल गावहिँ, आनँद तूर बजाई हो ।
प्रेम तत्त दीपक उँजियारो, जगमग जोति जगाई हो ॥३॥
साध संत मिलि कियो बसीठी[1], सतगुरु लगन लगाई हो ।
दरस परस पतिबरता पिव की, सिव घर सक्ति बसाई हो ॥४॥
अमर सुहाग भाग उँजियारो, पूर्ब प्रीति प्रगटाई हो ।
रोम रोम मन रस के बसि भइ, केसो पिय मन भाई हो ॥५॥

॥ घट मठ ॥

धनि सो घरी धनि बार, जबहिँ प्रभु पाइये ।
प्रगट प्रकास हजूर, दूर नहिँ जाइये ॥ १ ॥

(१) दूत या बिचौलिया का काम ।

नहिँ जाइ दूर हजूर साहिब, फूलि सब तन मेँ रह्यो।
अमर अछय सदा जुगन जुग, जक्त दीपक उगि रह्यो ॥ २ ॥
निरखी दसव दिसि सर्ब सोभा, कोटि चंद सुहावनं।
सदा निरभय राज नित सुख, सोई केसो ध्यावनं ॥ ३ ॥

पूरन सर्ब निधान, जानि सोइ लीजिये।
निर्मल निर्गुन कंत, ताहि चित दीजिये ॥ ४ ॥

दीजिये चित रीझि कै उत, बहुरि इतहिँ न आइये।
जहँ तेज पुंज अनंत सूरज, गगन मेँ मठ छाइये ॥ ५ ॥
लये घट पट खोलि कै प्रभु, अगम गति तब गति करी।
बढ़ो अधिक सुहाग केसो, बीछुरत नहिँ इक घरी ॥ ६ ॥

अदभुत भेष बनाय, अलेख मनाइये।
निसु बासर करि प्रेम, तो कंठ लगाइये ॥ ७ ॥

लाइये घट छाड़ि कै मठ, उमँगि सोहं भरि रहो।
बढ़ो अधिक सुहाग सुंदरि, अलख स्वामी रमि रहो ॥ ८ ॥
मिलो प्रभू अनूप उदै अति, सर्ब गति जा सोँ भई।
आदि अंत रु मध्य सोई, मिलि पिया केसो मई ॥ ९ ॥

फूलि रह्यो सब ठाँव, तो धरनि अकास मेँ।
सो त्रिभुवन-पति नाथ, निरखि लयो आप मेँ ॥१०॥

निरखि आपु अघात नाहीँ, सकल सुख रस सानिये।
पिवहि अमृत सुरति भर करि, संत बिरला जानिये ॥११॥
कोटि बिस्नु अनंत ब्रह्मा, सदा सिव जेहि ध्यावहीँ।
सोइ मिलो सहज सरूप केसो, अनँद मंगल गावहीँ ॥१२॥

चरनदासजी

[संचिप्त जीवन-चरित्र के लिये देखो संतबानी संग्रह, भाग १ पृष्ठ १४२]

॥ गुरुदेव ॥

(१)

गुरु बिन और न जान, मान मेरो कहो ।
चरनदास उपदेस, बिचारत ही रहो ॥ १ ॥
बेद रूप गुरु होहिँ, कि कथा सुनावहीँ ।
पंडित को धरि रूप, कि अर्थ बतावहीँ ॥ २ ॥
कलपबृच्छ गुरुदेव, मनोरथ सब सरैँ ।
कामधेनु गुरुदेव, छुधा तृस्ना हरैँ ॥ ३ ॥
गुरु ही सेस महेस, तोहि चेतन करैँ ।
गुरु ब्रह्मा गुरु बिस्नु, होय खाली भरैँ ॥ ४ ॥
गंगा सम गुरु होय, पाप सब धोवहीँ ।
सूरज सम गुरु होय, तिमिर हरि[1] लेवहीँ ॥ ५ ॥
गुरु ही को करु ध्यान, नाम गुरु को जपौ ।
आपा दीजे भेँट, पुजन गुरु ही थपौ ॥ ६ ॥
समरथ स्री सुकदेव, कहा महिमा करौँ ।
अस्तुति कही न जाय, सीस चरनन धरौँ ॥ ७ ॥

(२)

गुरु दूती[2] बिन हे सखी, पीव न देखो जाय ।
भावै तुम जप तप करि देखौ, भावै तीरथ न्हाय ॥ १ ॥
पाँच सखी पचीस सहेली, अति चातुर अधिकाय ।
मोहिँ अयानी जानि कै, मेरो बालम लियो लुकाय[3] ॥ २ ॥
वेद पुरान सबै जो ढूँढे, स्रुति सिमरित सब धाय ।
मान धर्म औ क्रिया कर्म मेँ, दीन्हो मोहिँ भरमाय ॥ ३ ॥

---

(१) खींच । (२) बिचौलिया । (३) छिपाय ।

भटकत भटकत जनमै हारी, चरन सखी गहे आय।
सुकदेव साहिब किरपा करिकै, दीन्हो अलख लखाय ॥ ४ ॥
देखत ही सब भ्रम भय भागे, सिर सूँ गई बलाय।
चरनदास जब प्रीतम पायो, दरसन कियो अघाय ॥ ५ ॥

॥ अनहद शब्द ॥

(१)

अनहद सबद अपार दूर सूँ दूर है।
चेतन निर्मल सुद्ध देँह भरपूर है ॥ १ ॥
निःअच्छर है ताहि और निःकर्म है।
परमातम तेहि मानि वही परब्रह्म है ॥ २ ॥
या के कीन्हे ध्यान होत है ब्रह्म हीँ।
धारै तेज अपार जाहिँ सब भर्म हीँ ॥ ३ ॥
या को छोड़ै नाहिँ सदा रहै लीन हीँ।
यही जो अनहद सार जानि परबीन हीँ ॥ ४ ॥

(२)

जब से अनहद घोर सुनी।
इन्द्री थकित गलित मन हूवा, आसा सकल भुनी ॥ १ ॥
घूमत नैन सिथिल भइ काया, अमल जु सुरत सनी।
रोम रोम आनंद उपज करि, आलस सहज भनी ॥ २ ॥
मतवारे ज्योँ सबद समाये, अंतर भीँज कनी।
करम भरम के बंधन छूटे, दुबिधा बिपति हनी ॥ ३ ॥
आपा बिसरि जक्त कूँ बिसरो, कित रहिँ पाँच जनी।
लोक भोग सुधि रही न कोई, भूले ज्ञान गुनी ॥ ४ ॥
हो तहँ लीन चरनहीँ दासा, कहै सुकदेव मुनी।
ऐसा ध्यान भाग सूँ पैये, चढ़ि रहै सिखर अनी[1] ॥ ५ ॥

(१) नोक।

॥ चितावनी ॥

(१)

अरे नर हरि का हेत न जाना ।

उपजाया सुमिरन के काजे, तैं कछु औरै ठाना ॥ १ ॥

गर्भ माहिँ जिन रच्छा कीन्ही, ह्वाँ खाने कूँ दीन्हा ।

जठर अगिन सोँ राखि लियो है, अँग संपूरन कीन्हा ॥ २ ॥

बाहर आय बहुत सुधि लीन्ही, दसन[1] बिना पय प्यायो ।

दाँत भये भोजन बहु भाँती, हित सोँ तोहिँ खिलायो ॥ ३ ॥

और दिये सुख नाना बिधि के, समुझि देखु मन माहीँ ।

भूलो फिरत महा गर्बायो, तू कछु जानत नाहीँ ॥ ४ ॥

तुव कारन सब कछु प्रभु कीन्हो, तू कीन्हा निज काजा ।

जग ब्यौहार पगो ही बोलै, तोहि न आवै लाजा ॥ ५ ॥

अजहूँ चेत उलट हरि सौंही[2], जन्म सुफल करु भाई ।

चरनदास सुकदेव कहैँ यौँ, सुमिरन है सुखदाई ॥ ६ ॥

(२)

कछु मन तुम सुधि राखो वा दिन की ।

जा दिन तेरी देह छुटैगी, ठौर बसोगे बन की ॥ १ ॥

जिन के संग बहुत सुख कीन्हे, मुख ढकि ह्वैहैँ न्यारे ।

जम का त्रास होय बहु भाँती, कौन छुटावनहारे ॥ २ ॥

देहरी लौँ तेरी नारि चलैगी, बड़ी पौरि लौँ माई ।

मरघट लौँ सब बीर भतीजे, हंस अकेलो जाई ॥ ३ ॥

द्रव्य गड़े अरु महल खड़े ही, पूत रहैँ घर माहीँ ।

जिन के काज पचे दिन राती, सो संग चालत नाहीँ ॥ ४ ॥

देव पितर तेरे काम न आवैँ, जिन की सेवा लावै ।

चरनदास सुकदेव कहत हैँ, हरि बिन मुक्ति न पावै ॥ ५ ॥

---

(१) दाँत । (२)

(३)

अपना हरि बिन और न कोई ।
मातु पिता सुत बंधु कुटुँब सब, स्वारथ ही के होई ॥ १ ॥
या काया कूँ भोग बहुत दै, मरदन करि करि धोई ।
सो भी छूटत नेक तनिक सी, संग न चाली वोई ॥ २ ॥
घर की नारि बहुत ही प्यारी, तिन में नाहीं दोई[1] ।
जीवत कहती साथ चलूँगी, डरपन लागी सोई ॥ ३ ॥
जो कहिये यह द्रव्य आपनी, जिन उज्जल मति खोई ।
आवत कष्ट रखत रखवारी, चलत प्रान ले जोई ॥ ४ ॥
या जग में कोई हितू न दीखै, मैं समझाऊँ तोई ।
चरनदास सुकदेव कहैं यों, सुनि लीजे नर लोई ॥ ५ ॥

॥ विरह ॥

(१)

मैं इस्क दिवानी ।
सुधि बुधि सब गइ खोय री, मछली बिन पानी ॥ १ ॥
तलफत हूँ दिन रैन ज्यों, देखत आँख सिरानी[2] ।
बिन देखे मोहिं कल न परत है, नैनन बरसत पानी ॥ २ ॥
सुधि आये हिय में दव[3] लागै, जैसे पपिहा स्वाँती ।
जैसे चकोर रटत चंदा को, बिरह बिथा यहि भाँती ॥ ३ ॥
ऐसे हम तलफत पिय दरसन, तब तें कछु न सुहानी ।
जब तें मीत बिछोहा हूआ, रोम रोम मुरझानी ॥ ४ ॥
अंग अंग अकुलात सखी री, भरि भरि आवै छाती ।
बिन मनमोहन भवन अँधेरो, नैन भये मोहिं घाती[4] ॥ ५ ॥
चरनदास सुकदेव मिलावो,

(२)

हमारो नैना दरस पियासा हो ।
तन गयो सूखि हाय हिये बाढ़ी, जीवत हूँ वोहि आसा हो ॥ १ ॥

(१) एक जान दो कालिब । (२) सीतल हुई । (३) आग । (४) दुखदाई, जीवलेवा ।

बिछुरन थारो[1] मरन हमारो, सुख में चलै न ग्रासा[2] हो।
नींद न आवै रैनि बिहावै[3], तारे गिनत अकासा हो ॥ २ ॥
भये कठोर दरस नहिं जाने, तुम कूँ नेक न साँसा[4] हो।
हमरी गति दिन दिन औरे ही, बिरह बियोग उदासा हो ॥ ३ ॥
सुकदेव प्यारे मत रहु न्यारे, आनि करो उर बासा हो।
रनजीता[5] अपनो करि जानी, निज करि चरनन दासा हो ॥ ४ ॥

(३)

मो बिरहिन की बात, हेली बिरहिन हो सोइ जानि है।
नैन बिछोहा जानती, हेली बिरहै कीन्हो घात ॥ १ ॥
या तन कूँ बिरहा लगो, हेली ज्यों घुन लागो काठ।
निस दिन खाये जातु है, हेली देखूँ हरि की बाट ॥ २ ॥
हिरदे में पावक जरै, हेली तपि नैना भये लाल।
आँसू पर आँसू गिरैं, हेली यही हमारो हाल ॥ ३ ॥
प्रीतम बिन कल ना परै, हेली कलकल[6] सब अकुलाहि।
डिगी[7] परूँ सत[8] ना रहो, हेली कब पिय पकरैं बाँहिं ॥ ४ ॥
गुरु सुकदेव दया करैं, हेली मोहिं मिलावैं काल।
चरनदास दुख सब भजैं, हेली सदा रहूँ पति नाल[9] ॥ ५ ॥

॥ प्रेम ॥

गुरु हमरे प्रेम पियाये हो।
ता दिन तें पलटो भयो, कुल गोत नसायो हो ॥ १ ॥
अमल चढ़ो गगनै लगो, अनहद मन छायो हो।
तेज पुंज की सेज पै, प्रीतम गल लायो हो ॥ २ ॥
गये दिवाने देसड़े, आनँद दरसायो हो।
सब किरिया सहजे छुटी, तप नेम भुलायो हो ॥ ३ ॥

(१) तेरा। (२) लुकमा या कौर। (३) बितती है। (४) फ़ुरसत। (५) चरनदासजी के मा बाप का रक्खा हुआ नाम। (६) व्याकुल। (७) गिरी। (८) सत्ता, बल। (९) साथ।

सहजो बाई

[संक्षिप्त जीवन-चरित्र के लिये देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ १५४]

[संक्षिप्त जीवन-चरित्र के लिये देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ १५४]

॥ गुरुदेव ॥

(१)

हमारे गुरु पूरन दातार ।
अभय दान दीनन को दीन्हे, किये भवजल पार ॥ १ ।
जन्म जन्म के बंधन काटे, जम की बंध निवार ।
रंक हुते सो राजा कीन्हे, हरि धन दियो अपार ॥ २ ।
देवैं ज्ञान भक्ति पुनि देवैं, जोग बतावनहार ।
तब मन बचन सकल सुखदाई, हिरदे बुधि उँजियार ॥ ३ ।
सब दुख-गंजन पातक-भंजन, रंजत ध्यान बिचार ।
साजन दुर्जन जो चलि आवे, एकहि दृष्टि निहार ॥ ४ ।
आनँद रूप सरूप-मई है, लिप्त नहीँ संसार ।
चरनदास गुरु सहजो केरे, नमो नमो बारम्बार ॥ ५ ।

(२)

राम तजूँ पै गुरु न बिसारूँ, गुरु के सम हरि कूँ न निहारूँ ॥१।
हरि ने जन्म दियो जग माहीँ, गुरु ने आवागवन छुटाहीँ ॥२।
हरि ने पाँच चोर दिये साथा, गुरु ने लई छुटाय अनाथा ॥३।
हरि ने कुटँब जाल में गेरी, गुरु ने काटी ममता बेरी[1] ॥४।
हरि ने रोग भोग उरझायो, गुरु जोगी करि सबै छुटायो ॥५।
हरि ने कर्म भर्म भरमायो, गुरु ने आतम रूप लखायो ॥६।
हरि ने मो सूँ आप छिपायो, गुरु दीपक दै ताहि दिखायो ॥७।
फिर हरि बंध-मुक्ति[2] गति लाये, गुरु ने सबही भर्म मिटाये ॥८।
चरनदास पर तन मन वारूँ, गुरु न तजूँ हरि कूँ तजि डारूँ ॥९।

---

(१) बेड़ी । (२) ऐसी मुक्ति जिसमें झीनी माया का बंधन लगा रहता है ।

॥ चितावनी ॥

(१)

पानी का सा बुलबुला, यह तन ऐसा होय ।
पीव मिलन की ठानिये, रहिये ना पड़ि सोय ॥
रहिये ना पड़ि सोइ, बहुरि नहिं मनुखा देही ।
आपन ही कूँ खोजु, मिलै तब राम सनेही ॥
हरि कूँ भूले जो फिरैं, सहजो जीवन छार ।
सुखिया जब ही होयगो, सुमिरैगो करतार ॥

(२)

चौरासी भुगती घनी, बहुत सही जम मार ।
भरमि फिरे तिहुँ लोक में, तहू न मानी हार ॥
तहू न मानी हार, मुक्ति की चाह न कीन्ही ।
हीरा देँही पाइ, मोल माटी के दीन्ही ॥
मूरख नर समुझै नहीं, समुझाया बहु बार ।
चरनदास कहैं सहजिया, सुमिरै ना करतार ॥

॥ प्रेम ॥

मुकट लटक अटकी मन माहीं ।
निरतत[1] नटवर मदन मनोहर, कुंडल झलक पलक बिथुराई ॥१॥
नाक बुलाक हलत मुक्ताहल, होठ मटक गति भौंह चलाई ।
ठुमक ठुमक पग धरत धरनि पर, बाँह उठाय करत चतुराई ॥२॥
झुनक झुनक नूपुर झनकारत, तताथेई थेई रीझ रिझाई ।
चरनदास सहजो हिये अंतर, भवन करो जित रहौ सदाई ॥३॥

॥ बिनय ॥

(१)

अब तुम अपनी ओर निहारो ।
हमरे औगुन पै नहिं जावो, तुमहीं अपनी बिरद सम्हारो ॥१॥
जुग जुग साख तुम्हारी ऐसी, वेद पुरानन गाई ।
पतित-उधारन नाम तुम्हारो, यह सुन के मन दृढ़ता आई ॥२॥

---

(१) नाचते हैं ।

मैं अज्ञान तुम सब कछु जानो, घट घट अंतरजामी ।
मैं तो चरन तुम्हारे लागी, हौ किरपाल दयालहि स्वामी ॥३॥
हाथ जोरि के अरज करत हौं, अपनाओ गहि बाँहीं ।
द्वार तिहारे आय परी हौं, पौरुष गुन मो में कछु नाहीं ॥४॥
चरनदास सहजिया तेरी, दरसन की निधि पाऊँ ।
लगन लगी और प्रान अड़े हैं, तुम को छोड़ि कहो कित जाऊँ ॥५॥

(२)

हम बालक तुम माय हमारी, पल पल माहिं करो रखवारी ॥१॥
निस दिन गोदी ही में राखो, इत चित बचन चितावन भाखो ॥२॥
बिषै ओर जाने नहिं देवो, ढुरि ढुरि जाउँ तो गहि गहि लेवो ॥३॥
मैं अनजान कछू नहिं जानूँ, बुरी भली को नहिं पहिचानूँ ॥४॥
जैसी तैसी तुमहीं चीन्हेव, गुरु ह्वै ध्यान खिलौना दीन्हेव ॥५॥
तुम्हरी रच्छा ही से जीऊँ, नाम तुम्हारो अमृत पीऊँ ॥६॥
दिष्टि तिहारी ऊपर मेरे, सदा रहूँ मैं सरनै तेरे ॥७॥
मारो झिड़को तो नहिं जाऊँ, सरकि सरकि तुम्हीं पै आऊँ ॥८॥
चरनदास है सहजो दासी, हौ रच्छक पूरन अबिनासी ॥९॥

॥ उपदेश ॥

सो बसंत नहिं बार बार । तैं पाई मानुष देह सार ॥१॥
यह औसर बिरथा न खोव । भक्ति बीज हिये धरती बोव ॥२॥
सतसंगत को सींच नीर । सतगुरु जी सौं करौ सीर ॥३॥
नीकी बार बिचार देव । परन राखि या कूँ जु सेव ॥४॥
रखवारी करु हेत हेत । जब तेरी होवै जैत जैत ॥५॥
खोट कपट पंछी उड़ाव । मोह प्यास सबही जलाव ॥६॥
सँभलै बाड़ी नऊ अंग । प्रेम फूल फुलै रंग रंग ॥७॥
पुहुप गूँध माला बनाव । आदि पुरुष कूँ जा चढ़ाव ॥८॥
तो सहजो बाई चरनदास । तेरे मन की पुरवैं सकल आस ॥९॥

दया बाई

[संक्षिप्त जीवन-चरित्र के लिये देखो संतबानी संग्रह, भाग १ पृष्ठ १६७]

गुरु बिन ज्ञान ध्यान नहिँ होवै। गुरु बिन चौरासी मग जोवै ॥
गुरु बिन राम भक्ति नहिँ जागै। गुरु बिन असुभ कर्म नहिँ त्यागै ॥
गुरु ही दीन-दयाल गुसाईँ। गुरु सरनै जो कोई जाईं ॥
पलटैँ करैँ काग सूँ हंसा। मन को मेटत हैँ सब संसा ॥
गुरु हैँ सब देवन के देवा। गुरु को कोउ न जानत भेवा ॥
करुना-सागर कृपा-निधाना। गुरु हैँ ब्रह्म रूप भगवाना ॥
दै उपदेस करैँ भ्रम नासा। "दया" देत सुख-सागर बासा ॥
गुरु को अहि निसि[1] ध्यान जो करिये।
बिधिवत सेवा में अनुसरिये[2] ॥
तन मन सूँ अज्ञा में रहिये। गुरु अज्ञा बिन कछु न करिये ॥

गरीबदास जी

[संक्षिप्त जीवन-चरित्र के लिए देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ १८१]

॥ चितावनी ॥

(१)

सुनिये संत सुजान, गरब नहिँ करना रे ॥ टेक ॥
चार दिनाँ की चिहर[3] बनी है, आखिर तो कूँ मरना रे ॥१॥
तू जाने मेरि ऐसी निभेगी, हर दम लेखा भरना रे ॥२॥
खाय ले पी ले बिलस ले हंसा, जोरि जोरि नहिँ धरना रे ॥३॥
दास गरीब सकल में साहिब, नहीँ किसी सूँ अड़ना रे ॥४॥

॥ अरिल ॥

(२)

मरदाने मरि जाहिँ मनी पर मार है।
ऐसा महल अनूप पलक में छार है ॥ १ ॥

---

(१) दिन रात। (२) लगिये। (३) चिड़ियों के किलोल की जगह जो साँझ पड़े बसेरे को उड़ जाती हैं।

अदली राज अदल बादसाही, पाँच पचीसो चोरा ।
चीन्हो सबद सिंध घर कीजै, होना गारतगोरा[१] ॥ २ ॥
त्रिकुटी महल में आसन मारो, जह न चलै जम जोरा ।
दास गरीब भक्ति को कीजो, हुआ जात है भोरा[२] ॥ ३ ॥

(२)

राम सुमिर राम सुमिर, राम सुमिर लै रे ।
जम और जहान जीत, तीन लोक जै रे ॥ १ ॥
इन्द्री अदालत चोर, पकड़ो मन अहि[३] रे ।
अनहद टंकोर घोर, सुनै क्यूँ न बहिरे ॥ २ ॥
सुरत निरत नाद बिंद, मन पवना गहि रे ।
उनमुनी अलेल[४] रूप, निराकार लहि रे ॥ ३ ॥
धनुष[५] ध्यान मार बान[६], दुरजन से फहिरे[७] ।
देखत के सीत कोट, भरम बुर्ज ढहि रे ॥ ४ ॥
साचे से प्रीत कीन, झूठा मन महि[८] रे ।
कहत है गरीबदास, कुटिल बचन सहि रे ॥ ५ ॥

(३)

मग[९] पूछत हैं परतीत नहीं, नादी[१०] बादी[११] झगड़ा ठानैं ।
मुकता जुगता नहि राह लहै, नहिं साध असाध कूँ जानत है ॥१॥
देवल जाहीं मसजिद माहीं, साहिब का सिरजा भानत हैं[१२] ।
पंडित काजी डोबी[१३] बाजी, नहिं नीर खीर[१४] कूँ छानत हैं ॥२॥
चेतन का गल काटत हैं, घर पत्थर पाहन मानत हैं ।
कहै दास गरीब निरास चले, धिरकार जनम नर लानत है ॥३॥

॥ जाति पाँति भेद खंडन ॥

कैसे हिंदू तुरक कहाया । सबही एकै द्वारे आया ॥ १ ॥
कैसे बाम्हन कैसे सूद्रं । एकै हाड़ चाम तन गूदं ॥ २ ॥

---

(१) नाश । (२) सवेरा । (३) साँप । (४) बेपरवाह । (५) कमान । (६) तीर । (७) दूर रहो, बचो । (८) मथ लो अर्थात छाछ की तरह अलग करदो । (९) राह । (१०) भेष । (११) पंडित । (१२) मालिक के पैदा किये हुए जीवों की हिंसा करते हैं । (१३) डुबा दी । (१४) दूध ।

एकै बिंद एक भग द्वारा। एकै सब घट बोलनहारा ॥ ३ ॥
कौम छतीस एकही जाती। ब्रह्मबीज सब की उतपाती ॥ ४ ॥
एकै कुल एकै परिवारा। ब्रह्मबीज का सकल पसारा ॥ ५ ॥
ऊँच नीच इस बिधि है लोई। कर्म कुकर्म कहावै दोई ॥ ६ ॥
गरीबदास जिन नाम पिछाना। ऊँच नीच पद ये परमाना ॥ ७ ॥

गुलाल साहिब

[संक्षिप्त जीवन-चरित्र के लिये देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ २०८]

॥ नाम ॥

नाम रस अमरा है भाई, कोउ साध संगति तेँ पाई ॥ टेक ॥
बिन घोटे बिन छाने पीवे, कौड़ी दाम न लाई।
रंग रँगीले चढ़त रसीले, कबहीँ उतरि न जाई ॥ १ ॥
छके छकाये पगे पगाये, झूमि झूमि रस लाई।
बिमल बिमल बानी गुन बोलै, अनुभव अमल चलाई ॥ २ ॥
जहँ जहँ जावै थिर नहिँ आवै, खोल[1] अमल लै धाई।
जल पत्थल पूजन करि मानत, फोकट गाढ़ बनाई[2] ॥ ३ ॥
गुरु परताप कृपा तेँ पावै, घट भरि प्याल[3] फिराई।
कहै गुलाल मगन है बैठे, भगिहै हमरि बलाई ॥ ४ ॥

॥ अनहद शब्द ॥

रे मन नामहिँ सुमिरन करै।
अजपा जाप हृदय लै लावो, पाँच पचीसो तीन मरै ॥ १ ॥
अष्ट कमल मेँ जीव बसतु है, द्वादस मेँ गुरु दरस करै।
सोरह ऊपर बानि उठतु है, दुइ दल अमी झरै ॥ २ ॥
गंगा जमुना मिली सरसुती, पदुम झलक तहँ करै।
पच्छिम दिसा है गगन मँडल मेँ, काल बनी सोँ लरै ॥ ३ ॥

---

(१) थोथा। (२) सेंत में गढ़ के बनाया है। (३) प्याला।

जम जीतो है परम पद पायो, जोती जगमग बरै ।
कह गुलाल सोइ पूरन साहिब, हर दम मुक्ति फरै ॥ ४ ॥

॥ प्रेम ॥

(१)

अबिगत जागल हो सजनी । खोजत खोजत सतगुरु पावल,
ताहि चरनवाँ चितवा लागल हो सजनी ॥ टेक ॥
साँझि समय उठि दीपक बारल,
कटल करमवा मनुवाँ पागल[१] हो सजनी ॥ १ ॥
चललि उबटि बाट छुटलि सकल घाट,
गरजि गगनवा अनहद बाजल हो सजनी ॥ २ ॥
गइली अनँदपुर भइली अगम सूर,
जितली मैदनवाँ नेजवा गाड़ल हो सजनी ॥ ३ ॥
कहै गुलाल हम प्रभुजी पावल,
फरल लिलरवा पपवा भागल हो सजनी ॥ ४ ॥

(२)

जो पै कोई प्रेम को गाहक होई ।
त्याग करै जो मन की कामना, सीस दान दै सोई ॥ १ ॥
और अमल की दर जो छोड़ै, आपु अपन गति जोई ।
हर दम हाजिर प्रेम पियाला, पुलकि पुलकि रस लेई ॥ २ ॥
जीव पीव महँ पीव जीव महँ, बानी बोलत सोई ।
सोई सभन महँ हम सबहन महँ, बूझत बिरला कोई ॥ ३ ॥
वा की गति कहा कोइ जानै, जो जिय साचा होई ।
कह गुलाल वे नाम समाने, मत भूले नर लोई ॥ ४ ॥

(३)

आनँद बरखत बुन्द सुहावन ।
उमँगि उमँगि सतगुर बर राजित, समय सुहावन भावन ॥१॥

(१) पगा या लीन हुआ ।

चहूँ ओर घनघोर घटा आई, सुन्न भवन मन-भावन।
तिलक तत्त बेंदी पर झलकत, जगमग जोति जगावन ॥२॥
गुरु के चरन मन मगन भयो जब, बिमल बिमल गुन गावन।
कहै गुलाल प्रभु कृपा जाहि पर, हर दम भादों सावन ॥३॥

(४)

होली

सतगुरु सँग होरी खेलो, अनहद तूर बजाई ॥ टेक ॥
काया नगर में होरी खेलो, प्रेम कै परल धमारी।
पाँच पचीस मिलि चाचरि गावहिँ, प्रभुजी की बलिहारी ॥१॥
सहज कै फाग पर्यो निस बासर, भरि छूटै पिचुकारी।
नाद बिंदहीँ गाँठि पर्यो जब, परलि परस्पर मारी ॥२॥
तारी दै दै भाँवरि नावहिँ, एक तेँ एक पियारी।
तत्त अबीर उड़ावत कर धरि, काहू कोउ न सँभारी ॥३॥
अब खेलो मन महा मगन है, तन मन सर्बस वारी।
कह गुलाल हम प्रभु सँग खेलल, पूजलि आस हमारी ॥४॥

॥ विनय ॥

(१)

दीना-नाथ अनाथ यह, कछु पार न पावै।
बरनौँ कवनी जुक्ति से, कछु उक्ति न आवै ॥ १ ॥
यह मन चंचल चोर है, निस बासर धावै।
काम क्रोध में मिलि रह्यो, ईहै मन भावै ॥ २ ॥
करुनामय किरपा करहु, चरनन चित लावै।
सतसंगति सुख पाइ कै, निसु बासर गावै ॥ ३ ॥
अबकि बार यह अंध पर, कछु दाया कीजे।
जन गुलाल बिनती करै, अपनो करि लीजे ॥ ४ ॥

(२)

प्रभुजी बरषा प्रेम निहारो।
ऊठत बैठत छिन नहिँ बीतत, याही रीति तुम्हारो ॥

पाँच पचीस बजावत गावत, निर्त चारु[1] छबि दीन्हा ।
उघटत तननन भ्रितां भ्रितां, कोउ ताथेइ थेइ तत कीन्हा ॥ ३ ॥
बाजत ताल तरँग बहु, मानो जंत्री जंत्र कर लीन्हा ।
सुनत सुनत जिव थकित भयो, मानो ह्वै गयो सबद अधीना ॥ ४ ॥
गावत मधुर चढ़ाय उतारत, रुनझुन रुनझुन धीना[2] ।
कटि किंकिनि पगु नूपुर की छबि, सुरति निरति लौलीना ॥ ५ ॥
आदि सबद ओंकार उठतु है, अटुट रहत सब दीना[3] ।
लागी लगन निरंतर प्रभु सों, भीखा जल मन मीना ॥ ६ ॥

॥ चितावनी ॥

मन मानि ले तू कहल हमार ।
फिरि फिरि मानुष जनम न पैहौ, चौरासी औतार ॥ टेक ॥
पागा माया बिषै मिठाई, काम क्रोध रत सोई ।
सुर नर मुनि गन गंधर्ब कछु कछु, चाखत है सब कोई ॥ १ ॥
त्रिबिधि ताप को फंद परो है, सूझत वार न पारा ।
काल कराल बसै निकटहिं, धरि मारि नर्क महँ डारा ॥ २ ॥
संत साध मिलि हाट लगायो, सौदा नाम भराई ।
जो जा को अधिकार होत तिन, तैसी बस्तु मोलाई ॥ ३ ॥
सब भक्तन धन धाम सकल लै, सरनागति में डारा ।
समझो बूझि बिचारि उतारो, अपने सिर को भारा ॥ ४ ॥
जोग जुक्ति कै परचा पैहौ, सुरति निरति ठहराई ।
अर्ध उर्ध के मध्य निरंतर, अनहद धुनि घहराई ॥ ५ ॥
सुरति मगन परमारथ जागै, करम होहि जरि छारा[4] ।
ज्ञान ध्यान कै खानि खुलै जब, तब छूटै संसारा ॥ ६ ॥
भक्ति भाव कल्पद्रुम छाया, ताप रहै नहिं देई ।
चारि पदारथ अज्ञाकारी, पर[5] सों कबहिं न लेई ॥ ७ ॥

---

(१) सुन्दर । (२) ताधिन ताधिन । (३) सब दिन यानी सदा एक रस रहता है । (४) राख । (५) पराया या दूसरा ।

राम नाम फल मिलो जाहि को, प्रेम सुधा रस धारा ।
पुलकि पुलकि मन पान करो तुम, निस दिन बारम्बारा ॥ ८ ॥
गुरु परताप कहाँ लगि बरनौं, उक्ती एक न आई ।
रसना जो कहिँ होयँ सहसदस, उपमा गाइ न जाई ॥ ९ ॥
आतम राम अखंडित आपै, निज साहिब बिस्तारा ।
भीखा सहज समाधी लावो, औसर इहै तुम्हारा ॥१०॥

॥ प्रेम ॥

(१)

प्रीति की यह रीति बखानौं ॥ टेक ॥
कितनौ दुख सुख परै देँह पर, चरन कमल कर ध्यानौं ॥ १ ॥
हो चेतन्य बिचारि तजो भ्रम, खाँड़ धूर जनि सानौं ॥ २ ॥
जैसे चात्रिक स्वाँति बुन्द बिनु, प्रान समरपन ठानौं ॥ ३ ॥
भीखा जेहि तन राम भजन नहिँ, काल रूप तेहि जानौं ॥ ४ ॥

(२)

कहा कोउ प्रेम बिसाहन[1] जाय ।
महँग बड़ा गथ[2] काम न आवै, सिर के मोल बिकाय ॥ टेक ॥
तन मन धन पहिले अरपन करि, जग के सुख न सुहाय ।
तजि आपा आपुहिँ ह्वै जीवै, निज अनन्य[3] सुखदाय ॥१॥
यह केवल साधन को मत है, ज्यौं गूंगे गुड़ खाय ।
जानहि भले कहै सो का सौं, दिल की दिलहिँ रहाय ॥२॥
बिनु पग नाच नैन बिनु देखै, बिन कर ताल बजाय ।
बिन सरवन धुनि सुनै बिविधि बिधि, बिन रसना गुन गाय ॥३॥
निर्गुन मेँ गुन क्योंकर कहियत, व्यापकता समुदाय[4] ।
जहँ नाहीँ तहँ सब कछु दिखियत, अँधरन की कठिनाय ॥४॥
अजपा जाप अकथ को कथनो, अलख लखन किन पाय ।
भीखा अविगत की गति न्यारी, मन बुधि चित न समाय ॥५॥

(१) मोल लेना, खरीद करना । (२) असबाब । (३) बेमिलौनी, केवल । (४) सब जगह ।

हो करता करमन के दाता, आगे बुधि आवत नहिँ होसो ॥४॥
तुम अंतरजामी सब जानो, भीखा कहा करहि अपसोसो ॥५॥

(४)

मोहिँ राखो जी अपनी सरन ॥ टेक ॥
अपरम्पार पार नहिँ तेरो, काह कहौं का करन ॥१॥
मन क्रम बचन आस इक तेरी, हाउ जनम या मरन ॥२॥
अबिरल भक्ति के कारन तुम पर, है बाम्हन देउँ धरन[1] ॥३॥
जन भीखा अभिलाख इही, नहिँ चहौं मुक्ति गति तरन ॥४॥

॥ अद्वैत ॥

कवित्त

खुद एक भुम्मि[2] आहि, बासन[3] अनेक ताहि,
रचना बिचित्र रंग, गढ़ेउ कुम्हार है ।
नाम एक सोन आस,[4] गहना है द्वैत भास,
कहूँ खरा खोँट रूप, हेमहिँ[5] अधार है ॥
फेन बुदबुद अरु लहरि तरंग बहु,
एक जल जानि लीजे, मीठा कहूँ खार है ।
आतमा त्यों एक जाते[6] भीखा कहे याहि मते,
ठग सरकार के, बटोही[7] सरकार के ॥

॥ साध महिमा ॥

भजन तें उत्तम नाम फकीर ।
छिमा सील संतोष सरल चित, दरदवंद पर-पीर ॥टेक॥
कोमल गदगद गिरा[8] सुहावन, प्रेम सुधा रस छीर ।
अनहद नाद सदा फल पायो, भोग खाँड़ घृत खीर ॥१॥
ब्रह्म प्रकास को भेष बनायो, नाम मेखला चीर ।
चमकत नूर जहूर जगामग, ढाँके सकल सरीर ॥२॥

---

(१) धरना । (२) मिट्टी । (३) बरतन । (४) अस । (५) सोना । (६) एक ही जाति की । (७) मुसाफ़िर । (८) बानी ।

रहनि अचल इस्थिर कर आसन, ज्ञान बुद्धि मति धीर ।
देखत आतम राम उघारे, ज्यों दरपन मधि हीर ॥३॥
मोह नदी भ्रम भँवर कठिन है, पाप पुन्य दोउ तीर ।
हरि जन सहजे उतरि गये ज्यों, सूखे ताल को झीर[1] ॥४॥
जग परपंच करम बहतो है, जैसे पवन रु नीर ।
गुरु गम सबद समुद्रहिँ जावे, परत भयो जल थीर ॥५॥
केलि करत जिय लहरि पिया सँग, मति बड़ गहिर गँभीर ।
ताहि काहि पटतरो[2] दीजिये, जिन तन मन दियो सीर[3] ॥६॥
मन मतंग मतवार बड़ो है, सब ऊपर बल बीर ।
भीखा हीन महीन ताहि को, छीन भयो जस जीर ॥७॥

॥ उपदेश ॥

(१)

मन तूँ राम से लौ लाव ।
त्यागि के परपंच माया, सकल जगहिँ नचाव ॥१॥
साच की तू चाल गहि ले, झूठ कपट बहाव ।
रहनि- सोँ लौ लीन ह्वै, गुरु-ज्ञान ध्यान जगाव ॥२॥
जोग की यह सहज जुक्ति, बिचार कै ठहराव ।
प्रेम प्रीति सोँ लागि के घट, सहजहीं सुख पाव ॥३॥
दृष्टि तेँ अादृष्ट देखो, सुरति निरति बसाव ।
आतमा निर्धार निर्भौ, बानि[4] अनुभव गाव ॥४॥
अचल इस्थिर ब्रह्म सेवो, भाव चित अरुझाव ।
भीखा फिर नहिँ कबहुँ पैहो, बहुरि ऐसो दाव ॥५॥

॥ रेख़ता ॥

(२)

करो बिचार निर्धार[5] अवराधिये[6] , सहज समाधि मन लाव भाई ।

---

(१) छिछला पानी । (२) उपमा । (३) सिर अर्थात् अहं । (४) बाणी । (५) निरंतर । (६) आराधना करो ।

रोवत घर की नारि, केस लट खोले हो साधो ।
आज मँदिर भयो सून, कहाँ गये राजा हो साधो ॥५॥
आलहि[1] बाँस कटाइनि, डँड़िया फँदाइनि हो साधो ।
पाँच पचीस बराती, लेइ सब धाये हो साधो ॥६॥
तीरे दिहिन उतारि, सकल नहवावैं हो साधो ।
करि सोरहो सिंगार, सकल जुरि आये हो साधो ॥७॥
आलहि चँदन कटाइनि, घेरि घर छाइनि हो साधो ।
लोग कुटुम परिवार, दिहिनि पहुड़ाई[2] हो साधो ॥८॥
लाइ दिहिनि मुख आग, काठ करि भारा हो साधो ।
पुत्र लिये कर बाँस सीस गहि मारा हो साधो ॥९॥
चहुँ दिसि पवन झकोरै, तरवर डोलै हो साधो ।
सूझत वार न पार, कौन दिसि जाना हो साधो ॥१०॥
इहवाँ नहिं कोइ आपन, जे से मैं बोलौं हो साधो ।
जस पुरइनि[3] कर पात, अकेला मैं डोलौं हो साधो ॥११॥
बिष बोयों संसार अमृत, कस पावौं हो साधो ।
पुरब जनम करि पाप, दोस केहि लावौं हो साधो ॥१२॥
भौसागर की नदिया, पार कस जावौं हो साधो ।
गुरु बैठे मुख मोड़ि, मैं केहि गोहरावौं हो साधो ॥१३॥
जेहि बैरिन कर मूल, ताहि हित मान्यौं हो साधो ।
पलटुदास गुरु ज्ञान सुनत, अलगान्यौं हो साधो ॥१४॥

(२)

कुंडलिया

खेलु सिताबी फाग तू बीती जात बहार ॥
बीती जात बहार सम्बत लगने पर आया ।
लीजै डफ्फ बजाय सुभग मानुष तन पाया ॥

(१) जल्दी । (२) लेटाया । (३) कोई ।

खेलो घूँघट खोलि लाज फागुन में नाहीं ।
जे कोउ करिहैं लाज काज ना सुपनेहुँ माँहीं ॥
प्रेम की माट भराय सुरति की करु पिचुकारी ।
ज्ञान कबीर बनाय नाम की दीजे गारी ॥
पलटू रहना है नहीं सुपना यह संसार ।
खेलु सिताबी फाग तू बीती जात बहार ॥

(३)

कुंडलिया

क्या सोवै तू बावरी चाला जात बसंत ॥
चाला जात बसंत कंत ना घर में आये ।
धृग जीवन है तोर कंत बिन दिवस गँवाये ॥
गर्ब गुमानी नारि फिरै जोबन को माती ।
खसम रहा है रूठि नहीं तू पठवै पाती ॥
लगै न तेरो चित्त कंत को नाहिं मनावै ।
का पर करै सिँगार फूल की सेज बिछावै ॥
पलटू ऋतु भरि खेलि ले फिर पछितैहै अंत ।
क्या सोवै तू बावरी चाला जात बसंत ॥

(४)

कुंडलिया

माया की चक्की चलै पीसि गया संसार ॥
पीसि गया संसार बचै न लाख बचावै ।
दोऊ पट के बीच कोऊ ना साबित जावै ॥
काम क्रोध मद लोभ मद चक्की के पीसनहारे ।
तिरगुन डारैं झीक[1] पकरि कै सबै निकारे ॥
दुरमति बड़ी सयानि सानि कै रोटी पोवैं ।
करम तवा में धारि सैंकि कै साबित होवैं ॥

(१) मुट्ठी मुट्ठी अनाज जो चक्की में डालते हैं।

तृस्ना बड़ी छिनारि जाइ उन सब घर घाला ।
काल बड़ा बरियार किया उन एक निवाला ॥
पलटू हरि के भजन बिनु कोऊ न उतरै पार ।
माया की चक्की चलै पीसि गया संसार ॥

॥ ध्यान ॥

कुंडलिया

कमठ दृष्टि जो लावई सो ध्यानी परमान ॥
सो ध्यानी परमान सुरत से अंडा सेवै ।
आपु रहै जल माहिँ सूखे में अंडा देवै ॥
जस पनिहारी कलस भरे मारग में आवै ।
कर छोड़े मुख बचन चित्त कलसा में लावै ॥
फनि मनि धरै उतारि आप चरने को जावै ।
वह गाफिल ना पड़ै सुरत मनि माहिँ रहावै ॥
पलटू सब कारज करै सुरत रहै अलगान ।
कमठ दृष्टि जो लावई सो ध्यानी परमान ॥

॥ बिरह ॥

जेकरे अँगने नौरँगिया, सो कैसे सोवै हो ।
लहर लहर बहु होय, सबद सुनि रोवै हो ॥१॥
जेकर पिय परदेस, नीँद नहिँ आवै हो ।
चौँकि चौँकि उठै जागि, सेज नहिँ भावै हो ॥२॥
रैन दिवस मारै बान, पपीहा बोलै हो ।
पिय पिय लावै सोर, सवति होइ डोलै हो ॥३॥
बिरहिनि रहै अकेल, सो कैसे कै जीवै हो ।
जेकरे अमी कै चाह, जहर कस पीवै हो ॥४॥
अभरन देहु बहाय, बसन धै फारौ हो ।
पिय बिनु कौन सिँगार, सीस दै मारौ हो ॥५॥

धोबी भट्ठी पर धरी कुन्दीगर मुँगरी मारी।
दरजी टुक टुक[1] फारि जोरि के किया तयारी॥
पर स्वारथ के कारने दुख सहै पलटूदास।
संत सासना सहत हैं जैसे सहत कपास॥

(४)
झूलना

सील सनेह सीतल बचन, यही संतन की रीति है जी।
सुनत बात के जुड़ाय जावै, सब से करते वे प्रति हैं जी॥
चितवनि चलनि मुसकानि नवनि, नहिं राग द्वेष हार जीत है जी।
पलटू छिमा संतोष सरल, तिन को गावै स्रुति नीति है जी॥

(५)
झूलना

पूरब पुन्न भये परगट, सतसंगति के बीच परी।
आनँद भये जब संत मिले, वही सुभ दिन वहि सुभ घरी॥
दरसन करत त्रय ताप मिटै, बिन कौड़ी दाम मैं जाय तरी।
पलटू आवागवन छूटा, जब चरनन की रज सीस धरी॥

॥ दुष्ट ॥
कुंडलिया

पर दुख कारन दुख सहै सन असंत है एक॥
सन असंत है एक काट के जल में सारै।
कूँचै खैंचै खाल उपर से मुँगरा मारै॥
तेकर बटि के भाँजि भाँजि कै बरतै रसरा।
नर की बाँधै मुसुक बाँधते गउ औ बछरा॥
भमरजाल फिर हाथ बभावै जलचर[3] जाई।
खग मृग जीवा जंतु तेही में बहुत बभाई॥
जिव दे जिव संतावते पलटू उनकी टेक।
पर दुख कारन दुख सहै सन असंत है एक॥

---

(१) टुकड़े टुकड़े। (२) एक लिपि में "नेत" है। (३) जल के जीव।

सन्तन किया बिचार ज्ञान का दीपक लीन्हा ।
देवता तैंतिस कोटि नजर में सब को चीन्हा ॥
सब का खंडन किहा खोजि के तीन निकारा ।
तीनों में दुइ सही मुक्ति का एकै द्वारा ॥
हरि को लिहा निकारि बहुर तिन मंत्र बिचारा ।
हरि हैं गुन के बीच सन्त हैं गुन से न्यारा ॥
पलटू प्रथमै सन्त जन दूजे हैं करतार ।
बड़ा होय तेहि पूजिये सन्तन किया बिचार ॥

(२)

कुंडलिया

सीतल चन्दन चन्द्रमा तैसे सीतल सन्त ॥
तैसे सीतल सन्त जगत की ताप बुझावैं ।
जो कोइ आवै जरत मधुर मुख बचन सुनावैं ॥
धीरज सील सुभाव छिमा ना जात बखानी ।
कोमल अति मृदु बैन बज्र को करते पानी ॥
रहन चलन मुसकान ज्ञान को सुगँधि लगावैं ।
तीन ताप मिटि जाय संत के दरसन पावैं ॥
पलटू ज्वाला उदर की रहै न मिटै तुरन्त ।
सीतल चन्दन चन्द्रमा तैसे सीतल सन्त ॥

(३)

कुंडलिया

संत सासना सहत हैं जैसे सहत कपास ॥
जैसे सहत कपास नाय चरखा में ओटै ।
रूई धरि जब तुमै हाथ से दोउ निभोटै[१] ॥
रोम रोम अलगाय पकरि के धुनिया धूनी ।
पिउनी[२] नँह[३] दै काति सूत ले जुलहा बूनी ॥

(१) नोचै । (२) रुई की मोटी बत्ती जिस से सूत निकालते हैं । (३) नाखून ।

धोबी भट्ठी पर धरी कुन्दीगर मुँगरी मारी ।
दरजी टुक टुक[1] फारि जोरि के किया तयारी ॥
पर स्वारथ के कारने दुख सहै पलटूदास ।
संत सासना सहत हैं जैसे सहत कपास ॥

(४)

झूलना

सील सनेह सीतल बचन, यही संतन की रीति है जी ।
सुनत बात के जुड़ाय जावै, सब से करते वे प्रीति हैं जी ॥
चितवनि चलनि मुसकानि नवनि, नहिं राग द्वेष हार जीत है जी ।
पलटू छिमा संतोष सरल, तिन को गावै स्रुति नीति[2] है जी ॥

(५)

झूलना

पूरब पुन्न भये परगट, सतसंगति के बीच परी ।
आनँद भये जब संत मिले, वही सुभ दिन वहि सुभ घरी ॥
दरसन करत त्रय ताप मिटे, बिन कौड़ी दाम मैं जाय तरी ।
पलटू आवागवन छूटा, जब चरनन की रज सीस धरी ॥

॥ दुष्ट ॥

कुंडलिया

पर दुख कारन दुख सहै सन असंत है एक ॥
सन असंत है एक काट के जल में सारै ।
कूँचै खैंचै खाल उपर से मुँगरा मारै ॥
लेकर बटि के भाँजि भाँजि कै बरतै रसरा ।
नर को बाँधै मुसुक बाँधते गउ औ बछरा ॥
अमरजाल फिर होय बझावै जलचर[3] जाई ।
खग मृग जीवा जंतु तेही में बहुत बझाई ॥
जिव दे जिव संतावते पलटू उनकी टेक ।
पर दुख कारन दुख सहै सन असंत है एक ॥

---

(१) टुकड़े टुकड़े । (२) एक लिपि में "नेत" है । (३) जल के जीव ।

॥ ज्ञान ॥

(१)

कुंडलिया

पिय को खोजन मैं चली आपुइ गई हिराय ॥
आपुइ गई हिराय कवन अब कहै सँदेसा ।
जेकर पिय में ध्यान भई वह पिय के भेसा ॥
आगि माहिं जो परै सोऊ अगनी है जावै
भृंगी कीट को भैंटि आपु सम लेइ बनावै
सरिता बहि के गई सिंधु में रही स
सिव सक्ती के मिले नहीं फिर सक्ती
पलटू दिवाल कहकहा[1] मत कोउ झाँ
पिय को खोजन मैं चली आपुइ

(२)

कुंडलिया

टेढ़ सोझ मुँह आपना ऐना
ऐना टेढ़ा नाहिं टेढ़ को
जो कोइ देखै सोझ ताहि क
जा को कछु नहिं भेद भावना
जा को जैसी प्रीति मुरत सो
दुर्जन के दुर्बुद्धि पाप से
सज्जन के है सुमति सुमति से
पलटू ऐना संत हैं सब देखै
टेढ़ सोझ मुँह आपना ऐना

(१) एक दीवार कहानी की जिसका होना चीन
...ढ़ कर दूसरी ओर झाँकने से परिस्तान दीख पड़ता है औ
मारे देखनेवाला वेइख़्तियार होकर, उधर कूद कर गाय

(३)

अरिल

पहिले हो बैराग भक्ति तब कीजिये ।
सतसंगति के जोग ज्ञान तब लीजिये ॥
ऐसे उपजै ज्ञान भक्ति को पाइ कै ।
अरे हाँ पलटू उपरै लीजै मारि ठीक ठहराइ कै ॥

(४)

कहिबे से क्या भया भाई, जब जान आपु से होइ ॥ टेक ॥
अललपच्छ को चेटुका,[1] वा को कौन करै उपदेस ।
उलटि मिलै परिवार में, वा से कौन कहै संदेस ॥१॥
ज्यों सिसु[1] होत मराल[2] के, वा को कौन सिखावै ज्ञान ।
नीर कँहै अलगाइ कै, वह छीर करतु है पान ॥२॥
सिंह कै बच्चा गिरि पर्‌यो, वह खेलत तुरत सिकार ।
वा को कौन सिखावई, वो हस्ती डारत मार ॥३॥
संत को कौन सिखावता, उन्ह अनुभव भा परकास ।
सिखई बुधि केहि काम की, जो हृदय न पलटूदास ॥४॥

॥ सतसंग ॥

(१)

कुंडलिया

पारस के परसंग से लोहा महँग बिकान ॥
लोहा महँग बिकान छुए से कीमत निकरी ।
चंदन के परसंग चँदन भई बन की लकरी ॥
जैसे तिल का तेल फूल सँग महँग बिकाई ।
सतसंगति में पड़ा संत भा सदन कसाई ॥
गंग में है सुभगंग मिली जो नारा सोती ।
सीप बीच जो पड़ै बूंद सो होवै मोती ॥

---

(१) बच्चा । (२) हंस ।

पलटू हरि के नाम से गनिका चढ़ी बिमान ।
पारस के परसंग से लोहा महँग बिकान ॥

(२)

रेखता

बिना सतसंग ना कथा हरिनाम की, बिना हरिनाम ना मोह भागै ।
मोह भागे बिना मुक्ति ना मिलेगा, मुक्ति बिनु नाहिँ अनुराग लागै॥
बिना अनुराग के भक्ति ना होयगी, भक्ति बिनु प्रेम उर नाहिँ जागै।
प्रेम बिनु राम ना राम बिनु संत ना, पलटू सतसंग बरदान माँगै।

॥ गुप्त ॥

कुंडलिया

जिन जिन पाया बस्तु को तिन तिन चले छिपाय ॥
तिन तिन चले छिपाय प्रगट में होय हरकत ।
भीड़ भाड़ से डेरै भीड़ में नहीं बरकत ॥
धनी भया जब आप मिली हीरा की खानी ।
ठग है सब संसार जुगत से चलै अपानी ॥
जो हैं रहते गुप्त सदा वह मुक्ति में रहते ।
उन पर आवै खेद प्रगट जो सब से कहते ॥
पलटू कहिये उसी से जो तन मन दै लै जाय ।
जिन जिन पाया बस्तु को तिन तिन चले छिपाय ॥

॥ बैराग ॥

(१)

अरिल

आठ पहर की मार बिना तरवार की ।
चूक सो नाहिँ ठाँव लड़ाई धार की ॥
उस ही से यह बनै सिपाही लाग का ।
अरे हाँ पलटू पड़ै दाग पर दाग पंथ बैराग का ॥

(२)

काम क्रोध बसि किहा नीँद औ भूख को ।
लोभ मोह बसि किहा दुक्ख औ सुक्ख को ॥

पल में कोस हजार जाय यह डोलता ।
अरे हाँ पलटू वह ना लागा हाथ जौन यह बोलता ॥

॥ उपदेश ॥

( )

पड़ा रहु संत के द्वारे, बनत बनत बनि जाय ॥ टेक ॥
तन मन धन सब अरपन करिके, धक्के धनी के खाय ॥१॥
स्वान बिर्त आवै साइ पावै[1], रहै चरन लौ लाय ॥२॥
मुरदा होय टरै नहिँ टारे, लाख कहा समुझाय ॥३॥
पलटूदास काम बनि जावै, इतने पर ठहराय ॥४॥

(२)

कुंडलिया

काजर दिये से का भया ताकन को ढब नाहिँ ॥
ताकन को ढब नाहिँ ताकन की गति न्यारी ।
इकटक लेवै ताकि सोई है पिय की प्यारी ॥
ताकै नैन मिरारि नहीँ चित अतै टारै ।
बिन ताके केहि काम लाख कोउ नैन सँवारै ॥
ताके में है फेर फेर काजर में नाहीँ ।
भंगि[2] मिली जो नाहिँ नफा क्या जोग के माहीँ ॥
पलटू सनकारत[3] रहा पिय को खिन खिन माहिँ ।
काजर दिये से का भया ताकन को ढब नाहिँ ॥

(३)

रेखता

नाचना नाचु तो खोलि घूँघट कँहै खोलि के नाचु संसार देखै ।
खसम रिझाव तो ओट का छोड़ दे, भर्म संसार को दूरि फेकै ॥
लाज किसकी करै खसम से काम है, नाचु भरि पेट फिर कौन छेकै ।
दास पलटू कहै तुहाँ सोहागिनी, साव सुख सेज तू खसम एकै ॥

(४)

सुंदरी पिया की पिया को खोजती, भई बेहोस तू पिय के कै ।

(१) खाय । (२) युक्ति । (३) इशारा करना । (४) को ।

रुबाई

ख़ाक आप को समझना, इकसीर[1] है तो यह है।
इख़लाक़[2] सब से रखना, तसख़ीर[3] है तो यह है॥
सब काम अपना करना, तक़दीर[4] के हवाले।
नज़दीक आरिफ़ों[5] के, तदबीर है तो यह है॥

रुबाई

वीराँ किया जब आप को बस्ती नज़र पड़ी।
जब आप नेस्त हम हुए हस्ती नज़र पड़ी॥
देखा तो ख़ाकसारी ही आली मुक़ाम है।
ज्यों ज्यों बलंद हम हुए पस्ती नज़र पड़ी॥

॥ इति ॥

---

(१) रसायन। (२) आदर सत्कार। (३) वशी करन। (४) मौज। (५) साधों

सवैया

आईं सबै ब्रज गोप लली, ठिठकीं ह्वै गली जमुना जल न्हाने ।१।
औचक आय मिले रसखान, बजावत बेनु सुनावत तानें ।२।
हाहा करी सिसकीं सिगरी, मति मैन[1] हरी हियरा हुलसाने ।३।
घूम दिमाने[2] अमाने चकोर से, ओर से दोऊ चलैं दृग बानें ।४।

सवैया

सुनिये सब की कहिये न कछू, रहिये इमि या भव बागर[3] में ।१।
करिये ब्रत नेम सचाई लिये, जिन तें तरिये भव सागर में ।२।
मिलिये सब सों दुरभाव बिना, रहिये, सतसंग उजागर में ।३।
रसखान गुबिंदहि यों भजिये, जिमि नागरि[4] को चित गागर में ।४।

सवैया

वह साँवरो नन्द को छैल अली, अब तो अति ही इतरान लगो ।१।
नित घाटन बाटन कुंजन में, मोहिं देखत ही नियरान लगो ।२।
रस खान बखान कहा कहिये, तकि सैनन सों मुसकान लगो ।३।
तिरछी बरछी सम मारत है, दृग बान कमान सुकान लगो ।४।

शब्द

कहँ गये प्यारे, झलक दिखा के ॥ टेक ॥
हिरदे बसी माधुरी मूरत, कस जाव प्रीतम खूँट छुड़ा के ।१।
बिरह अगिन ने तन मन फूँका, हिया जुड़ावो अमी चुवा के ।२।
भई बावरी इत उत डोलौं, तन मन की सब सुद्धि भुला के ।३।
मैं तो हौं पतितन को नायक, कैसे बचिहौ पन[5] बिसरा के ।४।
अब तो कर में लीन्ह सिंघौरा, तुम से मिलिहौं दें हजरा के ।५।
बाँह गहे की लाज तुम्हीं को, का पै जावों तुम्हरो कहा के ।६।
प्रेम प्रसाद देहु निज स्वामी, मोको दासनदास बना के ।७।

---

(१) कामदेव। (२) दीवाने। (३) झाड़ी। (४) चतुर स्त्री। (५) पतित-पावन होने का प्रण।

अपना धरम छोड़ि औरों के, ओछे धरम पकरता है।
अजब नसे की गफलत आई, साहिब को नहिं डरता है ॥२॥
जिनके खातिर जान माल से, बहि बहि के तू मरता है।
वे क्या तेरे काम पड़ेंगे, उनका लहना भरता है ॥३॥
देव धरम चाहे सो करि ले, आवागमन न टरता है।
प्यारे केवल राम नाम से, तेरा मतलब सरता है ॥४॥

—:*:—

फुटकर

कवित्त

काहू के अधार सेवा बनिज व्योपार को है,
काहू के अधार थित बित खेत गाम को ॥
काहू के अधार तन सार भ्रात बन्धुन को,
काहू के अधार प्रिय सार निज नाम को ॥
काहू के अधार विद्या बुद्धि अरु बल को है,
काहू के अधार हाथी घोड़ा धन धाम को ॥
मैं तो निराधार मेरी हरिहि करेंगे सार,
मेरे तो अधार एक जानो हरि नाम को ॥

कवित्त

कब को पुकारत हौं सुनौ नहीं एको बात,
एहो नंदलाल तुम कैसे प्रतिपाल हो ॥
कहे हैं दयाल सो तो दया हू न देखियत,
मेरी मति ऐसी ओछी नीके पसुपाल हो ॥
धर्‌यो हो नृसिंह रूप तबहीं प्रह्लाद काज,
अब तो न लाज कछू गोधन में ग्वाल हो ॥
डार्‌यो तेल कान में कि बस्यो जाय कानन में,
सेस सेज लेटि कि धौं पौंढ़े जा पताल हो ॥

---

(१) धन

सवैया

आईं सबै ब्रज गोप लली, ठिठकीं ह्वै गली जमुना जल न्हाने ।१।
औचक आय मिले रसखान, बजावत वेनु सुनावत तानें ।२।
हाहा करी सिसकीं सिगरी, मति मैन[1] हरी हियरा हुलसाने ।३।
घूम दिमाने[2] अमाने चकोर से, ओर से दोऊ चलैं दृग बानें ।४।

सवैया

सुनिये सब की कहिये न कछू, रहिये इमि या भव बागर[3] में ।१।
करिये ब्रत नेम सचाई लिये, जिन तें तरिये भव सागर में ।२।
मिलिये सब सों दुरभाव बिना, रहिये, सतसंग उजागर में ।३।
रसखान गुबिंदहि यों भजिये, जिमि नागरि[4] को चित गागर में ।४।

सवैया

वह साँवरो नन्द को छैल अली, अब तो अति ही इतरान लगो ।१।
नित घाटन बाटन कुंजन में, मोहिं देखत ही नियरान लगो ।२।
रस खान बखान कहा कहिये, तकि सैनन सों मुसकान लगो ।३।
तिरछी बरछी सम मारत है, दृग बान कमान सुकान लगो ।४।

शब्द

कहँ गये प्यारे, झलक दिखा के ॥ टेक ॥
हिरदे बसी माधुरी मूरत, कस जाव प्रीतम खूँट छुड़ा के ।१।
बिरह अगिन ने तन मन फूँका, हिया जुड़ावो अमी चुवा के ।२।
भई बावरी इत उत डोलौं, तन मन की सब सुद्धि भुला के ।३।
मैं तो हौं पतितन को नायक, कैसे बचिहौ पन[5] बिसरा के ।४।
अब तो कर में लीन्ह सिंधौरा, तुम से मिलिहौं दैं हजरा के ।५।
बाँह गहे की लाज तुम्हीं को, का पै जावों तुम्हरो कहा के ।६।
प्रेम प्रसाद देहु निज स्वामी, मोको दासनदास बना के ।७।

---

(१) कामदेव । (२) दीवाने । (३) झाड़ी । (४) चतुर स्त्री । (५) पतित-पावन होने का प्रण ।

रुबाई

ख़ाक आप को समझना, इकसीर[1] है तो यह है।
इखलाक़[2] सब से रखना, तसख़ीर[3] है तो यह है॥
सब काम अपना करना, तक़दीर[4] के हवाले।
नज़दीक आरिफ़ों[5] के, तदबीर है तो यह है॥

रुबाई

वीराँ किया जब आप को बस्ती नज़र पड़ी।
जब आप नेस्त हम हुए हस्ती नज़र पड़ी॥
देखा तो ख़ाकसारी ही आली मुक़ाम है।
ज्यों ज्यों बलंद हम हुए पस्ती नज़र पड़ी॥

॥ इति ॥